CC-0: Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5596

क

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मन्थन ग्रन्थमाला पुष्प–६

5596

# मन्थन

## जलांजलि

गणपति शंकर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकाशक

कला भारती
५५ मिर्जा गालिब स्ट्रीट
कलकत्ता-७०००१६

प्राप्तिस्थान

प्राच्य इतिहास मन्दिर
'रामकृपा' पानी की टंकी के पास
भावनगर ( गुजरात )

© सर्वाधिकार लेखकाधीन

प्रथम संस्करण १९८३

State Museum Library Lucknow

5596

मूल्य : पचास रुपये

आवरण सज्जा : श्याम कुमार, वाराणसी

मुद्रक

शिवम् प्रिंटर्स
सी. २७/२७३, इण्डियन प्रेस कालोनी,
मलदहिया, वाराणसी–२२१००२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# अर्पण

जिसने जन्म तो दिया लेकिन सेवा लेने के पहले ही
मुझे अनाथ बनाकर अपनी याद में हमेशा के लिये
तड़पता छोड़ गई उस मां **रुक्मिणी** के चरणों में

— गणपति शंकर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अब यह अंतिम पुष्प, 'जलांजलि' पूर्णाहूति इस मंथन की
मित्रनिष्ठ उस परम वीर की. कुन्ती के आंचल धन की,
जिसके कारण माँ की भूखी ममता, हरदम मूक रही
जीवन उद्यान में सुनाई दी, कोयल की कूक नहीं।

मात शारदे ! मधुर मधुरतम, यह भी शेष प्रवाह बहा
वीणा वादिनी ! यों तो तेरे, हैं मुझपर उपकार महा,
तेरी ही अनुकंपा पाकर, पुष्प मनोहर पांच खिलें
यह भी वितरे गंध चहुंदिशि, पूर्ण सफलता इसे मिलें।

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## मन्थन पर विद्वानों की शुभाशंसा

आप से मिलकर अपूर्व आनंद का अनुभव हुआ। वार्तालाप करके तो नूतन दिशाओं में सोचने और चिंतन करने के लिये वाध्य होना पड़ा।

'मन्थन' में जिस अतीत की परतें आपने उभारी हैं उनमें विस्मयकारी तथ्यों और मौलिक प्रश्नों की उद्‌भावना हुई है। अवश्य वे अपने को स्थापित करने में सफल होंगे।

इस ऐतिहासिक पुरुषार्थ के लिये आपको शतशः बधाई है। परमेश्वर आपको सुखद शतवर्ष प्रदान करें।

**केशवचन्द्र मिश्र**

दिनांक २४-११-८२

मदनमोहन मालवीय शिक्षा संस्थान
भाटपाररानी, देवरिया ( उ०प्र० )

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
हिन्दी जगत् हिन्दीतर भाषी विद्वान कवि गणपति शंकर के प्रति निश्चय ही आभारी होगा कि ऐसा अमूल्य ग्रंथ हिन्दी को प्राप्त हुआ है।

**रामेश्वरदयाल दुबे**
लखनऊ

•

श्री गणपति शंकर शास्त्री मेरे परम मित्रों में से हैं। मैं उन्हें दीर्घकाल से निकट से देखता आ रहा हूँ। हृदय से मैं उनके बहुत ही निकट हूँ फिर भी उनका आजकल का यह निखरा हुआ साहित्यिक, संशोधनात्मक एवं आविष्कारक स्वरूप देखकर मैं आश्चर्य चकित हो जाता हूँ। साथ ही उनकी मित्रता पर मुझे बड़ा गर्व अनुभव होता है।

........यह काव्य मैंने जितना ही पढ़ा उतना ही उसमें उलझता गया। काव्य प्रवाह में बरबस बहता गया। मार्मिक मनोविश्लेषण, मूर्त व्यक्ति-चित्रण, इतिहास का सूक्ष्म अनुसंधान आदि की अपूर्वता इस रचना की महनीय विशेषता है। धारावाही रचना पढ़ते-पढ़ते प्रभावित ही नहीं मन भाव विभोर हो जाता है।........

ऐसी विशेषतापूर्ण रचना को विश्व विद्यालय के अभ्यासक्रम में स्थान देकर उसका समुचित गौरव करना कई दृष्टियों से उपयुक्त होगा। एक अध्यापक के नाते यह कहने को मन करता है।

**सुदाम जी सावरकर**
भूतपूर्व तंत्री, श्रीगुरुदेव मासिक
कलाकुंज, अमरावती ( महाराष्ट्र )

•

इतिहास की प्रसुप्त परंपरा को अध्ययन द्वारा जागृत कर आपने जिस काव्य का सर्जन किया है वह प्रशंसनीय है। यह खंडकाव्य एक हिन्दीतर भाषी कवि के अध्ययन, चिंतन तथा सूक्ष्म विवेचन का उत्तम उदाहरण है। इसका उद्देश्य समाज रचना, नारी संवेदना तथा जन चिंतना की दुर्बलता पर प्रकाश डालना है।

**रामअवधेश त्रिपाठी**
अहमदाबाद

•

'मन्थन' काव्य केवल कवि की कृति ही नहीं अपितु प्राच्य इतिहास के संशोधक की कृति है।

**नर्मद भाई ज० त्रिवेदी**
आचार्य आर्टस् एण्ड कॉमर्स कालेज, भावनगर

•

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवि का स्वभाव कल्पना में विचरण का होता लेकिन ग्रन्थ में कवि ने जो तथ्य प्रस्तुत किये हैं वे कोरी कल्पना के नहीं अपितु प्रमाण युक्त है।

**मानसिंह बारड**
तंत्री, 'पथिक' अहमदाबाद

•

अपनी मातृभाषा में रचना करना अधिक सुगम होता है किन्तु गणपति शंकर ने राष्ट्रभाषा हिन्दी को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाकर यह प्रमाणित कर दिया है कि हिन्दी में काव्य रचना करना किसी भी भारतीय के लिये कोई कठिन कार्य नहीं है। जिस प्रकार की प्रमाणित सरस शैली में यह काव्य लिखा गया है उसे पढ़कर यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि यह किसी अहिन्दी भाषीकी रचना है........।

परिशिष्ट विभाग पढ़ने से स्पष्ट लक्षित किया जा सकता है कि कविवर गणपति शंकर केवल कवि ही नहीं वरन एक सकल अनुसंधाता भी है। उनकी शोध दृष्टि अनेकों प्रसंगों के मूल संदर्भ खोज पाने में सफल हुई है।

**डा० विजयेन्द्र स्नातक**
अध्यक्ष-हिन्दी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

•

प्रासादिक काव्य रचना के साथ ही इतना गहरा ऐतिहासिक अध्ययन हिन्दी साहित्य की सृष्टि में बहुत ही दुर्लभ है।

**सिद्धेश्वर चित्राव शास्त्री**
भारतीय चरित्र कोश मंडल, पूना

•

श्री गणपति शंकर जी ने इस तरह केवल इतिहास की ही नहीं, काव्य की ही नहीं, राष्ट्रभाषा की भी सेवा की है।........काव्य की पंक्तियां पाठक की भावनाओं को झंकृत करती हैं तो ये विचारपूर्ण टिप्पणियां उसके ज्ञान के क्षितिजों को विकसित करती हैं।

**जयेन्द्र भाई त्रिवेदी**
आचार्य, न० च० गांधी महिला कालेज
भावनगर (गुजरात)

•

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस काव्य का महत्व का अंग है उसके पीछे की टिप्पणियाँ, उनमें कवि संशोधक के नाते बहुत ही अच्छी तरह खिला है।

**मूलशंकर मो० भट्ट**

भावनगर

•

कवि संशोधनकार है। संशोधक न्यायाधीश होता है वह वकील नहीं होता। उसका कार्य न्यायाधीश का कार्य होता है। 'मंथन' में कवि ने यह कार्य किया है।

**के० का० शास्त्री**

भो० जे० विद्यालय, शोध विभाग, अहमदाबाद

•

'मन्थन' काव्य कल्पना की सृष्टि में विचरकर नहीं, भावनाओं के प्रवाह में बहकर नहीं अपितु वैदिक काल से लेकर महाभारत काल तक की बनती बिगड़ती सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों का सूक्ष्म अध्ययन कर न्याय की तुलापर तौलने का प्रयत्न करता है।

**अमृत वसंत पंड्या**

भू० पू० प्रमुख पुरातत्व विभाग, वल्लभ भाई पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभविद्यानगर,

•

भारत के सारस्वत वर्ग के लिये यह प्रयास अमूल्य धन बन रहेगा।

**मणीलाल वोरा**

पुरातन संशोधन मंडल, पोरबन्दर ( सौराष्ट्र )

•

इसमें पाठ्य पुस्तक बनने की सभी क्षमतायें मौजूद है। युनिवर्सिटियां इस दिशा में क्यों न विचारे ?

**हरभाई त्रिवेदी**

भू० पू० कुलनायक, सौराष्ट्र युनिवर्सिटी, भावनगर

•

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कथा वस्तु के प्रयोग की परंपरा के परिप्रेक्ष्य में जब हम 'मन्थन' का अनुशीलन करते हैं तो उसमें पहली बार भारत की सांस्कृतिक विचार धारा के यथार्थ एवं मौलिक विश्लेषण से अभिभूत हुये बिना नहीं रह पाते।........ महाभारतकालीन सामाजिक इतिहास तथा समाज दर्शन की एक महत्वपूर्ण समस्या को केन्द्र में रखकर लेखक ने दृष्टा और स्पष्टा के दायित्व-निर्वाह द्वारा उसका समाधान खोज निकाला है।'.......विश्लेषण की नई उपलब्धियों को पहले पहल प्रकाशमें लाया है।'.......समग्रतया मूल्यांकन करके यह कहा जा सकता है कि शोध दृष्टि से संवलित काव्य निश्चय ही उच्चकोटि का हो सकता है। **'कविवर प्रसाद की कामायनी'** उसका ज्वलंत उदाहरण है। किन्तु उसके लिये दोनों पक्षों की सुदृढ पृष्ठभूमि आवश्यक है। मन्थन के कवि में यह शोध दृष्टि है और, उससे भी अधिक कुछ नया देने का उत्साह है.......।' प्राचीन कथानक को नई शोध दृष्टि से अत्यंत परिश्रम एवं मनोयोगपूर्वक मंथन करके ही गणपति शंकर जी ने 'मंथन' नाम को सार्थक किया है।

**डा० मदनगोपाल गुप्त**
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय,
बड़ौदा (गुजरात)

•

इस ग्रंथमाला के प्रकाशन से राष्ट्रभाषा में इतिहास विषयक उच्च स्तरीय काव्य-पाठ्य पुस्तकों के अभाव की पूर्ति होगी।

विश्व विद्यालयों के कुलपतियों, महाविद्यालयों के आचार्यों, एवं सार्वजनिक पुस्तकालयों के अध्यक्षों से अपेक्षा की जाती है कि वे ऐसी अमूल्य कृतिका हार्दिक स्वागत करेंगे।

**दुर्गाशंकर मिश्र**
प्रधानाचार्य, जी० एन० एल० डी० रस्तोगी इंटर कालेज, लखनऊ

•

'मन्थन' में कवि की अनुठी भाव व्यंजना, गहन अनुभूति एवं ऐतिहासिक यथार्थता की अनुपम देन है। पात्रों की वाणी वस्तुतः कवि के अन्तर्मन की सापेक्ष अभिव्यक्ति है।

**शिवशंकर मिश्र**
भू० पू० सचिव उत्तर प्रदेश हिन्दी समिति
तथा
परामर्शदाता उत्तर प्रदेश शासन, लखनऊ.

•

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुनने वाले सुना करेंगे, महायुद्ध की अमर कथा
इतिवृत्तों में अंकित होगी, कर्ण मृत्यु की अमर व्यथा
किन्तु अंत में यही बनेगा, गुण विजयी के गायेंगे
तथा कर्ण से पात्र उपेक्षित, निश्चय ही रह जायेंगे।

●

अस्तु, कर्ण के माध्यम से यह, मंथन प्रस्तुत किया गया
पूर्व सृजित गाथाओं से यह, होगा निश्चित ज्ञात नया,
वैदिक इतिहास के साथ है, महाकाव्यकाल भी लिया
शुद्धि मांगता भारत का इतिहास, नम्र संकेत किया।

●

सुविज्ञ पाठक, विद्वज्जन, जो इतिहासों के चिंतक है
पुराविदों का भी मत–निर्णय, साधिकार आवश्यक है,
जगद्‌गुरु कहलाया भारत, जब विधान है सत्य यही
तो दे हम भी अब जगती को, परिचय उसका सही, सही।

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# शुद्धिपत्र

## काव्य विभाग

| काव्य | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| २० | २ | नगर जलाये | नगर जलाये[४६] |
| ४१ | १ | लभार्थ | लाभार्थ |
| ५५ | ३ | हस्तिनगर में | हस्तिनगर मे[८९] |
| ८३ | ४ | पाकर भी | पाकर भी[१०१] |
| ८६ | २ | अधिकार | अधिकार[१०२] |
| ९२ | ४ | हत्यारा | हत्यारा[१०३] |
| १२१ | ४ | लेगा | लेना |
| १२९ | १ | औ' औ | औ' |
| १३१ | ४ | रथ | रथ[१२०] |
| १३२ | ४ | दुविधा | दुविधा[१२१] |
| १५६ | २ | आर्द्र बनो ओ | आर्द्र बनो औ' |

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

| | | | |
|---|---|---|---|
| १७४ | २ | कहाँमे वालों में भी | कहाँवे वालों से भी |
| १७५ | ४ | तारे थे | तारे थें |
| २४१ | ३ | इतिहा यही | इतिहास यही |
| २४९ | १ | लचारी | लाचारी |
| २५६ | ४ | अनधिकार[२२] | अनधिकार[२३] |
| २६७ | ४ | प्रमुख | प्रमुख[३०] |
| २७० | ३ | मातृत्व | मातृत्व[३४] |
| २८७ | ४ | कहाँ | कहीं |
| २९७ | २ | मूर्छा | मूर्च्छा |
| २९९ | २ | ,, | ,, |
| ३१७ | ४ | निजका दोष | निजका दोष न |
| ३४३ | १ | नेक | नेक[५०] |
| ३५४ | १ | क्रोघ किया | क्रोध किया[५७] |
| ३६२ | २ | छोड़ दिया | छोड़ दिया[५८] |
| ३८२ | १ | अंधेरा | अंधेरा[६४] |
| ३८३ | ४ | कभी भी | कभी थी |
| ३८९ | १ | भारतीय | भारतीय[६५] |
| ३९१ | ३ | सूर्यगंश | सूर्यगंश[६८] |
| ३९२ | १ | आर्यों का | आर्यों का[६९] |
| ,, | ३ | देवप्रजा | देवप्रजा[७०] |
| ३९३ | १ | ऐल आगमन | ऐल आगमन[७१] |
| ३९४ | १ | भरतों का | भरतों का[७२] |
| ३९८ | ३ | युगांत | युगांत[७६] |
| ४०० | १ | साथी | साथी[७७] |
| ४१५ | १ | चंडी | चंडी[७९] |
| ४५४ | ३ | शीतल | शितल |
| ,, | ४ | नवोनता | नवीनता |
| ४६३ | ३ | खुशा | खुशी |
| ४६६ | ४ | होनी ही पाती | होनी हो पाती |
| ४७० | १ | कहना | कहता |
| ४७४ | ४ | आंगिकार | अंगिकार |
| ४८० | १ | त्रेतासे | त्रेतासे[१०२] |
| ४९८ | ४ | न हो | नहीं |

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

| | | | |
|---|---|---|---|
| ५०५ | २ | युद्ध न न हो | युद्ध न हो |
| ५२३ | २ | मिलन | मिलन[१२०] |
| ५३२ | १ | अपनाने | अपनाते |
| ५३४ | १ | नहीं | कहीं |
| ५३८ | ४ | बोले | बोलो |
| ५४३ | १ | आनेवाला | जानेवाला |
| ५५२ | १ | हृदय[१६२] | हृदय |
| ५५२ | ३ | हट[१६३] | हट |
| ५५३ | १ | घान | घात |
| ५६१ | ४ | वृद्धवस्था | वृद्धावस्था |
| ५८२ | ३ | भला | भान |
| ५८३ | २ | नारी | नारी[१३६] |
| ७०० | ४ | द्रोण को | द्रोण की |
| ७०१ | १ | वृषकेतु | वृषकेतु[१७२] |
| ७०२ | ३ | प्रायश्चित्[१७२] | प्रायश्चित् |

## टिप्पणी विभाग

| पृष्ठ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| १७५ | १६ | भारतों | भरतों |
| १७६ | १६ | सिंधुको | सिंधु में |
| १८० | ५ | इनका अभिव्यक्त | इनकी अभिव्यक्ति |
| १८२ | ५ | पांचवे | पांचवीं |
| १८५ | १३ | मन्वहार | मन्वंतर |
| १९१ | ३ | भारत में आये | भारत में आर्य आये |
| १९२ | १६ | शासक | शासक थे |
| १९९ | १७ | कुछक | कुछ |
| २१३ | ९ | अपल | अपत्य |
| २१७ | १६ | उल्लेभ | उल्लेख |
| २२९ | १९ | अत्रेय | आत्रेय |
| २३१ | २ | तिलोत्तमा | मेनका |
| २३१ | १४ | अन्नाश्रिता | अनाश्रिता |
| २४३ | १७ | चारित्र | चरित्र |

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## आशीर्वाद

( १ )

गणपति शंकर लिखित कर्ण पै लेखा, देखा
अति उत्तम है सूक्त, भाव, है परम अनोखा,
मन्थन माला, सहज सृजन यह है अति सुन्दर
गद्य पद्य है भावयुक्त, शुभ, परम मनोहर,
गुर्जर भूमि निवास, न हिन्दी भाषा, कवि की रही
हिन्दी में लिखि ग्रन्थ शुभ, राष्ट्र-भाष महिमा कहीं

( २ )

नायक कर्ण मानि के चले श्री गणपति शंकर
लिखि के मन्थन सरस बने तिनिके तै किंकर,
नूतन दृष्टि बनाई, जगत् के सम्मुख लाये
भाषा भाषी अन्य, राष्ट्र भाषा अपनाये,
श्लाधनीय अति कार्यं है, निजको प्रेष लगाइके
करें प्रकाशित ग्रंथ बहु, हिन्दी में छपवाइ के.

( ३ )

ईश कृपा अति करे, सु लेखक ये बनि जावें
हिन्दी कविता करें, सु कवि हिन्दी कहलावें,
भरें भव्य शुभ कोश, राष्ट्र भाषा को भारी
ग्रंथ प्रकाशित करे, राष्ट्र हित अति हितकारी,
प्रभु के पद पदुमनि करूँ, यही प्राथंना प्रेम तै
गणपति शंकर नित लिखे, ग्रंथ अलौकिक नेम तैं.

संकीर्तन भवन,
झूंसी ( प्रयागराज )
कार्तिक श्रुत १३ संवत २०३७

प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# शुभ कामना

कवि श्री गणपति शकर गुजरात निवासी, अहिन्दी भाषी होने पर भी हिन्दी के प्रति समर्पित हैं। उनकी अनेक कृतियों ने हिन्दी के भंडार को समृद्ध किया है और करने जा रही है।

प्रस्तुत काव्य 'जलांजलि' में उन्होंने महाभारत के अप्रतिम योद्धा कर्ण की कथा को काव्य रूप में प्रस्तुत किया है। वे संवेदनशील तथा भावप्रवण कवि होने के साथ-साथ चिंतनशील शोधकर्ता भी है। अतः एक ओर उन्होंने कर्ण के जीवन के मार्मिक स्थलों को पहचाना है तो दूसरी ओर अपनी महत्वपूर्ण टिप्पणियों द्वारा महाभारत तथा भारतीय संस्कृति के अनेक पक्षों पर आलोक डाला है।

इस प्रकार पाठक काव्य के प्रवाह में बहने के साथ-साथ चिंतन के तटों पर भी ठहरता चलता है। मेरे विचार में जलांजलि अपने उस लक्ष्य को पूर्ण करती है जो कवि का उद्देश्य भी है और पाठक की उपलब्धि भी।

वैदिक काल के दाशराज्ञ युद्ध के उपरान्त महाभारत के युद्ध ने भारतीय संस्कृति को नया तथा महत्वपूर्ण मोड़ दिया है। दोनों युद्धों में भारत की शक्ति क्षीण हुई। परंतु कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न उभरे हैं जिनका समाधान अनेक आगामी युगों की मनीषा करती रही है।

कृति, कवि तथा चिंतक के लिये मेरी शुभ कामनायें प्रेषित है। विश्वास है वे हिन्दी की अथक सेवा करते रहेंगे। शुभास्ते पन्थाना सन्तु।

१७ सी. अशोक नगर
इलाहाबाद

**महादेवी वर्मा**

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कह किसका सिंदूर घुल गया, कौन बनी विधवा बतला ?
कौन अनाथ बना है, किसपर, कह अर्जुन का बाण चला ?
किस कुल की वह कह शोभा था ? हाल सुनाओ उस जन का
किसका जाया ? यदि जीवित है, रूप कहो उस आनन का.

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# मेरी बात

मंथन ग्रंथमाला का यह अंतिम भाग, जलांजलि है। कर्ण-कुन्ती भाग २ खंड १ में 'कुन्ती मनोमंथन' है। वह कहती है कैसे लेने जाऊं मैं अपने लाल को ? गई भी तो क्या बोलूं ? कहाँ से कैसे आरम्भ करूँ ? कैसे अपनी पहचान दूँ उसे ? विचित्र अवस्था है–खींचातानी है मनकी। जीवन में पहली बार बेटे से मिलने जा रही है। आयु सौ के लगभग है उसकी। बेटा भी ८२-८४ के लगभग है। माता अपराधी है। बेटा अन्यायदग्ध है। पू० काका साहब कालेलकर कहते हैं–"कृष्ण कर्ण में तो आप ने सफलता प्राप्त की। इसमें किसी से किसी प्रचारका विरोध संभव नहीं है। इसका अभिनन्दन, मूल्यांकन कदाचित यथा समय विद्वान करेंगे। लेकिन कर्ण कुन्ती में आपकी कसौटी है। मां के स्नेह का धागा नाजुक है। पुत्र अन्यायदग्ध है।" फलतः कर्ण कुन्ती का तीन खंडों में विभाजन हुआ।

प्रथम भाग कर्ण कृष्ण–मिलन है। यह मिलन तत्कालीन सर्वोच्च एक कूटनीतिज्ञ पुरुष से हुआ है। दूसरा मिलन जन्मदात्री से और तीसरा मिलन पितामह भीष्म से। इस प्रकार मन्थन माला में तीन मिलन है। इनमें दो मिलन ऐसे हैं जिसमें मिलने वाले कर्ण के पास आये हैं। एक ने कहा ',तूं कुन्ती का जाया है, पांडवों का भाई है, मेरी बुआका बेटा है।" दूसरे ने कहा "तूं मेरा जाया है, समस्त पांडवों में ज्येष्ठ है।" तीसरा मिलन कर्ण ने स्वयं जाकर भीष्म से किया है। युद्ध करने के लिए आज्ञा और आशीर्वाद मांगा है। तीनों मिलन तीन रंग के हैं–तीन ढंग के हैं। यह तीनों प्रसंग कर्ण के जीवन में नहीं आते तो कह नहीं सकते कि इस पात्रकी स्थिति सौतीवाले अर्थात् वर्तमान महाभारत के संस्करण में क्या होती। सच तो यही है कि व्यास के जय' संस्करण का कर्ण वैशंपायन के भारत और सौती के महाभारत से निश्चय ही अलग है, तेजस्वी है। आजके इस विशाल काव्य ग्रंथ से उसको पहचानना अब उतना कठिन नहीं रह गया है, ऐसा मुझे लगता है।

कर्ण कुन्ती का जाया है यह संदेशा लेकर प्रथम भाग में कृष्ण आये हैं, महाभारत युद्ध के सात दिन पूर्व। "तूं कुन्ती का जाया है, मेरा प्रपोत्र है" ऐसा पितामह कह गये, युद्ध के दसवे दिन श्याम को। अर्थात् तीसरे भाग में जब कर्ण उन्हें मिलने गया था तब। अतिरिक्त कर्ण कुन्ती का जाया है। यह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
रहस्य और दो व्यक्ति जानते हैं ऐसा भीष्म कर्ण से कहते हैं। वे हैं व्यास और नारद। लेकिन किसको इस रहस्य का कब पता चला इस विषय में महाभारत मौन है। यह चारों महानुभाव तत्कालीन समाज में असाधारण माने जाते हैं। एक कृष्ण को छोड़कर यह रहस्य और कोई प्रकट न कर सका इस बातका आश्चर्य होता है। काश, नारद जैसे व्यक्ति ने यह पहल की होती अथवा इन चारों की एक समिति बन गई होती और सब मिलकर कर्ण के सम्मुख यह रहस्य खोलते, अथवा कृष्ण के साथ इसकी चर्चा करते, तो अवश्य ही यह इतिहास कुछ भिन्न ही लिखा जाता। लेकिन यह सब न हो सका।। अस्तु।

कर्ण पर अब तक बहुत कुछ लिखा गया हैं। मराठी, गुजराती, बंगालो, हिन्दी, संस्कृत आदि भाषाओं में। लेकिन अधिक प्रमाण में उपन्यास की शैली ही प्रकट हुई हैं। कुछेक काव्य भी है, एकाद नाटक भी। लेकिन सबका उद्देश्य मनोरंजन का ही रहा है। इस पात्र की महानता को सबने स्वीकार किया है। पू० काका साहब कालेलकर ने पहले पत्र में ही अपना मत व्यक्त किया है कि–"सारे महाभारत में कर्ण पात्र जितना महत्व का है उतना ही उपेक्षित भी इस पात्र में मेरी रूचि है। मैंने माना था कि आप की पुस्तक में कर्ण और कृष्ण का सम्बन्ध, दोनों की बातचीत, और कर्ण के प्रति हुआ अन्याय इतनी ही बातों का उल्लेख आयेगा। अब देखता हूँ आप समस्त संस्कृति छेडने निकल पडे हैं। उसका अभिनन्दन एवं मूल्यांकन यथा समय विद्वान करेंगे।" तात्पर्य, इस प्रकार सर्व प्रथम पू० काका साहब ने मेरे उत्साह को और बढ़ाया। इसके बाद तो अनेक विद्वानों के पत्र आयें! सुलतानपुर रूद्रनगर से स्वयं अंगराज के लेखक श्री आनंद कुमार त्रिपाठी लिखते हैं–"मंथन को पढ़ने में थोड़ा समय लगेगा और परिश्रम भी करना पडेगा क्योंकि वह गंभीर रचना प्रतीत होती है।" महाराजा सयजीराव विश्व विद्यालय बडौदा से, श्री डा० मदन गोपाल गुप्त लिखते हैं–"कथा वस्तु के प्रयोग की परंपरा के परिप्रेक्ष्य में जब हम मंथन का अनुशीलन करते हैं तो उसमें पहली बार भारत की सांस्कृतिक विचार धारा के यथार्थं एवं मौलिक विश्लेषण से अभिभूत हुये बिना नहीं रह पाते। महाभारत कालीन सामाजिक इतिहास तथा समाज दर्शन की महत्व पूर्ण समस्या को केन्द्र में रखकर लेखक ने दृष्टा और स्रष्टा के दायित्व निर्वाह द्वारा उसका समाधान खोज निकाला है। विश्लेषण की नई उपलब्धियों को पहले पहल प्रकाश में लाया है। समग्रतया मूल्यांकन करके यह कहा जा सकता है कि शोध दृष्टि से संवलित काव्य निश्चय हो उच्च कोटि का हो सकता है। कविवर प्रसाद की 'कायायनी' उसका ज्वलंत उदाहरण है, किन्तु उसके लिए दोनों पक्षों की सुदृढ़ पृष्भूमि आवश्यक है। मंथन के कवि में यह शोध दृष्टि है और उससे भी अधिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ नया देने का उत्साह है'' बम्बई से बम्बई विश्वविद्यालय के हिन्दी अध्यक्ष डॉ० श्री सी० एल० प्रभात कहते हैं—अंधःकार युग की लुप्त कड़ियों को सामने रखने का यह जो प्रयास है वह अपने में ही महत्वपूर्ण है। लेखक ने जो तथ्य और तर्क प्रस्तुत किये हैं वे संशोधकों को नये सिरेसे विचार करने के लिए मजबूर करते हैं। ''दिल्ली से दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी के अध्यक्ष श्री डा० विजयेन्द्र स्नातक लिखते हैं-''लेखक की शोध दृष्टि अनेकों प्रसंगों के मूल संदर्भ खोज पाने में सफल हुयी है।''

अन्त में जिला शिक्षणाधिकारी श्री छेलभाई ओझा के मंतव्य को देकर इन अभिव्यक्तियों को पूर्ण करना चाहता हूँ। आप कहते हैं—''इस पुस्तक में शास्त्री जी ने किये कितने ही विधान और निर्णयों द्वारा चिंतन की मानो नई दिशा खुली। कर्ण पात्र तो निमित्त मात्र ही लगता है। उनको यह एक बहाना मिल गया ऐसा लगता है। कर्ण को माध्यम बनाकर वे प्राचीन इतिहास के पृष्ठ स्पष्ट करने की इच्छा रखते हैं। यों तो इतिहास पर बहुतोंने लिखा है—लिख रहे हैं, किन्तु शास्त्रीजी की शैली उन सबसे भिन्न ही सिद्ध होती है।''

इस प्रकार 'मंथन' के प्रथम भाग कर्ण-कृष्ण के प्रकाशन के पश्चात् अनेक विद्वानोंने मेरे उत्साह को बढ़ाने का ही काम किया। मूल में हमारा ध्यान सबसे पहले कर्ण-कृष्ण के मिलन पर ही गया था। प्रेरणा मिली गुजरात विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलनायक श्री भाई उमाशंकर जोशी की 'प्राचीना' द्वारा। आपने 'प्राचीना' में श्रीकृष्ण के मुख में जो शब्द दिये हैं वे उचित नहीं लगे, फलतः मंथन की प्रेरणा मिली। कलम चल पड़ी। उसे रोकना असंभव जान पड़ा। कर्ण की वकालात तो नहीं ही करनी थी। वस्तुस्थिति तक पहुँचना था। इसलिये ऋग्वेद ही नहीं ऋग्वेद-पूर्व काल में प्रवेश करना पड़ा।

इस भाग में कर्ण को जलांजलि दिये जा रही है। महाभारत का युद्ध समाप्त हो चुका है। सर्वत्र स्मशान की शांति छाई हुई है। युधिष्ठिर शोक में डूबा हुआ है। श्रीकृष्ण भी न जाने किस विचार में खोये हुये हैं। किसी के चेहरे पर प्रसन्नता नहीं है। अट्ठारह अक्षौहिणी सेना में बचे केवल पांच पांडव, श्रीकृष्ण और कौरव पक्ष के कृपाचार्य, कृतवर्मा, संजय आदि। अब शेष कार्य है युद्ध में काम आये बंधु बांधवों को जलांजलि देने का। अतः युयुत्सु को लेकर मृत कौरवों को जलांजलि देने के लिये वह गंगातटपर आया है। कार्य संपन्न हो चुका है। युधिष्ठिर ने शांति की सांस ली है। यह मानकर, कि वीर गति को प्राप्त हुये सभी वीरों को अब सद्गति मिली। और जैसे ही जलके बाहर आया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कि जननी कुंती विचित्र सी दशा में, विक्षिप्त सी मुद्रा में आकर खडी हो गई। यह कह कर, कि "एक जलांजलि अभी शेष है।" वह भी दे दो।

महाभारतकार कहता है यह जलांजलि कुंती के कहने पर युधिष्ठिर देता है। लेकिन यह कुछ अटपटा सा लगा। यहां ज़लांजलि या श्रद्धांजलि का अर्थ स्पष्ट हो जाना चाहिये। हमें लगता हैं श्रद्धांजलि का अधिकार तो सब को होता है लेकिन जलांजलि का अधिकार जिसका खून का रिश्ता है ऐसे ही व्यक्ति का होना चाहिए। मृतक व्यक्ति के श्राद्ध का भी तो यही विधान है? अतः श्राद्ध का अधिकार मृत व्यक्ति के बेटे की ओर जाता है। मृतक को कोई संतान न हो तो वह अधिकार किसी निकटस्थ की ओर जाता है। अतः मातृ पक्ष से युधिष्ठिर पराया नहीं है। अंत में माता की ओर से दोनों में कुंतो का ही रक्त है। तब युधिष्ठिर द्वारा इस जलांजलि का देना अनुचित तो नहीं ही माना जायेगा। लेकिन यहां प्रश्न यह आकर खड़ा हो जाता है कि अंत मे ऐसा क्यों किया महाभारतकार ने? जब कि कर्ण का एक बेटा जीवित है। उसके द्वारा कर्ण का श्राद्ध क्यों नहीं कराया गया? जब साहस करके 'एक जलांजलि' कहने के लिये कुंती आई ही है तो उससे यह क्यों नहीं कहलवाया कि 'वृषकेतु को ले आओ। उसके द्वारा कर्ण की श्राद्ध विधि सम्पन्न करो और तुम सब मिलकर अपने ज्येष्ठ भ्राता को श्रद्धांजलि दो।

कर्ण का एक पुत्र महाभारत युद्ध से बचा हुआ है। युवा है, विवाहित है। भद्रावती नाम की उसकी पत्नी है। सुशील है।[1] जब कि कर्ण मेरा ज्येष्ठ भ्राता है यह जानकर युधिष्ठिर की अवस्था और भी विचित्र सी हो जाती है। वृषकेतु पांडवों के पास आ जाता है। भीम और अर्जुन उसपर स्नेह की बौछार करते हैं। उसको अपने माता की अमानत मानते हैं।[2] कर्ण हत्यापर तीनों भाई पश्चाताप दग्ध हैं। युधिष्ठिर व्यास से कहते है[3]—"मेरे मन के शांति का उपाय बतलाईये। पूर्वजों द्वारा उपार्जित जो यह राज्य मुझे प्राप्त हुआ है वह भीष्म, कर्ण तथा द्रोणाचार्य से रहित होने के कारण मेरे द्वारा हर्ष प्रद नहीं हो रहा है। कर्ण का रमणीय भवन, जो नित्य वेद ध्वनि से गुंजता रहता था, वह मेरे द्वारा शून्य कर दिया गया। इस समय वह दान कर्म से वञ्चित हो गया है। जिस भवन में याचकों के दल प्रतिदिन सम्मान और धन पाकर हर्ष के

---

१. जैमिनीयाश्वमेध पर्वणि अ० १४/७५

२. जैमिनीयाश्वमेध पर्वणि अ० १४/६५

३. जैमिनीयाश्वमेध पर्वणि अ. १/५॥-७॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
आंसू बहाते थे वहीं अब वे शोकजन्य अश्रु गिरा रहे हैं। जिसमें पितामह भीष्म तथा कर्ण नहीं है मेरे लिये ऐसे राज्य को धिःक्कार है। क्यों कि उन दोनों से हीन होने के कारण वह राज्य नेत्रों से हीन शरीर की भाँति शोभाहीन प्रतीत हो रहा है।''

इस प्रकार शोक करते हुये युधिष्ठिर कहता है—''भीमसेन इस राज्य का शासन करे। मैं तीर्थों, दानों और शुभ कर्मों का सेवन और अनुष्ठान करके पवित्र बन सकूं वे भी मुझे इस समय नहीं सूझ रहे हैं।'' इस पर व्यास युधिष्ठिर को अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान करने की सलाह देते हैं। यज्ञ की तैयारी होती है। इस यज्ञ में कर्ण का पुत्र वृषकेतु उपस्थित है। कर्ण की प्रति-कृति। शूर वीरता, बुद्धि कुशलता में। सभी पांडव वृषकेतु को पाकर धन्य हो गये हैं। इसकी साक्षी जैमिनीयाश्वमेधपर्वणि में मिलती है। आश्चर्य यह होता है कि महाभारतकार ने वृषकेतु का स्मरण तक नहीं किया। और नहीं यह कार्य उसके द्वारा संपन्न कराया। कर्ण का एक बेटा जीवित भी है यह भी महाभारतकार कह नहीं सका। महाभारतकार को यह विस्मरण हुआ ऐसा ही मानता हूँ मैं। हमने इस भूल को सुधार दिया है।

कुंती अंत में कर्ण की जननी थी। कर्ण उसकी प्रथम संतान थी। उसका वात्सल्य कर्ण के लिये जीवनभर मूक रुदन करता रहा। चन्द्रवंशी शासित नरप्रधान संस्थान में उसे वाचा नहीं आई। चन्द्रवंशी शासन की नारी हीन, दीन ही बनी रही। अंत में वह भारतीय नारी थी। भारतीय जननी थी। चन्द्रवंशी नरेशों के मित्र देवनामधारी मानव जाति के राष्ट्र (देवराष्ट्र-त्रिविष्टप) की अप्सरा नहीं थी। जो प्रसव होते ही संतान को वहीं छोड़कर भाग छुटती थी। सच तो यही है कि कुंती कर्ण को नहीं भुला सकी। अवैध होने से उसका त्याग करना पड़ा। रंग भूमि के समय उसे पहचान कर भी अपना परिचय न दे सकी। क्यों कैसे यह सब हुआ? उसका चिंतनात्मक, मनोवैज्ञानिक चित्रण किसी भी कवि या साहित्यकार ने ऐतिहासिक आधार पर किया है ऐसा अभी तक देखने में नहीं आया। बल्कि हुआ यह कि कर्ण-कुंती मिलन में कुंती को कर्ण की ओर से फटकार ही मिली है। फिर इसमें कर्ण पर सर्व प्रथम हिन्दी जगत में लिखनेवाले सुप्रसिद्ध कवि दिनकर क्यों न हो? 'मंथन' माला का कर्ण आजतक लिखे गये कर्ण से भिन्न पड़ गया है। पडना भी चाहिये। क्यों कि मंथनकार को मनोरंजन नहीं करना था। उसे जो पात्र मिला है वह विरोधाभास में मिला है। इसलिये वस्तुस्थिति को ही देखना था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आज उसीको जलांजलि देनी है। युद्ध पूर्व कुंती कर्ण से मिलने गई थी लेकिन ध्येयनिष्ठ कर्ण दुर्योधन का पक्ष छोड़ सकने में असमर्थ मिला, तो माता को किसी प्रकार उसने दुखाया भी नहीं। जीवन में प्रथम और अंतिम मिलन था मां बेटे का। पुनः किसी की भेंट नहीं हुई। अंत में महाभारत युद्ध में जो होना था वही हुआ। भाई द्वारा मारा भाई मारा गया। निःशस्त्र मारा गया! नहीं मरवाया गया। कुंती मन मारे रह गई! अब कहने आई "एक जलांजलि अभी शेष है।" लेकिन किसकी ?

युधिष्ठर प्रश्न करता है। किसकी ? क्या नाम है उसका ? किस कुल गोत्र का उच्चारण करके जलांजलि दूँ ?

कुंती कह नहीं पाती। सहज, सरल शब्दों में। खींचातानी चल रही है उसके मनकी। कैसे कहेगी ? कर्ण अवैध संतान हैं। युधिष्ठिर का ज्येष्ठ बंधु है। कैसे प्रकट करे यह पाप पुत्र के सम्मुख ? कैसे कहे तेरे बड़े भैया को जलांजलि देनी है ?

ऐलवंशी शासन संस्था की अव्यवस्था का शिकार है वह। दुर्वासा के मंत्र की परिभाषा होनी चाहिये। सूर्य की परिभाषा होनी चाहिये। देव जातिका मनुष्य दिन दहाडे आया। गर्भ स्थापना कर गया। प्रसव पश्चात् संतान का त्याग करके उसे कुमारी बनकर रहना पड़ा! चंद्रवंशी शासन को यही मान्य था। इसलिए नियम बना था—"अब कुमारी कन्यायें गर्भधारण नहीं करेंगी।" वैशंपायन जनमेजय को सुना रहे हैं। कहते हैं—"इस प्रकार नियम बनने पर भी तुम्हारी दादी ने गर्भधारण किया। फलतः संतान का त्याग अनिवार्य हो गया। अन्यथा कुमारी बनकर रहना, कहलवाना असंभव था।"

हम महाभारत के विद्वान एवं विवेकी पाठकों से कि जिनके पास थोड़ा भी तर्क हैं, न्याययुक्त विचार है, पूछना चाहते हैं कि "क्या कुंती ने स्वयं खुशी से गर्भ धारण किया था ? क्या कहता है वन पर्व का गर्भ स्थापना वाला ३०७ वां अध्याय ? ३०६ ठां अध्याय क्या कहता है जिसमें सूर्य का आवाहन और कुंती सूर्य संवाद है। क्या कुंती बदचलन थी ? स्वैर विहारिणी थी ? दुःश्चरित्रा थी ? मुक्त यौन सम्बन्ध की इच्छुक थी ?

उत्तर में सभी प्रश्नों के नहीं, नहीं, यही कहना होगा। उसको निर्दोष ही बताना होगा और मुक्त कंठ से, निर्भय बनकर कहना होगा दोषी चंद्रवंशी शासन है। समाज है, उस शासन के कार्यकर्ता है। और उसके लिये खोलने होंगे, उलट पुलटकर देखने होंगे चंद्रवंशियों के प्राचीन इतिहास के वे पृष्ठ जिनमें दिखाई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

देगा चंद्रवंश का मूल निवास, उनकी वहां की समाज व्यवस्था और उनमें से सर्व प्रथम भारत की ओर आया हुआ दिवोदास। तथा भारत प्रवेश में शंबर द्वारा विरोध होने पर अन्त में आमंत्रण देकर बुलाया गया देवेन्द्र और देवनामधारी मानव जाति। और देखनी होगी इन दोनों प्रजाओं की गतिविधियां सूक्ष्म दृष्टि से। दिवोदास के भारत आने से महाभारत काल तक का संपूर्ण चित्र अवलोकन करना होगा।

दिवोदास चंद्रवंश की १५/१६ वीं पीढ़ी का व्यक्ति है। उसके पूर्व की पूर्वजों की सभी पीढ़ियों का इतिहास देखना होगा। उनके संस्कार देखने होंगे। लेकिन इतने ही से काम नहीं चलेगा। चंद्रवंश के मूल तक पहुँचना होगा। अत्रिवंश को भी थोड़ा देखना होगा क्यों कि चंद्रवंश की उत्पत्ति चंद्रात्रेय[1] से हुयी है। तब कहीं प्राचीन भारत का इतिहास स्पष्ट होने लगेगा। एक नई दिशा के पट खुलेंगे। जिसपर अब तक न कभी सोचा गया है न लिखा गया है। इसमें सबसे महत्व की बात यह होगी कि आज तक आर्यों का जो प्रश्न उलझा हुआ है वह सुलझ जायेगा।

और तब तीव्र स्मरण हो आयेगा मूल भारतीय प्रजा का। उन भरतों का जिन्हें स्पष्ट रूप में भुला दिया गया है। इतिहास से मिटा दिया गया है। जिनके स्थान पर दस्यु, दास, द्रविड, अनार्थ आदि प्रजा बताई गई हैं। राजा भी बताये गये हैं। और अबतक भी यह इतिहासकार यही लिखते चले आ रहे हैं—"भारत का इतिहास काल आर्य जाति के ऋग्वेद से आरंभ होता है"।[2] दूसरा कहता है-"ऋग्वेद में आर्यों के आक्रमण अथवा भारत प्रवेश के विषय में कोई उल्लेख नहीं है।[3] तीसरा कहता है—भारत में आर्यों के प्रवेश और आक्रमण की कोई निर्दिष्ट तिथि नहीं है। दूसरे कालम के शुरूआत में लिखा है—"यद्यपि ऋग्वेद में आर्यों के आदि देश, उनके प्रयाण स्थल, प्रस्थान का काल, मार्ग आदि का विवरण नहीं है तथापि जिस प्रदेश में ऋग्वेद की रचना हुयी उसका

---

१. चंद्र अत्रिवंश का था। उसका दूसरा नाम सोम था। यहां अत्रि तृतिय पुरुष है इसलिए हमने चंद्र को चंद्र आत्रेय अर्थात् चंद्रात्रेय कहा है।

२. श्री गंगा प्रसाद मेहेता, प्राचीन भारत, बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय, प्रकाशन इ. स. १९३३।

३. श्री डा० रमाशंकर त्रिपाठी, एम. ए. पी. एच. डी. ( लंडन ) युनिवर्सिटी प्रोफेसर व अध्यक्ष इतिहास विभाग, प्रिन्सिपल सेंट्रल हिन्दु कॉलेज तथा डीन फेकल्टी ऑफ आर्टस्, बनारस हिन्दु युनिवर्सिटी, प्रकाशन मार्च १९५१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उल्लेख ऋग्वेद में आर्यों ने किया है" ।[1] एक ख्याति प्राप्त विद्वान का कहना है। "भारत का मुख्य इतिहास आर्यों के भारत में आगमन से आरंभ होता है" । दूसरे वाक्य में आप लिखते हैं–"भारत का इतिहास एक प्रकार से इस देश में आर्य जाति का इतिहास है। उसका आरंभ आर्यों के भारत में आगमन से होता है" ।[2] मतलब सबका स्वर एक ही है कि भारत में आर्य आये हैं। उनके पूर्व यहां दस्यु, दास, द्रविड, अनार्य आदि की बस्तियां थी।

इस प्रकार आर्यों को भारत में आये यह दिखाकर, आक्रमक बनाकर, भारत की मूल प्रजा को दस्यु, दास, जंगली, अनार्य आदि करार देकर एक परम्परा सी चलाई गई है। उसमें सत्य है या नहीं ? यह किसी ने अभी तक देखा ही नहीं। न आने वाले आर्य कौन उनका नाम, वंश, गोत्र कोई बता सके, न दस्यु, दास द्रविड़ आदि कौन इनकी पहचान करा सके। किसी का नाम करण नहीं हो सका इनसे। तात्पर्य प्राचीन भारत का इतिहास मूल में इस प्रकार विदेशियों द्वारा लिखित प्राचीन भारतीय इतिहास से पकड़ा जाना असम्भव हैं। उपर्युक्त तीनों विद्वानों का अध्ययन विदेशियों के ग्रंथों के आधार पर रहा है। आजतक के प्राचीन भारत के इतिहास लेखकों की यही स्थिति है। किसी ने अपने मूल ग्रंथों को सम्मुख रखकर विदेशी विद्वानों की दलीलों को तुलनात्मक दृष्टि से देखने का प्रयास किया ही नहीं। सभी ने कहा भारत में आर्य आये, लेकिन कौन आये इसका स्पष्टीकरण नहीं हो सका। दूसरी भूल यहाँ यह हुई कि आर्य शब्द जातिवाचक चल पड़ा उसने भी इन सबको उलझाकर रख दिया। किसीने आर्य शब्द का अर्थ देखा ही नहीं ऐसा लगता है। इसी कारण से दस्यु, दास, आदि भी जातिवाचक बन गये। एक उलझन के कारण अनेक उलझने पैंदा हो गयीं।

---

१. चिन्ह क्रमांक ३ और ४ इसी लेखक के संबंध में हैं। ग्रंथ में कोई मौलिकता नहीं है। विधानों में पुष्ठता नहीं है। विरोधाभास है। विदेशियों के उद्धरणों से समग्र ग्रंथ भरा पड़ा है। विसंगतियों की भरमार है अर्थात् शुरूआत से वैदिक कालतक (पृ. १०१ तक)। कहीं कहीं लेखक के तर्क इतने सचोट है की लगता है। रहस्योद्घाटन होगा लेकिन फिर निराशा छा जाती हैं। इसका एक ही कारण, आत्म विश्वास की कमी और उसका कारण अपने ग्रंथों का स्वयं अध्ययन न होकर केवल विदेशियों के ग्रंथों का अध्ययन।

२. श्री राधा कुमुद मुकर्जी, हिन्दु सभ्यता, पृ. ४४,६७।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन सब उलझनों के मूल में विद्वानों के अपने ग्रंथों का स्वयं अध्ययन का अभाव रहा है। अन्यथा अपने समय के ख्यातनाम विद्वान् राधाकुमुद मुकर्जी इस प्रकार गलत विधान नहीं करते। आप अपनी हिन्दु सभ्यता नामक पुस्तक में "महाभारत युद्ध तक का इतिहास" नामक शीर्षक द्वारा जो विवेचन करते हैं वह हास्यास्पद ही है। आप कहते हैं पुराणों में आदिराज मनु वैवस्वत की कल्पना[१] की गई है। जिससे भारत के सब राजवंशों का उद्‌गम हुआ। उसकी पुत्री इला थी, जिससे पुरुरवा ऐल का जन्म हुआ जिसने आधुनिक प्रयाग के पास झूंसी (प्रतिष्ठान) को आदिम भारतीय सन्निवेश के रूप में अपनी राजधानी बनाकर राज्य किया।[२]

इसमें "आदिराज मनु" मनु से भारत के राजवंशों का उदगम् और पुरुरवा द्वारा प्रतिष्ठान में आदिम भारतीय सन्निवेश की स्थापना "यह तीनों विधान अनैतिहासिक है, अनुचित है। इसे सत्य सिद्ध कर दिखलाने के लिए कोई आधार नहीं[3] है। वैवस्वत मनु आदिराज कैसे हो सकते हैं? जबकि पुराणों में इसके पूर्व छह मनुओं का उल्लेख स्पष्ट रूप में हैं। लेखक को वे कैसे नहीं मिलें इसका आश्चर्य होता है। यदि आपने स्वयं पुराण ग्रन्थ देखे होते, अध्ययन किया होता तो आप यही लिखते कि "प्रथम मनु स्वायंभुव के पाँचवीं पीढ़ी का भरत नाम का व्यक्ति प्राप्त इतिहास में भारत का प्रथम राजा है। आदिराज भरत हैं।" भारत के राजवंशों का उद्‌गम भरत से हुआ है। भरत के पश्चात् अनेक पीढ़ियाँ भारत के राजसिंहासन को शोभायमान किये हुए हैं।[४] वैवस्वत मनु तो सातवे मन्वन्तर का व्यक्ति है। पीढ़ी क्रमांक में उसका क्रमांक ५० आता है। वह भारत का आदिराज कैसे हो सकता है? और उसका दौहित्र पुरुरवा आदिम भारतीय सन्निवेश-स्थापन कर्ता कैसे संभव है? भारत के राजवंशों का उद्‌गम वैवस्वत मनु से अवश्य हुआ है लेकिन वह हुआ है सूर्यवंशी राजाओं की इक्ष्वाकु शाखा के किसी अन्य राजा द्वारा[५] लेकिन सातवे मन्वंतर में। तो क्या इसके

---

१. कल्पना क्यों की गई? कल्पना आदिराज की अवश्य है लेकिन वह भी आप की है, लेखक की है। वैसे वैवस्वत ऐतिहासिक पात्र है ही।
२. हिन्दु सभ्यता, पृ० ४७।
३. देखिये मंथन, प्रथम भाग, कर्ण-कृष्ण, टिप्पणी विभाग।
४. देखिये मन्थन भाग २ खण्ड २ का परिशिष्ठ, वंशावली विभाग।
५. ऋग्वेद के आधारपर ही कहा जायेगा कि भारत में सूर्यवंशी राजाओं का अस्तित्व मांधाता के पश्चात् ही बताया जा सकता है। अयोध्या में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूर्व भारत बिना राजा का देश था? तब जिस भरत के नामपर इस देश का नाम करण हुआ उस भरत को कहाँ ले जायेंगे हम? कैसे इतिहास से मिटा देंगे?

ध्यान रहे, प्राप्त इतिहास का प्रथम मनु ( मानव ) स्वायंभुव मिलता है। उसका पुत्र प्रियव्रत, उसका आग्निध्र और उसका नाभि। यह नाभि भारतवर्ष का प्रथम राजा मिलता है, लेकिन तब इस देश का नाम भारतवर्ष नहीं था। भारतवर्ष नाम करण इसके पौत्र भरत के समय हुआ है।[1] काश भारतीय इतिहासकार विदेशियों का अनुकरण नहीं करते। स्वयं अपना मूल देखकर इतिहास लिखने का परिश्रम करते। जब भारत में राजा, और राज शासन का आरम्भ हुआ था उसके पश्चात् ४८ पीढ़ी तक तो न वैवस्वत का जन्म हुआ था न उसका जामात बुध तथा दौहित्र पुरुरवा का भी। तब भारत का आदिराज मनु वैवस्वत और आदिम भारतीय सन्निवेश का स्थापनकर्ता पुरुरवा कैसे कहला सकता है? काश हमारे देश के इतिहासकारों का वंशावली के साथ पौराणिक ग्रंथों का उनका अपना स्वयं का अध्ययन होता।

प्रियव्रत और उत्तानपाद दोनों स्वायंभुव के पुत्र है। दोनों की शाखायें साथ-साथ चली हैं। इसमें प्रियव्रत की शाखा भारत में और उत्तानपाद की शाखा एलाम में चली है। तब उस प्रदेश का नाम इलावृतवर्ष था। बाद में इसी का विशाल प्रदेश ईरान कहलाया। प्रियव्रत की शाखा का छहों मन्वन्तरों में भारत में शासन रहा है। भरत भारत के प्राप्त इतिहास के मूल है। जिन पुराणों के आधार पर श्री मुकर्जी साहब अपना इतिहास देते हैं उन्हीं पुराणों से हम भी देते हैं। इतना अवश्य है कि हमने अपने ग्रन्थों का स्वयं अध्ययन किया है। ऋग्वेद, अथर्ववेद, समस्त पुराण ग्रंथ स्वयं देखे हैं। विदेशी विद्वानों के विधान भी सम्मुख रखे हैं। उन्होंने कहा वही सब सही ऐसा हमने कभी कहीं नहीं माना। दूसरी बात, श्री मुकर्जी साहब उसी पुस्तक के १४८ वे पृष्ट में एक और हास्यास्पद विधान करते हैं। कहते हैं—इक्ष्वाकु के वंशज ययाति की अधीनता में पुरुरवा के अन्य पुत्र अमावसुने कान्यकुब्ज और पौत्र ने काशी बसाई। इस प्रकार इनके अधीनता में ऐल साम्राज्य की स्थापना हुई। जिनके पाँच पुत्रों के नाम यदु, तुर्वसु, द्रुह्यु अनु, और पुरु थे। जो सब ऋग्वेद के समय में प्रसिद्ध हो चुके थे।"

---

इक्ष्वाकु का शासन बताने के लिये कोई आधार नहीं मिलता। न पुरुरवा के लिए प्रतिष्ठान के विषय में भी कोई आधार है। ( देखिये मंथन प्रथम भाग, टिप्पणी विभाग )।

१. देखिये, मंथन प्रथम भाग, टिप्पणी विभाग।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ध्यान रहे ययाति इक्ष्वाकु का वंशज नहीं है। बल्कि दोनों के वंश स्पष्ट रूप में भिन्न-भिन्न है। समझ में नहीं आता यह भयंकर विधान इस ख्यात नामा विद्वान ने कैसे किया ? इक्ष्वाकु विवस्वान ( सूर्य ) का पौत्र और वैवश्वत का ज्येष्ठ पुत्र है। इस वंश का नाम इतिहास में सूर्यवंश के नाम से पहचाना गया है। वहाँ ययाति चन्द्रवंश का है, उत्तानपाद की शाखा में आता है। ययाति के वंश का एक नाम ऐल भी है। एक सूर्यवंश एक चन्द्रवंश। ययाति को सूर्यवंश का बतलाना तो सम्भव नहीं है। दूसरी बात, पुरुरवा का पुत्र अमावसु अवश्य है लेकिन यदु आदि अमावसु के पौत्र नहीं है अपितु अमावसु के ज्येष्ट बंधु आयु के नहुष और नहुष के ययाति और ययाति के यदु आदि पाँच पुत्र है। अमावसु की शाखा अलग चली है और आयु की अलग। लेखक का यह विधान भी अनुचित ही है। उसी तरह कान्यकुब्ज और काशी किसने बसाई यह प्रश्न भी विवादास्पद है। दूसरी बात, जैसा कि लेखक का कहना है ऋग्वेद के समय में यदु आदि प्रसिद्ध हो चुके थे यह विधान भी अनुचित है। ऋग्वेद में यह पाँचों भाई एक वचन न होकर बहुवचन में दिखाई पड़ते हैं। क्योंकि ऋग्वेद की शुरुआत दिवोदास से होती है जो अमावसु की शाखा का १५।१६ वीं पीढ़ी का व्यक्ति है और जिसका सम्बन्ध शंबर दानव से आया है। उसी समय ययाति के पुत्रों का भारत में आगमन होता है। उनका वंश क्रमांक दिवोदास के जितना ही है। अर्थात वहाँ ये सब बहुवचन है और पांच समूह में है जिनका संबोधन ऋग्वेद में 'पंचजन' इस नाम से मिलता है।

तात्पर्य श्री मुकर्जी साहब ने पुराणों के आधारपर 'महाभारत युद्ध तक का जो इतिहास हिन्दु सभ्यता नामक पुस्तक के पृ० १४७-१५० तक दिया है उसमें प्रामाणिकता नहीं है। काल, वंश दोनों का ध्यान नहीं रखा गया। कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा ऐसा ही कुछ हुआ है। लगता है यह विवेचन विदेशी विद्वानों के द्वारा लिखे गये ग्रंथों पर से किया गया है।

ऐतिहासिक सत्य तो यही है कि भारत का इतिहास भरत से आरंभ होता है। यह भरत प्रथम मन्वतर का व्यक्ति है। आर्य है। उसके ४३ पीढ़ी पश्चात् दक्ष का जन्म होता है। दक्ष के पश्चात् चंद्रवंश का मूल पुरुष जिसका एक नाम सोम भी है उसका जन्म होता है। और चन्द्रवंश की १५/१६ वीं पीढ़ी का दिवोदास सर्व प्रथम ( चंद्रवंशियों में ) भारत में आता है। ऋग्वेद का आरम्भ यहीं से होता है और यह इतिहास सातवे मन्वतर से आरम्भ होता है। जब कि भारत का इतिहास भरत से प्रथम मन्वतर से शुरू होता है। नहीं कि श्री राधामुकुद मुकर्जी के कहने से "आर्यों के भारत में आगमन से" अथवा श्री गंगा प्रसाद मेहता के शब्दों में "आर्य जाति के ऋग्वेद से।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तात्पर्य प्राचीन भारत का इतिहास लिखना है तो वह अब स्वायंभुव मनु से लिखना चाहिये। स्वायंभुव का वंशधर भरत यहाँ का प्राप्त इतिहास का मूल पुरुष है। प्रथम शासक है अपने पिता के पश्चात् का। मतलब भारत में चन्द्रवंशी प्रजा के ( दिवोदासादि ) आने के पहले भरतों का निवास था। नहीं कि दासों का, दस्युओंका। विदेशी शासन काल में विदेशियोंने जो ढांचा बनाया उसीको और अधिक पोषित करने में हमारे इतिहासकार लगे हैं। भारतीय संस्कृति और इतिहास"[1] शीर्षक देकर लिखनेवालों को भी देखा। इतिहास लिखते समय वे भी कोई प्रामाणिकता का दर्शन नहीं देते। वे भी कहते हैं–"द्रविड लोग जिस समय सिंघु घाटी के एक नागरी सभ्यता के निर्माण में लग रहे थे ( तब ) भारत के सर्व प्रथम मूल निवासी पुराआष्ट्रेलियन नवपाषाण कालीन अवस्था में थे।[2] यह कैसा विचित्र विधान है? भारत के सर्व प्रथम मूल निवासी पुराआस्ट्रेलियन कैसे? कहां से लाये यह मसाला लेखक? काश, कोई प्रमाण तो दिया होता। ताकि हमें भी विचार करने के लिये कुछ अवसर मिला होता। प्राप्त इतिहास के आधार पर तो भारत के मूल शासक भरत मिलते हैं। भरतों के पूर्व भी यहाँ कोई प्रजा अवश्य रहती होगी। लेकिन वह शुद्ध पुराआस्ट्रेलियन ही है यह कैसे सिद्ध किया जायेगा? दूसरी बात द्रविड़ों के जन्म के ४२-४३ पीढ़ी पूर्व भरत का जन्म हो चुका था ( देखिये वंशावली परिशिष्ठ, मंथन भाग २ खंड २ )। उसके चार पीढी पश्चात् ऋग्वेद का सुप्रसिद्ध सर्व प्रथम सूक्त रचयिता परमेष्ठि संस्कृत का प्रकांड विद्वान कहलाता है। और प्रसिद्ध एकवीस प्रजा प्रजापतियों में परमेष्ठि का भी नाम आया है। उन नामों में भी उसका क्रमांक शुरूआत का ही है। क्या उसकी संताने नवपाषाण युग की थी? काश, इन इतिहास लेखकों ने अपना साहित्य प्रत्यक्ष रूप में देखा होता। पश्चिमी विद्वानों से उधार माल लेकर अपनी दुकान नहीं सजायी होती। मनमानी अटकलें नहीं चलाई होती। इनके शब्द प्रयोग निश्चय ही हास्यास्पद है। देखिये थोड़ा और सूनाता हूँ। "हिन्द आर्य भूमध्य सागरीय और अल्पाइन लोगों से पंजाब में मिले। उनपर शासन किया और उनपर अपनी संस्कृति की छाप डाली।"

अब इसमें हिन्द आर्य का अर्थ क्या किया जाय? और वे भूमध्य सागरीय तथा अल्पाईन लोगों से पंजाब में मिले इसका क्या अर्थ हो सकता है? क्या

---

१. लेखक श्री संग्राम सिंह चौधरी, प्रकाशन, प्रथम प्रकाशन दिल्ली।

२. वही पृ० १७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
पंजाब हिन्द से कोई भिन्न प्रदेश है ? दूसरी बात कहाँ से आकर ये हिन्द-आर्य पंजाब में इन लोगों से मिले ? यह कैसा इतिहास ? कहाँ से लिया यह सब लेखक ने ? यह कैसी अटकलें ? लेखक का और एक विधान देखिये — "हिंद-आर्य-सभ्यता के पैर पंजाब में जमे और वह गंगा के मैदान में फैली। "यह कैसी कलम ? कौन हिंद आर्य ? और पंजाब में उनके पैर कैसे जमें ? हिंद-आर्य के पैर हिंद में ही जमें यह कैसा विधान ? इसमें कौन सी विद्वत्ता प्रकट हो रही है ? बहुत ही खेद की बात है। क्या यही है भारतीय संस्कृति और इतिहास ?

सच बात तो यही है कि अभीतक वैदिक जन कौन ? कौन है आर्य इसी की पहचान किसी ने नहीं कराई है। वैदिक जन अथवा वेद[1] यही शब्द प्रयोग चल रहा है। फलतः किसी नई बात का स्पष्टिकरण होना असंभव है। इसी अनुसंधान में एक दलील और देते हैं। सुप्रसिद्ध इतिहासकार श्री जयचन्द्र विद्यालंकार कहते हैं"[२]—वैदिक जन भले ही पितृमूलक परिवार पर निर्भर थे तो भी माता से अनेक बार गोत्र खोजना और बहुपतिक आदि की पुरानी प्रथायें अवशेषों और स्मारक चिन्हों के रूप में उनमें चली आ रही थी,[3] या कभी प्रकट हो जाती थी। विवाह की संस्था में शिथिलता थी वह इतनी दृढ नहीं थी जितनी बाद में दृढ हुई।" यह दलील शोध मांगती है। इसमें लेखक ने वैदिक जन शब्द प्रयोग किया है। वहाँ वैदिक जन के बदले 'ऋग्वैदिक जन' ऐसा शब्द प्रयोग स्पष्ट रूप में चाहिये था। इस दलील में 'बहुपतिक,' और 'विवाह संस्था की शिथिलता' तथा 'माता से गोत्र खोजना' इस प्रकार तीन मुद्दों पर कुछ कहना आवश्यक मानता हूँ।

यह तो सत्य ही है कि आजतक के सभी इतिहासकार आर्यों की दो शाखाओं का ही उल्लेख करते हैं। एक सूर्यवंशी और दूसरी चन्द्रवंशी। इनमें किसी को माता के नामपर संबोधा गया है ऐसा कहीं कोई उल्लेख नहीं मिलता।

---

१. यहाँ सभी के सम्मुख केवल ऋग्वेद ही है। यही सच है।

२. भारतीय इतिहास की रूपरेखा पृ० २२५।

३. लेकिन चंद्र और सूर्य यही एकमात्र आर्यों की शाखायें नहीं है। प्राप्त इतिहास की प्रथम आर्य शाखा तो भरतों की है। इस शाखा को प्रायः सभी भूल गये हैं। जबतक भरतों का समावेश इतिहास में नहीं किया जाता यह इतिहास अपूर्ण ही कहलायेगा, उलझा हुआ ही रहेगा। लेकिन यहाँ वैदिक जन कहने पर भी ऋग्वैदिक जन नहीं कहा जाता तो उनका नाम करण भी नहीं किया जाता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
चन्द्रवंशी पुरुरवा को अवश्य माता के नामपर ( इला ) ऐल कहा गया है। इससे अतिरिक्त किसी को माता से गोत्र मिला ऐसा नहीं दिखाई देता। रही बहुपतिक की पुरानी प्रथा तो वह भी इन दोनों वंशों में कहीं दिखाई नहीं देती। अब तीसरी बात विवाह की देखिये। लेखक कहता है—"विवाह की संस्था में शिथिलता थी।" तो वह किनमें थी। लेखक ने स्पष्ट कहा है वैदिक जनों में थी। यहाँ वैदिक जन कौन है ? उत्तर में स्पष्ट यही कहा जायेगा कि ऋग्वैदिक जनता के सिवा अन्य कोई संभव ही नहीं है। और वह है चन्द्रवंशी। वें दो कार्यों में बड़े निपुण थे—युद्ध और भोग विलास में। उनके जीवन में चिंतन और गंभीरता को कोई स्थान प्राप्त न था। ऐश्वर्य भोगने में ही जीवन की सार्थकता मानी जाती थी। स्त्रियों को उनके शासन संस्था में कोई रक्षण नहीं था। समाज में उनका कोई महत्व नहीं था। चन्द्रवंशियों का नारी के प्रतिका दृष्टिकोन ही भिन्न था। और उसका कारण था देव जाति से मैत्री तथा अप्सराओं की सुलभता। यह आदतें उनके ईरान ( एलाम ) में रहते हुये ही उनमें आ गई थी। भारत में आने के पश्चात् भी यही क्रम चालू था। अब तो यहाँ वे शासक भी बने हुये थे। अप्सराओं के कारण ही यह शिथिलता आई थी, जो वैवाहिक जीवन के लिये भी घातक सिद्ध हुई। पत्नी के रहते हुये भी अप्सराओं के साथ स्वैर विहार था, उनका मान-सम्मान सुरक्षित था। अतिरिक्त किसी स्त्री पर पति की छाप लगी हुई रहने पर भी कोई भी गैर व्यक्ति उसके पति के सम्मुख उसका हाथ पकड़कर उसे काम शांति के लिये एक बाजू ले जा सकता था। शांति से अपनी काम वासना पूरी कर सकता था। यह प्रमाण श्वेतकेतु के समय मिलता ही है। और यह स्थान था पंचाल प्रदेश। वह पंचाल का निवासी था।[1] यह स्थिति पंचाल की थी, अर्थात् चन्द्रवंशी समुदायों की, पंचजनों की। चन्द्रवंशी तत्कालीन भारत के लिये आगंतुक हैं, यह भुलाया गया। हम यहाँ पुनः यही कहना चाहते हैं कि यह दलील चन्द्रवंशियों के लिये लागू होती है। मूल भारतीयों के लिये अर्थात् भरतों के लिये नहीं लागू की जा सकती। भरतवंशी आगंतुकों से भिन्न थे। वंश, गोत्र आदि सबमें। यहाँ इस बात का स्पष्टिकरण कर देना चाहता हूँ, माता के नामपर गोत्र आदित्यों का था। इन्हीं बारह आदित्यों में एक आदित्य का नाम विवस्वान था जिसे सूर्य भी कहते थे। उसके नामपर सूर्यनाम से एक आर्यों की शाखा चली। आदित्यों में एक आदित्य

१. श्वेतकेतु के समय पंचाल का नामकरण हुआ था या नहीं यह जानना आवश्यक है। यह तो सत्य है कि यह नामकरण मुद्गल के समय हुआ है। देखिये मंथन भाग २, खंड २, वंशावली परिशिष्ठ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
विवस्वान की यह शाखा जो सूर्य नाम से चली वह विवस्वान के पौत्र इक्ष्वाकु से मानी गई है। शेष ग्यारह आदित्य ही कहलाये, जिनको आगे चलकर सूर, देव आदि संज्ञा प्राप्त होती है। उनके लिये हम आर्य संबोधन नहीं कर सकते। आदित्यों को हम आर्य नहीं कह सकते। आर्य शब्द संस्कार वाचक है इस अर्थ को लेकर ही मन्थनकार का मन्थन है। देव, सूर आदि संज्ञा प्राप्त आदित्य संस्कारों में हीन थे। यह ध्यान में लेना अत्यावश्यक है।

तात्पर्य प्राचीन इतिहास लेखकों को चाहिये कि वे अपने शब्द प्रयोग विवेक पूर्ण दृष्टि से करें। अब हम प्राचीन भारत के इतिहास के लिये न्याय चाहते हैं। आर्य शब्द का हल चाहते हैं। हमने मंथन ग्रंथ माला में यही कार्य किया है। मंथन माला का टिप्पणी विभाग इतिहास के संशोधकों के लिये ही लिखा गया है। इसलिये कि आर्य विषय का यह भ्रमजाल अब दूर हो जाय। ऋग्वेद के पूर्वका इतिहास स्पष्ट हो जाय। प्राचीन भारतीयों का यानी भरतों का इतिहास ऋग्वेद से भी पुराना हैं। अतः ऋग्वेद आर्यों की प्रथम पुस्तक नहीं है और यदि है भी तो है चन्द्रवंशी आर्यों की। कुछेक अंश में सूर्यवंशी आर्यों की। भारत के भरतवंशी आर्यों का उससे कोई सम्बन्ध नहीं है। एक परमेष्ठि को छोड़कर कोई भरतवंशी ऋग्वेद में आया नहीं। अतः भरतवंशी आर्यों का वेद कौन सा यह प्रश्न यहाँ आकर खड़ा हो जाता है। इतिहास के संशोधकों से उत्तर की प्रतीक्षा करता है।

मतलब जयचन्द्र विद्यालंकार की बहुपतीक पुरानी प्रथा चन्द्रवंश में नहीं थी जिसे अवशेष रूप में मानी जाय। यह कहने के लिये कोई आधार नहीं है। द्रौपदी के लिये विचार करना होगा। यह प्रश्न अभी अनुतरित है, ऐसा हमारा मत है। विवाह की संस्था में शिथिलता अप्सराओं के ससंर्ग के कारण आ गई थी। श्री जयचन्द्र जी की यह दलील चन्द्रवंश पर लागू होती है। उनके वैदिक जन ऋग्वैदिक जन है। उन्हीं को लक्ष्य कर आपने अपने विचार व्यक्त किये हैं। इतना ही कहकर हम अपने मूल विषय पर आते हैं।

हमारा प्रश्न था कन्या के गर्भधारण करने का। वैशंपायन के अनुसार यहाँ गर्भ कन्या ने अर्थात कुन्ती ने कन्या अवस्था में अर्थात विवाह के पूर्व गर्भ धारण किया है। महाभारतकार का वैशंपायन के माध्यम से किया गया यह वाक्य प्रयोग कुछ अटपटा सा लगता है। वह कुन्ती के चरित्रपर कीचड़ उछालने जैसा है। जब भारत आर्य (संस्कार) प्रधान देश है, जब यहाँ आर्य सभ्यता और संस्कृति है तो ऐसा अनुचित, निंदनीय कार्य एक कन्या कैसे कर सकती है? यह कैसे संभव है? कन्या का गर्भधारण करना आर्य सभ्यता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
में, संस्कार वाले देश में, कदापि संभव नहीं है। आर्य सभ्यता में ऐसा कोई ( रही विवाह संस्था के शिथिलता की बात तो वह अप्सराओं के कारण आई थी। ) विधान नहीं है। तब वैशंपायन क्या कहते है ? महाभारतकार उनके मुख से क्या कहलवाता है ? इससे तो यही स्पष्ट हो जाता है कि "अब कन्यायें गर्भ-धारण नहीं कर सकती ऐसा समाज में नियम बना है।" इसका अर्थ यह है कि इसके पूर्व कन्यायें गर्भधारण करती थी, कर सकती थी। लेकिन तब भारत में कौन सा समाज है ? किस समाज को लक्ष्य करके वैशंपायन बोल रहे हैं ? घटना भारत की है यह सच है। लेकिन है चन्द्रवंशी समाज की। चन्द्रवंशी शासन की। तब तो यही कहा जायेगा कि चन्द्रवंशी समाज नैनिकता में गिर गया है। उसमें आर्यत्व का अभाव है। आर्य अर्थात संस्कार और धर्म अर्थात धारण करना। प्रधान अर्थात मुख्य। सब मिलकर यही कहा जायगा-संस्कारों को धारण करने वालों में प्रधान है, वही आर्य है। आर्य नाम संस्कार वाचक है, गुणवाचक है। जाति वाचक या रंग वाचक नहीं हैं। यह सोचकर ही प्राचीन इतिहास का लेखन होना चाहिये।

हम पहले ही कह चुके है कि आर्य संस्कृति में विवाह के पूर्व कोई कन्या गर्भधारण करे ऐसा विधान नहीं है। आर्य समाज में आयु के अनुसार नर-नारी के नामकरण है, संबोधन है। यही नहीं उन सबकी अपनी मर्यादायें भी है। उनपर भी कुछ नियम लागूं होते हैं। जैसे नर-नर है, नारी-नारी है। कन्या-कन्या है, कुमार-कुमार है। मतलब नारी, पत्नी, माता, कन्या, भगिनी, स्त्री आदि सबकी अपनी-अपनी परिभाषा है। सबके अपने-अपने रिस्ते-नाते हैं। उनकी पहचान है, मर्यादा है। किसी का किसी से कोई अनादर नहीं होता था।

तात्पर्य आर्य संस्कृति में, सभ्यता में, समाज में गर्भधारण कन्या नहीं अपितु पत्नी करती है। गर्भधारण करने का अधिकार पत्नी का ही है। वह भी अपने पति द्वारा। स्त्री को क्षेत्र कहा गया है। क्षेत्र के मानी धरती। उसमें अंकुरित होनेवाले अंकुर को क्षेत्रज कहा है। पत्नी भी स्त्री ही कहलाती है, नारी ही कहलाती है, लेकिन पत्नी में पति द्वारा अंकुरित अंकुर को यानी संतान को क्षेत्रज नहीं अपितु आत्मज कहा गया है। मतलब आर्य संस्कृति में पत्नी ही गर्भ धारण करती है। जब कन्या गर्भधारण करेगी तो वह कुलटा, कुलकलंकिनी कहलायेगी। उसको पत्नी रूपमें इसके पश्चात् कोई स्वीकार नहीं करेगा।

आर्यों के सोलह संस्कारों में एक संस्कार गर्भ धारण भी कहलाता है। वैशंपयन के कहने से यही स्पष्ट होता है कि चन्द्रवंशी शासन काल में कन्यायें

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
भी गर्भधारण करती थी। लेकिन इसमें यह ऐतिहासिक सत्य नहीं कि कन्याओं में यह दोष आ गये थे। दोष तो नर प्रधान संस्था में था। चन्द्रवंशी नर प्रधान संस्था विलास प्रिय थी। अर्थात् दोषी चन्द्रवंशी शासन था, चन्द्रवंशी समाज था। पाठक यहाँ यह ध्यान रखे कि यह स्थिति भारत की थी अवश्य, लेकिन है चन्द्रवंशी शासन कालीन भारत की और चन्द्रवंशी समाज की, प्रजा की। इसमें समावेश होता है चन्द्रवंशी शासक, प्रजा, गणमान्य लोग एवं चन्द्रवंशी ऋषि मुनियों का। इनमें मूल भारतीय अर्थात् भरत कौन है ? इसलिये हमारा आग्रह है कि प्राचीन इतिहास लिखते समय शब्द प्रयोग करने में। पूर्णविवेक वरता जाय, आज कल के इतिहासकारों के सम्मुख चन्द्र और सूर्य इन दो ही वंशों का इतिहास है। इनका इतिहास भी भारतीय इतिहास अवश्य है लेकिन उसकी एक मर्यादा है। इनका इतिहास सातवे मन्वतर में चन्द्रवंशकी १५।१६वी पीढ़ी से दिवोदास से और सूर्य वंश की १८।१९ वी पीढ़ी से मांधाता, पुरुकुत्स से आरंभ होता है। मांधाता का जन्म चैत्ररथ वन में हुआ है। मांधाता के पूर्व के किसी सूर्यवंशी का भारतीय इतिहास से तब तक कोई सम्बन्ध नहीं आया ऐसा हमें लगता है। अतः कहना यही है कि इनके पूर्व का भरतों का इतिहास जबतक प्राचीन भारत के इतिहास में शामिल नहीं किया जायगा यह इतिहास अपूर्ण ही कहलायेगा। क्यों कि यहाँ की मूल प्रजा भरत है। चन्द्र और सूर्यवंशी तत्कालीन भारत में आगन्तुक है। चन्द्रवंश के भारत आगमन पश्चात् ही यहाँ के सभ्यता और संस्कृति में विकृति आने लगी है। अन्यथा कन्याओं के गर्भधारण करने जैसी लज्जा-स्पद घटनायें आर्यों में कैसे संभव है ?

कन्यायें गर्भधारण करतीं थी यह कहकर महाभारतकाल ने वैशंपायन द्वारा भारतीय आर्य कन्याओं के मुहपर मानो जोर का तमाचा जड़ दिया है। हम विद्वान पाठकों, एवं इतिहास के संशोधकों को याद दिलाना चाहते हैं कि भरतों की भारतीय आर्य शाखा की सभ्यता भिन्न है। महाभारतकालीन समाज, इतिहास शुद्ध रूपेण भारतीय बने, कहलाये गये चन्द्रवंशी आर्यों का है। और यह घटनायें चन्द्रवंशी, भारतीय बने—कहलाये जानेवाले आर्यो के जीवन की है। अतः हम यहाँ सुधारकर इतना ही कहना चाहते हैं कि अब के "चन्द्रवंशी कन्या गर्भधारण नहीं करेगी" ऐसा शब्द प्रयोग वैशंपायन के मुख में उचित था।

चन्द्रवंशी विलासी थे। अप्सराये बिना मांगे, चाहे बिना चाहे इनकी सेवा में उपस्थित होती थी। देव जाति की चन्द्र से लेकर इनकी मैत्री चली आ रही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
थी। पुरुरवा उर्वशी से यह क्रम चालू था। देव जाति ने शूरवीर चन्द्रवंशियों से अपने सम्बन्ध बनाये रखे थे! अप्सराओं द्वारा हुई संताने चंद्रवंश में रामायण काल तक आई हैं। रामायण कालीन दिवोदास और अहिल्या सुदास के मेनका अप्सरा द्वारा हुई संतान हैं। चन्द्रवंश के राज सिंहासन पर यों पुरुरवा से सुदास तक की संतानें आई हैं। विलासी, स्वच्छंदी, भोगप्रधान चन्द्रवंशी जनता में कन्याओं के गर्भ रहते थे यह लाचारी से कहना पड़ता है। इस ऐतिहासिक सत्य पर कैसे परदा डाले? चन्द्रवंश में भारत जैसी पवित्र धरती पर आकर भी संस्कारों की उपासना न हो सकी। उनमें मूल संस्कार ही काम कर रहे थे।

यह तो ऐतिहासिक सत्य है कि ऐलों के (चन्द्रवंशियों के) भारत आगमन पश्चात् ही मूल भारतीय संस्कृति में विकृतियां आई है। वर्ण संकर बढ़ गया है। महाभारतकार महाभारत युद्ध पूर्व अर्जुन के मस्तिष्क में वर्ण-संकर की कल्पना का उदय कराता है। कहलवाता है—

> कुलक्षये प्रणशन्ति कुलधर्माः सनातनः
> धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत ।।४०
>
> अधर्माभि भवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः
> स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्ण संकरः ।।४१

इसका क्या अर्थ है? यह चिंता आज ही अर्जुन को कैसे हुई? युद्ध में वीर मारे जायेंगे, स्त्रियाँ विधवा हो जायेंगी, व्यभिचार के कारण वर्ण संकर उत्पन्न होगा। वह नरक गामी होता है। फलतः सनातन कुलधर्म और जाति धर्म नष्ट हो जाते हैं (४२)। यह सब आज ही क्यों कहा जा रहा है? वर्णसंकर और उसके द्वारा होने वाले दुःस्परिणामों का डर महाभारत युद्ध पश्चात् ही क्यों? क्या यह सब इसके पूर्व भारत में मौजूद नहीं है? महाभारतकार इस ऐतिहासिक सत्य को कैसे भूलता है कि भारत में चंद्रवंशी शासित समाज में केवल वर्णसंकर ही नहीं आश्रम संकर, धर्म संकर, गोत्र संकर इस प्रकार कितने ही संकरों का बोलबाला था। भारत आगमन पश्चात् चंद्रवंशियों से यही तो सत्कर्म बन पड़ा है। नारी केवल भोग्या है। दासी है। राजमहलों में विशेषता अप्सराओं की है।

हमने आचार्य रामदेव की एक दलील मंथन के प्रथम भाग में दी है। वे कहते हैं कि—"महाभारत युद्ध के बहुत पूर्व ही इस देश के निवासियों का सदाचार प्राचीन काल की अपेक्षा अवनत होने लगा था।" इसमें "इस देश के निवासियों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
का'' इसका क्या अर्थ किया जाय ? स्पष्ट ही है चंद्रवंशियों का। जिनकी महाभारत तक आते आते ४४-४५ पीढ़ियां बीत-चुकी हैं। जो तत्कालीन भारत के शासक हैं। समस्त भारत वर्ष पर उनका शासन है। जहाँ-तहाँ उनका वंश-परिवार ही फैला हुआ है। सदाचार इन्हीं का अवनत होने लगा था। यहाँ "होने लगा था" यह शब्द प्रयोग भी हमें अखरता है। हम तो यही पूछना चाहते हैं कि उनके पास सदाचार नाम की वस्तु ही कौन सी थी ? यह भी एक प्रश्न खड़ा हो जाता है। दिवोदास से शन्तनु तक का विस्तृत ब्यौरा ऋग्वेद देता ही है। स्वयं ऋग्वेद ही साक्षी देता है कि ऋग्वैदिक जनता में अर्थात् इन इतिहासकारों के आर्यों में कितना और कैसा आर्यत्व (संस्कार, नैतिकता, भलमनसाहत) है ? इनके सदाचार के अवनति का इतिहास तो चंद्र से ही आरंभ होता है। इसके पश्चात् पुरुरवा, ययाति आदि का विलासी जीवन पाठकों से अज्ञात नहीं है। भारत आगमन पश्चात् तो इनके जीवन-व्यवहार के रंग-ढंग सभी तरह से बदल गये हैं। भारत में आर्यों का आगमन, आने वाले आर्यों द्वारा भारत को संस्कार दिये जाना, और दिन प्रतिदिन उन्नति की सीढ़ियाँ चढ़ना', इस प्रकार का इतिहास लिखने वालों से हम पूछना चाहते है कि कौन है तुम्हारे आर्य ? कोई नाम ठाम भी है या नहीं उनका ? केवल आर्य कहकर तो इतिहास की शोभा बढ़ने वाली नहीं है। फिर उन आर्यों में कैसा आर्यत्व है ? क्या कहता है ऋग्वेद उनके लिये और जनके नेता के लिये ? इस विषय में ऋग्वेदका ऐतिहासिक पक्ष क्या कहता है। भारत में आनेवाले यह आर्य तो नगरनिर्माता नहीं नगर ध्वंसक हैं। नगर जलाने वाले, लूट मार मचाने वाले, आपस में बाँटने वाले हैं। यह नगर मूल भारतियों के थे। क्या आनेवालों में कहीं कोई संस्कारिता है ? (थी ?) कौन से संस्कार दिये उन्होंने भारत को ? उनमें से किसी एक का तो नाम बता दिया होता ? सच तो यह है कि इन इतिहासकारों ने आर्य शब्द जाति वाचक मान लिया, रंग वाचक मान लिया, व्यक्ति वाचक अथवा संस्कारवाचक नहीं मान सके। इसलिए भी नामकरण से वञ्चित रह गये। हमने मंथन ग्रंथमाला के प्रथम भाग में ही भारत में आर्य नहीं बल्कि ऐल आये है यह निर्णय ऋग्वेद पर से ही लिया है।

तात्पर्य आचाचार्य रामदेव जी का यह विधान चंद्रवंशियों पर लागू होता है, ऐलों पर लागू होता है। केवल महाभारत पूर्व ही नहीं देव जाति से मैत्री होने से भारत आगमन पूर्व से ही उनके सदाचार गिरते चले आ रहे थें। भारत आगमन पश्चात् तो शासक बनने के बाद वह और ही अधिक गिर गये हैं। दिवोदास के पश्चात् भारत में जो कुछ है वह चंद्रवंशियों का है। मूल भारतीय प्रजा तो भुला देने में आई। उसका तो कहीं अस्तित्व ही नहीं दिखाई देता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
जितने भी पात्र सामने आते हैं उनमें अधिक मात्रा में चंद्रवंशी और आंशिक मात्रा में सूर्यवंशी ही दिखाई पड़ते हैं। भरतवंशी तो कहीं लुप्त हो जाते हैं। इसलिये कहना पड़ता है कि यह इतिहास चंद्रवंशियों का है। दिवोदास के बाद का यानी इन इतिहासकारों के शब्दों में कहना चाहूँ तो आर्यों के भारत आगमन पश्चात् का चंद्रवंशियों इतिहास का है। सदाचार में शिथिलता उनमें आई थीं। कुंती का कन्या अवस्था का कर्ण, सत्यवती का व्यास, दोनों की जन्म कथायें चंद्रवंशी शासन की है। क्या जानें कितने कर्ण और कितने व्यास जनमें होंगे इस चन्द्रवंशी शासित भारत में—समाज में ?

यह सभी विकृतियां आई है चन्द्रवंशियों के भारत आगमन पश्चात् ही। भारत पर आर्यों का आक्रमण, भारत में आर्यों का आगमन यह दोनों ही विधान अब सूक्ष्म दृष्टि से अनुशीलनात्मक अध्ययन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

सहश्राब्दियों से भारत में समस्त एशिया के अनेक प्रदेशों की प्रजा समय समयपर आती रही है। सबने इस देश को अपना माना और अपने को जंबुद्वीप का निवासी बतलाया। यह पहचान आज भी हमारे संकल्प में हैं। 'जंबुद्वीपे भरत खंडे' इस मंत्र में है। यह प्राचीन भूगोल का एक दस्तावेज है। जो स्मृति वाङमय द्वारा परम्परागत अबतक जीवित है। उसमें का एक अक्षर भी नहीं घीस सका। नहीं मिट सका। इस जंबुद्वीप के ज्ञात इतिहास के प्रथम राजा स्वायंभुव थे। पौराणिक साहित्य उन्हें मनु संबोधन करता है। इसके समकालीन और भी बहुत से उपयुक्त पात्र मिलते हैं, प्रजा मिलती है। लेकिन इनके पूर्व का इतिहास जानने का कोई साधन नहीं है।

इस मनु का निवास सुमेरु प्रदेश का था। आज जिसे पामीर का पठार कहते हैं। समरकंद, सुमेरुखंड का ही बिगड़ा रूप है। सुमेरु के आगे खंड शब्द आने से यह प्रतीत होता है कि इस प्रदेश का एक विभाग किसी राजपुत्र के अधिकार में रहा है। भारतवर्ष के लिये भी भरत खंड शब्द प्रचलित है। यह भरत खंड जंबुद्वीप का ही एक प्रदेश है। इस मनु के दो पुत्र थे। ज्येष्ट प्रियव्रत था। वह जंबुद्वीप का अधीश्वर बना और उसका छोटा भाई उत्तानपाद अत्रि नाम के व्यक्ति के दत्तक गया। प्रियव्रत के बेटों में वर्तमान जगत् का यानी हम जिस भू-गोल पर रहते हैं उसका बटवारा हुआ।[1] प्रियव्रत के पश्चात् आग्निघ्र जंबुद्वीप का राजा बना। आग्निघ्र के बेटों में जंबुद्वीप का बटवारा हुआ। नाभि के हिस्से पर जो भाग आया वह उसके नामपर नाभिखंड

---

१. देखिये मंथन भाग २, खंड २ वंशावली परिशिष्ट।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
कहलाया। नाभि के पुत्र ऋषभ और ऋषभ के भरत थे। आगे नाभिखंड[1] भरत के पश्चात् भारतवर्ष कहलाया।

भरत का एक वंशधर जो भरत से ९वी पीढ़ी में आता है वह ऋग्वेद का एक सूक्तकार है। उसका नाम परमेष्ठी है। ऋग्वेद के १२९वे सूक्त का वह कर्ता है। परमेष्ठि का काल आज से १० हृ० व० पू० का मान लेने में कोई आपत्ति नहीं है। वह परमेष्ठि भरत है। भारत का निवासी है। राजर्षि है। उसका ऋग्वेद का यह सूक्त असाधारण है। वह अपने विचार संस्कृत में, काव्य में प्रकट करता है। बहुत सम्भव है और भी कई भरतों के और सूक्त हों। संकलन काल में न मिले हो। इस परमेष्ठि के पश्चात् ऋग्वेद में दूसरे क्रमांक में जो व्यक्ति मिलता है वह है चन्द्रवंशी दिवोदास। दोनों के बीच ५४/५५ पीढ़ी का अंतर है।[2] यहाँ लाचार होकर कहना पड़ता है कि जिस युग में परमेष्ठि अपने विचार काव्य में देता है, संस्कृत में देता है उस युग का वह अकेला ही व्यक्ति हो यह कैसे संभव है? निश्चय ही बीच के उन ५४/५५ पीढ़ी के मानव समाजीय विद्वानों के सूक्त संकलन काल में प्राप्त न हो सके, यही कहना पड़ता है। विद्वान कहते हैं ऋग्वेद की अनेक ऋचायें नष्ट हो गई हैं। ऋग्वेद की अनेक शाखायें थीं। अभी केवल कौथुमी शाखा ही प्राप्त है। तब यह कहने का साहस होता ही है कि परमेष्ठि के[3] बाद दक्ष ४८वीं पीढ़ी में आता है। दोनों में ३९ पीढ़ियों का अंतर है। दक्ष के पश्चात् दिवोदास १५।१६ वीं पीढ़ी में आता है। यों ५४/५५ पीढ़ियों का इतिहास कहाँ गया? यह इतिहास भरतों का है, भारत वर्ष का है, ऋग्वेद पूर्व का है। चन्द्र और सूर्यवंश का ही

---

१. नाभि खंड का पहला नाम हिमवत् खंड था। उसके पूर्व का नाम अजनाभ खंड मिलता है। मतलब इस प्रदेश का ( भारत का ) भू-गोल भी प्राचीन है। तो इतिहास भी प्राचीन है। साधानाभाव में स्वायंभुव के पूर्व का कोई इतिहास हम नहीं जान पाते। क्या करें?

२. देखिये मंथन भाग २ खंड २, वंशावली परिशिष्ठ।

३. ऋग्वेद में जो सूक्त है वह अधिकांश आत्रेय और चन्द्रवंशियों के हो है। सूर्यवंशी और अन्य प्रजा के भी सूक्त है लेकिन आश्चर्य है कि संकलन काल में इन नामों का क्रम कालानुसार नहीं लिखा गया। परिमेष्ठि के पश्चात् चन्द्रवंश के प्रथम पुरुष का जन्म ४० पीढ़ी पश्चात् होता है। और जिस दिवोदास का नाम पहले पहल ऋग्वेद में आता है वह इसके १५ पीढ़ी पश्चात् का व्यक्ति है। तब क्या कारण है कि ऋग्वेद में शुरू

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इतिहास भारत का इतिहास नहीं है। इनसे ५९ पीढ़ी पूर्व[1] भरत का जन्म होता है। वे भरत ५४ पीढ़ी तक यानी दिवोदास तक भारत के अधिवासी बने हुये हैं। वह इतिहास अज्ञात कैसे? चन्द्रवंश तो भारत में ५९ पीढ़ी पश्चात् आता है। ऋग्वेद चन्द्रवंशियों की विस्तृत और स्पष्ट गतिविधियाँ बताता है। वही इतिहास भारत का कैसे? भारत का तो है लेकिन भरतों का कैसे संभव है? इसके पूर्व के इतिहास के विषय में क्यों यह इतिहासकार मौन है? भरतों के इतिहास के बिना यह इतिहास अधूरा है। प्राचीन भारतवर्ष का इतिहास लिखनेवाले इस सत्य को न भूले तो अच्छा हो।

जो हो, परमेष्ठि का काल बुद्धि, ज्ञान, संस्कृति आदि में स्वर्णयुग का था। जिस कालका व्यक्ति अपने विचार संस्कृत में देता है उस युग के पीछे २।५ हजार वर्ष का इतिहास है यह कल्पना करना अनुचित नहीं होगा। हमने गुप्त कालको स्वर्णयुग माना है—कहा है। वह स्वर्णयुग एकाएक तो नहीं ही आया। अचानक तो आकाश से धरती पर नहीं टपक पड़ा। उसके पीछे भी शेंकड़ों वर्षों का इतिहास काम कर गया है। उसी प्रकार परमेष्ठि के लिये भी विचार करना होगा। परमेष्ठि का काल स्वर्ण युग का काल था। वह भरतों के उत्कर्ष का काल था। क्या पाषाण युग का मनुष्य संस्कृत में काव्य कर सकता है? उच्च कोटि के विचार दे सकता है?[2] तब इन पुराविदों के पाषाण और नवपाषाण युग की व्याख्या क्या की जाय? उनका कहता है ५००० व० पू० पाषाण युग था जब कि परमेष्ठि का काल आज से १० ह० व० पू० का बताने में कोई आपत्ति नहीं है। इसलिये हमारा आग्रह है कि कालीबंगा, हरप्पा, मोहनजोदड़ों आदि की सभ्यताओं का काल जो यह पुराविद् ३५०० ई० पू० से १५०० ई० पू० बताते हैं वह निर्भयपूर्वक ई० पू० सात आठ हजार तक ले जाने में कोई आपत्ति नहीं है, बल्कि और भी पीछे ले जाना चाहिये। क्योंकि अन्त में यह सभी सभ्यतायें हिमालय के टेथिस सागर के उदर से बाहर आने के बाद की

---

में परमेष्ठि का नाम नहीं दिया गया? वह १०वें मंडल में क्यों गया? दाशराज्ञ युद्ध और शंबर तथा दिवोदास के प्रसंग की ऋचायें भी क्रमबद्ध नहीं है। समस्त ऋग्वेद में बिखरी पड़ी है। वह यही कह रही है कि संकलन काल में जैसे-जैसे सूक्त मिले, इकठ्ठा किये गये। क्रम का (कालानुसार) कोई ध्यान नहीं रखा गया। आवश्यकता है वंशावली के आधार पर यह संकलन व्यवस्थित किये जाने की।

१. देखिये मंथन भाग २ खंड २ वंशावली परिशिष्ट।

२. देखिये ऋग्वेद का १२८ वा सूक्त।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। भारत का अस्तित्व तो हिमालय के जन्म से पूर्व भी था। और यही कारण है कि शेष भारत के अवशेष करोड़ों वर्षों पीछे जाते हैं। कैसे संगति बैठाई जाय इन आधुनिक इतिहासकारों के प्राचीन इतिहास की ?

फिर यह अंग्रेजों द्वारा लिखा गया इतिहास तथा ऋग्वेद के यह वाक्य कि दिवोदास का युद्ध दस्युओं से,[1] दासों से हुआ, वे काले वर्ण के थे इसका अर्थ क्या किया जाय ? परमेष्ठि के पश्चात् और भी २०/२१ पीढ़ी के राजा मिलते हैं। उनका भी तो कुछ इतिहास हो सकता है ? वे सारे भरत थे। भारत के शासक थे।' उनके अपने परिवार थे—प्रजा थी। विष्णु पुराण कहता है भरत वंश का विश्वग्ज्योति नाम का अंतिम राजा हुआ। इसके १७ पीढ़ी पश्चात् दक्ष आत्रेय का जन्म होता है। यह काल पौराणिक काल गणना के आधार पर छठे मन्वन्तर का है। दक्ष अन्तिम प्रजापति है। इसके समकालीन कश्यप नाम का एक प्रजापति और मिलता है। अत्रि तो प्राचीन प्रजापति है। दक्ष का दौहित्र विवस्वान सातवे मन्वतर का स्वामी कहलाया गया है। इसके १५ पीढ़ी बाद ऋग्वेद में दिवोदास का उदय होता है। वह भारत के पश्चिमोत्तर सीमा पर दिखाई देता है। उसका उसके २००।२५० व० पू० भारत के निवासी बने बैठे दैत्यों और दानवों से युद्ध होता है। ऋग्वेद के अनुसार वे न दस्यु हैं न दास। इतिहास की इस भयंकर भूल को अब सुधारना आवश्यक है।

तात्पर्य दिवोदास से ५९ पीढ़ी पूर्व हुआ भरत भारत का राजा था। उसके ३०/३१ पीढ़ी के राजाओं के नाम मिलते हैं। इसके पश्चात् १७ पीढ़ी का इतिहास अज्ञात है। अन्तिम राजा विश्वग्जोति के १७ पीढ़ी पश्चात् उत्तानपाद वाली शाखा में ४८ वीं पीढ़ी में दक्ष आत्रेय का जन्म होता है। और दक्ष से १५ पीढ़ी पश्चात् दिवोदास ऋग्वेद में दिखाई देता है। प्रियव्रत और उत्तानपाद की शाखायें साथ-साथ चली है। आश्चर्य होता है कि भरतों का इतिहास कैसे नष्ट हुआ ? चन्द्र और सूर्य वंश का प्रादुर्भाव दक्ष के १५ पीढ़ी पश्चात् होता है। और सातवे मन्वन्तर में इतिहास के पृष्ठ भूमि से भरत जैसे लुप्त होते है ! उनका नाम लेवा कोई नहीं मिला। एलाम से आये चन्द्रवंशियों (ऐलों) का बोल बाला शुरू हो जाता हैं। वह भी अन्य की धरती पर—भरतों की भूमि पर, दिवोदास जब एलाम से चलकर आता है।

---

१. इसका उचित और विस्तृत विवेचन स्पष्टिकरण के साथ हमने मंथन भाग २ खंड २ में किया है। कृपया पाठक वहीं देखे। साथ ही इसका पूर्व संदर्भ प्रथम भाग में है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इधर शासक अंग्रेजों के द्वारा अपने शासन काल में गुलाम देश के विद्वान और विद्यार्थियों को जो जहर पिलाया गया। भारत में आर्यों का आक्रमण, आगमन दिखाया गया–सिखाया गया, वही इतिहास आज स्वतंत्र भारत का चौथा दशक चल रहा है पढ़ाया जा रहा है, और आश्चर्य तो यही है कि अध्यापक भी पढ़ाये जा रहा है, शिक्षा विभाग में तनिक भी जागरण नहीं आया।

तात्पर्य चन्द्र (ऐल) वंशी दिवोदास सर्व प्रथम भारत में आया है। वह भारत में अर्थात् आर्यों के देश में आया है। भरत नाम के आर्यो के देश में आया है। भारत में आर्य नहीं अपितु आर्य देश में ऐल आये हैं। मंथन माला द्वारा इसी प्रकार प्राचीन भारत के विकृति करण का दिशा दर्शन कराया गया है। दिवोदास के पश्चात् उसी के आमंत्रण द्वारा देव सभ्यता भी आई। उसकी कोई संस्कृति नहीं थी। ऐल और देव दोनों की संस्कृति भारत के लिये प्रतिकूल थी। देवों की सहायता से अर्थात् देवेन्द्र और देव सेना के कारण दिवोदास विजयी बना। चालीस वर्ष तक सतत संग्राम चला। अंत में देवेन्द्र द्वारा शंबर वध कर के दिवोदास ने भारत प्रवेश किया। दिवोदास का काल आज से सात आठ हजार वर्ष पूर्व का मानने में कोई आपत्ति नहीं है।[1]

कहने का तात्पर्य यही कि आर्य देश में ऐल आ गये अर्थात् भारत में दिवोदास का आगमन हुआ। प्रवेश हुआ, शासन हाथ में आया। यहाँ की मूल सभ्यता और संस्कृति का यहीं से-ह्रास होना आरंभ हुआ। जो विस्तृत संस्कृति बाद में भारत में दिखाई दी वह ऐलों की थी। वह चली। इतिहास भी उन्हीं का लिखा गया है। महलों का, राजाओं का, राज परिवारों का।

जो हो, अंत में महाभारत का युद्ध होकर रह गया। प्रथम तो दिवोदास और शंबर के साथ चन्द्रवंशी ययाति के वंशधरों का चन्द्रवंशी क्षत्रवृद्ध के वंशधर दिवोदास से वैर रहा। पश्चात् दानवादि पांच राजाओं के सहकार से ययाति के वंशधर जिनका ऋग्वेद में पंचजन संबोधन मिलता है दिवोदास के पुत्र (?) सुदास के साथ युद्ध हुआ। जिसको ऋग्वेद में दाशराज्ञ युद्ध के नाम से संबोधा गया। दोनों एलाम से आये। दोनों के लिए यह भूमि अपनी नहीं थी। उसको अपना बनाने के लिये आगंतुक आपस में लढे। यह ऐतिहासिकता अवश्य ध्यान में रखना आवश्यक है कि पंचजनों में एक जन (गण) अलग पड़ गया। वह गण पुरु का था। वह पूर्व दिशा की ओर बढ़ता चला गया और ३० वीं पीढ़ी में हस्ति के समय अपने एक नगर की स्थापना कर सका।

---

१. देखिये मंथन भाग २ खंड २ वंशावली परिशिष्ठ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जिसका नाम हस्ति के नाम पर हस्तिनापुर रखा गया। हस्तिन हस्तिनापुर की स्थापना की यह कहा जाता है लेकिन उस नगर का नाम ही नागपुर (नागों का पुर) होना चाहिये उसे ही हस्ति के समय हस्ति नागपुर यानी हस्तिनापुर नाम मिल गया। यही वंश आगे २।३ पीढ़ी पश्चात् होने वाले कुरु के नाम पर कौरव कहलाया। और भारत में सबसे अधिक शक्तिशाली शासक बन गया।

मतलब पंचजनों में एक पुरुजन अलग पड गया। यही गण उनके पूर्वज ययाति को प्रिय था। ऐसी पौराणिक कथा आती है। उसी को आपस में लड़ाकर यदुवंशी श्रीकृष्ण ने मिटा दिया। ययाति की विलसिता, पुत्रों का निष्कासन, उसके विषय में दिया गया पुराणों का विवेचन और ययाति के वंशधरों की १५/१६ पीढ़ी पश्चात् की गतिविधियाँ यह सब ऐतिहासिक दृष्टि से देखना–परखना आवश्यक है।

लगता है भारत वर्ष के प्राचीन इतिहास की प्राथमिक भूमिका समझने के लिये इतना विवेचन पर्याप्त हुआ होगा। प्राचीन पौराणिक वंशावली उन वंशावली में आनेवाले पात्रों के नाम, स्थान, वंश, गोत्र आदि तथा उन पात्रों की सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक गतिविधियाँ जान लेने पर मुझे विश्वास है कि अंग्रेजों द्वारा विकृत किया गया प्राचीन भरतों ( भारत का ) का इतिहास क्रमबद्ध ध्यान में आये बिना नहीं रहेगा। आर्यों का प्रश्न स्पष्ट रूप में हल हो जायेगा और अबतक की सभी उलझने समाप्त हो जायेगी।

अस्तु, जलांजलि पाठकों के हाथों में देते हुये प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ। इसके प्रकाशन के लिये सर्व प्रथम धन्यवाद के पात्र हैं भाई सुरेश कुमार तुलस्यान जो एक सक्रीय युवा कार्यकर्ता है। 'लिओ' ( लायन्स) क्लब के वरिष्ट अधिकारी भी रह चुके हैं। आप ही के माध्यम से श्री नन्दगोपल जी बांगड मेरे जीवन में आये और ऋण का कार्य संपन्न हुआ। श्री नन्दगोपाल जी कला भारती के सभापति हैं। यह ऋण कला भारती द्वारा ही प्राप्त हुआ है। अतः इस संस्करण पर मुझे प्रकाशन के स्थान पर कला भारती का नाम देना पड़ा। अतः सभापति महोदय का मैं हृदय से आभारी हूँ। साथ ही भाई राजनन्दन मिश्र जो एक उत्तम कवि एगं कहानीकार है, युवा है। युवा आक्रोश मंडल के एक उत्साही कार्यकर्ता भी। ऋण के कागजात की गतिविधियां शीघ्रता से संपन्न कराई।

छपाई का कार्य संपन्न हुआ वाराणसी में। निवास रहा नयाघाट गंगातट के श्री गणपति के मन्दिर में। यह एक ऐतिहासिक मन्दिर है। इसका निर्माण श्रीमंत पेशवा श्री अमृतराव रघुनाथराव द्वारा हुआ। आपके वंशधर श्रीमंत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
पेशवा कृष्णराव जी जिनकी इस यात्रा में भेंट हुई । विचार साम्यता आने से चर्चा में बहुत आनन्द आया । आप जियालॉजी के प्रकांड विद्वान है । मेनेजर श्री भावे जी के स्निग्ध स्नेह सान्निध्य में जब तक रहा प्रसन्नता का अनुभव किया । अतः श्रीमन्त पेशवा श्रीकृष्णराव जी के साथ श्री भावे जी का भी आभारी हूँ ।

प्रेस मालिक श्री निगम जी तथा समस्त कर्मचारी वर्ग का भी मैं आभारी हूँ । साथ ही प्रुफ देखने में अंत में श्री उदय कृष्ण नागर जी का सहकार रहा अतः उनके आभार न मानू तो कृतघ्न कहलाऊँगा ।

दूसरी बात, जानता हूँ जहाँ लेखक की अपनी बात पृष्ठों की है वहाँ आमुख लेखक के पृष्ठों का भी विस्तार आवश्यक था । लेकिन यह आमुख अर्थात् मैंने जिसे शुभकामना कहाँ है केवल एक पृष्ठ का ही रहा है । श्रद्धेया महादेवीजी की शारिरीक आयु विषयक अवस्था प्रत्यक्ष सामने थी । वस्तुतः क्षीण शक्ति, इन्द्रियों की असमर्थता तथा उसके के पश्चात् की शिकायतों का सजीव चित्र सामने होने पर भी मानसिक अवस्था की तरुणाई देखकर अवाक रह गया । महादेवीजी कहने लगी कल प्रातः आना, लिख दूँगी । अधिक तो नहीं लिख सकूँगी हाथ इन्कार करता है । एकाद पृष्ट लिखूँगी ; तात्पर्य जीवन में पहली वहली भेंट, लेकिन सब कुछ सहज, सरल और आत्मीयता से सम्पन्न हुआ । एक सच्चे साहित्यिक का साक्षात्कार हुआ । निश्चय ही महादेवी जी अपने नाम के अनुसार प्रत्यक्षदर्शी महा देवी ही देखने को मिली । मैं अहिन्दी भाषी हूँ यह जानकर तो मेरे प्रति उनके मन में और भी अपनापन जागा । जलांजलि के लिए आपकी शुभकामनायें मिली अतः मैं आपका सदा के लिये ऋणि रहूँगा ।

एक बात और कह दूँ जिन प्रांतों में हिन्दी का प्रचार नहीं है और हिन्दी के विषय में लोगों की भ्रांत धारणायें हैं ऐसे प्रांतों के भो लेखकों और बिचारकों ने मंथनकार के काव्य और अर्यवाही विचारों को समर्थन देकर राष्ट्रभाषा के प्रचार का सरल और सुगम माध्यम समझा है । जो हो, मंथन के बहाने राष्ट्र भाषा की जो भी सेवा हो रही है, हिंदी के विद्वान त्रुटियों की क्षमा करके मेरे उत्साह को बढायेंगे यही अपेक्षा है ।

शीघ्रता में शुद्ध लेखन की भूलें रह गई है । अल्प रूप में शुद्धि पत्र दिया भी है । फिर भी पाठक क्षमा की उदारता का परिचय दे यही विनय ।

**गणपति शंकर**

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# मन्थन

## जलांजलि

## पद्य विभाग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तुमसे जीवित जगती है
धर्मग्रंथ इतिहास ग्रंथ है
बदल गया इतिहास यहाँ से
नारी जग पर संकट आया
ऐसा खोया तब से भाखे
कहाँ हुई संस्कार साधना ?
आ पहुँची इतने में कुंती
एक जलांजलि अभी शेष है
कलंक यह धोया न जायगा
पाकर भी उसको खो बैठी
किन शब्दों में स्पष्ट करूँगी
उसे पार्थ ने मारा है
कर में शस्त्र न था उसके
है तो इसमें तू अपराधी
युद्ध में मारा सच्चा पार्थ गया
सभी तुम कुंती जाये
तो सुन बेटे..........

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# पूर्वार्ध

( १ )

जग-जननी ! भारती ! भगवती, अतीत उज्ज्वल है तेरा।
उसे स्मरण करते ही मस्तक, नत हो जाता है मेरा,
माता ! तेरी ममता, क्षमता, भूल सकेगा कौन भला ?
तू ही कहलाई जगज्जननी,[१] कैसे साधे मौन भला.

( २ )

तेरी करनी सबसे न्यारी, भूतकाल बतलाता है
दुनियाका विद्वान[२] कह रहा, तुझसे मेरा नाता है,
टेक घूटने[3] वंदन करता, अतीव श्रद्धा ले मन में
समर्थ तू, प्राचीन[४], छा गई, ऐसे जग-जन-जीवन में.

( ३ )

सच ही तुम सी भाग्यवान है कौन अन्य भू-मंडल पर
धी, श्री, यश का मोहक संगम[५], अन्य कहाँ अवनीतल पर
युग[६] पुरुषों की तू जननी, युग निर्माताओं की जननी
तुमसे ही ऐश्वर्य-सिद्धि पा, धन्य हो रही है अवनी.

( ४ )

भरतों[७] के यश, कीर्त्ति, नीति पर, मात ! धन्य तू कहलाई
आर्य-सभ्यता-संस्कृति की नव धार, यहीं से बह पाई,
मरुथल[८] में भी सुर सरिताने, नव निर्माण दिखाया है
ज्ञान-सिद्धियों ने बीहड़[९] को, जीवन-ध्येय सिखाया है.

( ५ )

इसीलिये तो कर्मभूमि[१०] यह, पावन नाम मिला तुमको
आद्यधरा[११] है एक मात्र तू, सुना रहे बुध जन हमको,
अकर्मण्यता यहाँ मृत्यु है, पौरुष का संकल्प किये
दिव्य कर्म खिलता आया है, मनु को नव संदेश दिये.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६ )

माँ ! तेरी व्यापक महानता, छिपी छिपाये रह न सके
उदारता, वत्सलता, समता, दबी दबायें रह न सके,
भव्य भूत[१२] की सुवर्ण स्मृतियाँ, जब-जब याद दिलाती है
अंतर्पीड़ा असह्य होती, आँखें अश्रु बहाती है.

( ७ )

जगती के इतिहास-पृष्टपर, नाम प्रथम तेरा पावन
जब चाहा तूने तब बरसा, तेरे आंगन में सावन,
प्रसाद[१३] पाकर संस्कारों का तुमसे, जीवित जगती है
माता ! है यह सत्य, मूल[१४] तू, इस जगती की लगती है.

( ८ )

भूतकाल कहता है तेरा, तूने सबको[१५] अपनाया
आया उसको गले लगाया, वह आत्मज ही कहलाया,
ऐल प्रजाने[१६] किन्तु तुम्हारा, बदल दिया इतिहास सभी
नहीं किसी में कृतज्ञता[१७] का, अल्प मिला आभास कभी.

( ९ )

जब से आये ऐल[१८] यहाँ पर, प्रकटी एक न उषा नई
भारत सुरधाम[१९] ही बन गया, बदल हवा की दिशा गई,
चरण दिवोदास[२०] के बन गये, कारण भारत अवनति के
दर्शन दुर्लभ[२१] हुये तभी से, आर्य-सभ्यता-संस्कृति के.

( १० )

नैतिकता का[२२] अभाव उनमें, इतिहासों का वृत्त यही
मंथन पर जो पाते उसमें, लगता तनिक असत्य नहीं,
भाट[२३], चारणों[२४] पुरोहितों[२५] की, अपरंपार रही माया
धर्मग्रंथ-इतिहास-पृष्ट पर, मिलती जिनकी है छाया.

( ११ )

पक्ष[२६] यहाँ दो काम कर गये, अबतक वहीं सुरक्षित है
अहो ! उन्हीं के कारण अबतक, जनता रही अरक्षित है,
निज बचाव[२७] के साधन सब ने, साथ तर्क के जुटा रखें
यह तो कैसे कहा जायगा, हमसे गये नहीं परखें.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १२ )

किन्तु न जागा एक धुरंधर, हितचिंतक[२८] कम मिलें नहीं
टूट न पाई परंपरा[२९] यह, स्वप्न किसी के खिलें नहीं
आनेवाला[30] कष्ट भार ही, ढोता जीवन भर पाया
गया[31] बनाया अमर, सत्य, पर शुभ परिणाम नहीं आया.

( १३ )

बना हुआ है जन-मन विकृत, फलतः अंध-श्रद्धा से
भटक रहा नित नई भ्रांतिमें, छुटा न पिंड अविद्या से,
नित्य नये धर्मका, हो रहा जन्म, साथ ईश्वर का भी
कौन पा सका परंतु उसके, अता-पता घर, दर का भी.

( १४ )

बाढ धर्म गुरुओं की आई, अपना-अपना मत लेकर
अपना-अपना ईश्वर लेकर, प्रलोभनों को नव देकर,
देववाद और धर्मवाद ने, बदला भारत का चोला
अनेकता में हन्त ! बँट गया, समाज भारत का भोला.

( १५ )

दुनिया के मंचपर आज, हम क्या है, क्या थे, कभी कहो ?
डूब भूत में इसका उत्तर, देना होगा उचित अहो ?
आत्म निरीक्षण की बेला कब, पुनः कौन सी अब आनी ?
कब गूंजेंगी कपट, छल रहित, नव जागृति की वह बाणी ?

( १६ )

हमें प्रतीक्षा एक धर्म की, एक देव की है कब की
खेद यही है किसने चिंता, इस विचार को ले कब की ?
इसीलिये 'श्रुति[32], स्मृति[33] का लेखा संशोधन की चाह लिये
जोह रहा है बाट हमारी, वर्षों से नव आस किये.

( १७ )

निश्चय ही कर रही प्रतीक्षा, ग्रंथ[34]-संपदा वह सारी
उनके विकृत होने से ही, बढ़ी भ्रांतियाँ यह भारी
धर्म ग्रन्थ[35] इतिहास ग्रन्थ है, आया यह किसके मनमें ?
आगत[36] गण की गतिविधियों के, है अभिलेख[37] रहे जिनमें.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १८ )

धूमिल इतिहास के पृष्ट है, कैसे ? कबसे ज्ञात करें
बिगड़ गया इतिहास, किन्तु वह, किससे[३८] ? उसकी बात करें,
निश्चय ही यह क्षेत्र अभीतक, हमसे रहा उपेक्षित है
उधार[३९] पर ही निर्भर रहना, कबतक कहो अपेक्षित है.

( १९ )

अब स्वाध्याय स्वयं करना है, देना निज निष्कर्ष हमें
यह सब होगा चिंतन पर ही, करना है उत्कर्ष हमें,
ऐलों[४०] जैसे "दैत्य[४१], नाग[४२], दानव"[४३] भी यहाँ पधारे हैं
भारतियों में विलिन हो गये, और उसी क्षण सारे हैं.

( २० )

ऐल[४४] बाद में आये, लाये निज धरती की परंपरा
खून[४५] बहाया, नगर जलायें, लुटी, दबोची वसुन्धरा,
असत्य इसमें तनिक नहीं है, कहता है ऋग्वेद[४७] यही
खोज न पाये सत्य अभीतक[४८] हम भी, होता खेद यही.

( २१ )

आगत[४९] बासी भोग[५०] भूमिके, कर्म[५१] भूमि यह पावन थी
भीतर, बाहर पवित्र, निर्मल, संस्कारी, मन भावन थी,
पर शासक[५२] बनते ऐलों ने, अपनी रीति चलाई है
फलतः कलुषित[५३] यह धरती भी, शनैः शनैः बन पाई है.

( २२ )

दिवोदास[५४] है ऐल, प्रथम इस पावन भू पर आया है
अरिष्ट बनकर ही छाया है, शाप रूप बन पाया है,
हुये हताहत शंबर[५५] जैसे वीर संतरी सीमा के
दूर देश से देवराज[५६] जब आया, भाग फुटे माँ के.

( २३ )

बदल गया इतिहास यहीं[५७] से, बिगड़ा भारत का भावी
शोध-खोज पर यही मिलेगा, ऐल रहे उत्तरदाई,
नैतिकता[५८] की आद्य धरा यह, आर्य-धरा थी कहलाती
आगत[५९] को अपना ही कहकर, थी अपना मन बहलाती.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २४ )

रंग न उतरा किन्तु खून[६०] का, उसने काम किया अपना
बाजी हार गई नैतिकता, टूटा भरतों का सपना
आगत गण में कहीं पुरुष पर, कोई बंधन[६२] मिला नहीं
नारीजग[६३] पर संकट आया, माँ का दर्शन खिला नहीं.

( २५ )

वार वधू[६४] को सम्मुख पाकर, पत्नी पत्नी नहीं रही
विलासियों ने विषयोन्मद में, विवेकता परखी न कहीं,
बाढ वर्ण संकर[६५] की आई, दूषित होने लगी मही
मानव होकर मानवता की, हृदय रश्मियाँ जगी नहीं.

( २६ )

फलतः युद्ध हुआ, न टल सका, फल तो था अनिवार्य यही
पर कर पाया देश धरा का, वह कोई शुभ कार्य नहीं,
यह आपस का[६६] झगड़ा लेकर डूबा गरिमा रही-सही
ज्वाला में जल मरे[६७] पतंगे, प्रश्नोत्तर है आप वही.

( २७ )

कुरुक्षेत्र के महासमर ने, प्रभाव भारी दिखलाया
युद्ध तीसरा[६८] हुआ भयंकर. इतिहासों में लिखवाया,
आग तीसरे[६९] घर की सुलगी, आकर भारत के घर में
ऐसा खोया तब से भारत, आया प्राण नहीं स्वर में.

( २८ )

उसी युद्ध के एक हुतात्मा, वीर कर्ण की यश गाथा
जिसकी आते याद स्वतः ही, नत हो जाता है माथा,
निरपराध सर्वथा वीर यह, था चरित्र में सदा सही
कुरुक्षेत्र-नरमेध-यज्ञ की अमर आहूति एक यही.

( २९ )

चरित्र चित्रण उसका मैं भी, अबतक करता आया हूँ
तटस्थ[७०] बनकर चिंतन अपना, मैं सम्मुख रख पाया हूँ,
कई भ्रांतियाँ[७१] दूर की गई, किंचित् सार निकाला है
अतः बन गई सहज सरलता से यह मंथन[७२] माला है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३० )

अब यह अंतिम पुष्प, 'जलांजलि' पूर्णाहूति इस मंथन की
मित्रनिष्ट उस परम वीर की, कुन्ती के आंचल धन की,
जिसके कारण माँ की भूखी ममता, हरदम मूक रही
जीवन उद्यान में सुनाई, दी कोयल की कूक नहीं.

( ३१ )

मात शारदे ! मधुर मधुरतम, यह भी शेष प्रवाह बहा
वीणा वादिनी ! यों तो तेरे, है मुझपर उपकार महा,
तेरी ही अमुकम्पा पाकर, पुष्प मनोहर पाँच[७३] खिले
यह[७४] भी वितरे गंध चहुँदिशि, पूर्ण सफलता इसे मिले.

( ३२ )

रहा पात्र यह पूर्ण उपेक्षित विजयी वीरों के कारण
उगते सूरज के पुजारियों,[७५] भाट, चारणों के कारण,
पर मानव दरबार न अन्तिम निसर्ग के घर भेद नहीं
भले न्याय मानव न दे सका, है उसका अब खेद नहीं.

( ३३ )

जो हो एक स्वजन[७६] की हत्या, केशव के द्वारा होती
और अन्त में एक लाल को, एक अभागिन[७७] है खोती,
उसे जलांजलि देकर कवि अब निज मन को बहलाता है
देकर धीरज माँ के मन को, धर्मराज सहलाता है.

( ३४ )

श्राद्ध धार्तराष्ट्रों[७८] का करने श्रद्धा लेकर के मन में
पुण्य कमा लूँ अब इतना ही, अन्तिम मैं भी जीवन में
अभिलाषा ले यही युधिष्टिर आया सुरसरिता[७९] तट पर
दुःख, शोक अन्तर में छाया, विषाद था मानस पटपर.

( ३५ )

जल अंजलि में लिये खड़ा था, शांत, बीच सरिता धारा
मानस चित्र पटल पर उभरा, युद्धि-चित्र क्षण में सारा,
मारो, काँटो, कटा, गिरा, यह मरा, कान में स्वर आये
दृश्य हुआ साकार घना तो, नेत्र धर्म के भर आये.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३६ )

कितने राज सिंहासन[८०] सूने हुये, रहे जो बड़े-बड़े
अट्ठारह[८१] दिन में ही केवल, मिले धूल में खड़े-खड़े,
योद्धा जीवित नहीं एक भी, सिवा पांडवों[८२] के देखा
लिखा जायगा इतिहासों में, इस रण का कैसा लेखा.

( ३७ )

सभी कहेंगे धर्मराज ! रे ! अपना ही कुल संहारा
कौन समर्थक होगा मेरा, विचार करके मैं हारा,
कहीं उठेंगी उँगली, आखें कहीं कहेगी कुछ सजला
जिस पथ से जाउँगा होगा, एक नहीं उनमें उजला.

( ३८ )

काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह पर, मुझसे अंकुश लगा नहीं
धधक उठी ज्वाला भीतर तो, उसे दबा मैं सका नहीं,
हन्त प्राप्त स्थितियों का मुझसे, हुआ उचित अभ्यास नहीं
दुर्लभ नर जन्मका हुआ यह, मुझसे ही उपहास नहीं ?

( ३९ )

आज युद्ध पूर्तिपर लग रहा, अब जीवन में त्राण नहीं
अंग शिथिल क्यों हुये न तब ही, निकले तन से प्राण नहीं,
धर्मभीरु होकर विवेक भी क्यों जागा पार्थ-सा[८३] नहीं ?
धर्म ! कहो तो, हुआ सभी यह, बनकर के स्वार्थांध नहीं.

( ४० )

निश्चय ही दुर्भाग्य देश का, जोर कर गया, सार यही
इसीलिये भी हुआ किसी से, कहीं रोग-उपचार नहीं,
द्वापर[८४] आया है समाप्ति पर, मानव ने कुछ भी न किया
आनेवाली संतानों को, हिंसा का ही मंत्र दिया.

( ४१ )

यह आपस का कलह, हमारी विजय, राष्ट्र लभार्थ नहीं
लाखों प्राणों को लेकर भी, होगा लाभ यथार्थ नहीं,
होता यदि उपचार रोगपर, रोगी जीते, रोग नहीं
रोगी ही तो यहाँ मरे हैं, किन्तु मिट सका भोग नही.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४२ )

यही कहेगा भावी युग का वृत्त-सार लिखनेवाला
अंकुश कौन रखेगा उसपर, ? सत्य नहीं छिपनेवाला,
कैसे होगा सुधार, चिंता खाये जाती एक यही
हानि[८५] हुई कम नहीं, मरे है रुग्ण, रोग[८६] है जीवित ही.

( ४३ )

कहां हुई संस्कार साधना ? होता यह अन्यथा नहीं
इन ऐलों से प्राप्त कर सकी, यह धरती धन्यता नही,
मानव मर्यादाको भूला मानव, देखा किया यही
इसीलिये भी रणचंडीने, परिचय अन्तिम दिया यही.

( ४४ )

मूली, गाजर, घास मानकर, इन्सानों को काट दिया
वर्षा सी रक्त से धरा को, इन्सानों ने पाट दिया,
यज्ञ महा नरमेध हुआ यह, इतिहासों में अति भारी
ऐल न सुधरे अल्प अभीतक, यही कह गई महतारी.

( ४५ )

मनुज नीति अंतमें घिनौनी चौसरबाजी सिद्ध हुई
कब आयेगी जनमानस में वह मंगलमय प्रात नई ?
कोई चिन्ह न दिया दिखाई, अंधकार बढ़ने लगता
कुरुक्षेत्र का युद्ध शाप बन, लगता मुझको अब ठगता.

( ४६ )

शांति, सुरक्षा, विकास का अब, हम कैसे प्रतिबंध करे ?
बिगड़ा ही सब हाथ आ गया, कब, कैसे आनन्द वरे ?
कौन उपाय करे जन हितका, एक सूझता तर्क नहीं
सब कुछ तो हो गया अस्त है, दुर्लभ सुखका अर्क नहीं ?

( ४७ )

कैसे होगा अंत दुःखका, दुविधाओं में डूब गया
युद्धपूर्व मैं बहुत सुखी था, अब जीवन से ऊब गया,
पाप कमाया कितना मैंने, कब छुटकारा पाऊँगा ?
निकल नरक से स्वर्ग धाम मैं, कैसे ? किस दिन जाऊँगा ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४८ )

इन्हीं विचारों में बन पागल, व्याकुल मन को सहलाता
यह भारत का नया अधीश्वर, अपने मन को बहलाता,
निकल आ गया जल के बाहर, श्राद्ध क्रिया पूरी कर के
पूर्ण हुआ कर्तव्य, मान, धुल गये पाप जीवन भर के.

( ४९ )

आ पहुँची इतने में कुन्ती निकल शिबिर से आंधी सी
पास पुत्र के खड़ी रही, कुछ घबड़ाई, अपराधी सी,
थी धरती पर दृष्टि लगाये, दोनों आंखें भरी हुई
निश्चय ही था सत्य यही, थी मनमें भी कुछ डरी हुई.

( ५० )

औपशमिक[८७] उपचार चाहिये, यही जान बेटा बोला
मात्र औपचारिक शब्दों में, अपना मन उसने खोला,
"व्यर्थ शोक यह, अब रोने से, भला हाथ क्या आयेगा ?
जाने वाले गये, न वापस, एक अभी आ पायेगा.

( ५१ )

सभी स्वर्ग में चले गये हैं, भाग्यवान ही कहलाये
जीवन सार्थक हुये सभी के, करनी का फल ही पाये,
वीर कर्म कर गये सभी, गति सबने वीरों की पाई
वीरव्रती थे, सब की जननी, वीर प्रसू ही कहलाई.

( ५२ )

एक अभागा हूँ मैं जिसने, राज्य-लोभ का भार लिया
विवेक खोया, हिंसा ही, की, और स्वार्थ साकार किया,
क्या क्या खोया नहीं युद्ध में, कैसे गणित छुड़ाऊँगा ?
कौन करेगा क्षमा, ताप यह कैसे मैं सह पाऊँगा ?,,

( ५३ )

बोली माता, "तेरी उलझन उचित, किन्तु अब व्यर्थ रही
इतिहासज्ञ कहेंगे निश्चित, इस जय में कुछ अर्थ नहीं,
सभी शून्य दिख रहा, किसी में आज मिला उत्साह नहीं
ऐसे जय की मैंने की थी, कभी स्वप्न में चाह नहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५४ )

नायक[८८] को भी तनिक निहारो, उनका भी है हाल यही
जिसने यह नेतृत्व किया है, वह भी मिल निहाल नहीं,
भरी हृदय में ग्लानि, दग्ध मन, धारा नकली बाना है
केशव-मन को क्या अबतक भी, गया नहीं पहचाना है ?

( ५५ )

यह जीवन भी क्या जीवन है ? जीवन इसका नाम नहीं
वर्ष त्रयोदश रही बिलखती, था मन को आराम नहीं,
जब से आये हस्तिनगर में, सांस शांति की ले न सके
अंत हुआ संग्राम निरर्थक, निदान सार्थक कर न सके.

( ५६ )

अंदर-बाहर आत्मक्लेश-उपलब्धि, सिद्धि शुभ अन्य नहीं
सच कहती हूँ युद्ध अनंतर, हुई मात तव धन्य नहीं,
क्या सोचा था, और हुआ क्या, शमता मन का दाह नहीं
हन्त ! किसी ने ली अबतक भी, मेरे मन की थाह नहीं”

( ५७ )

कहा धर्म ने “भूतकाल स्मरणीय नहीं, अब मारक है
वर्तमान ही सर्व श्रेष्ठ माँ ! निश्चय ही अब तारक है,
चाह हुई साकार नियति की, इसमें अपना कुछ न कहो
होना था वह हुआ सभी अब, व्यर्थ शोक में तुम न बहो.

( ५८ )

करो साधना अब आत्मा की, अन्य पंथ उपयुक्त नहीं
नश्वर तन, जीवन में फँसकर, होगी आत्मा मुक्त नहीं,
इस विनाश पर ताप मानसिक बढ़ा, हृदय मेरा जलता
इस हिंसा पर मेरा मन ही, माता आज मुझे छलता.

( ५९ )

पर मैं भी क्या करूँ, बताओ ? काम नियति ने आप किया
मुझे दोष का पात्र बनाया, मेरे माथे पाप दिया,
प्राप्त करो जय,[९०] शत्रु मिटाओ, तुमने भी सद्बोध दिया
नहीं मानता था मन, फिर भी, सिद्ध हुआ, प्रतिशोध लिया.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


तज मानवता लाचारी वश, था जीवन ने मोड़ लिया
किन्तु आज तुम इतनी व्याकुल ? साहस कैसे छोड़ दिया ?
माता ! अश्रु तुम्हारे, मेरे मन को खाये जाते हैं
यह विषाद के भाव तुम्हारे, मुझे डराये जाते हैं.

( ६१ )

इतना द्रवित तुझे होना था, तो होना था पहले ही
हिंसा के अतिरिक्त बताना था, पथ कोई पहले ही
यह तो रण है, रण के पागलपन का है परिणाम यही
तेरे मन की कोमलता तो, अत्र आयेगी काम नहीं.

( ६२ )

अब लगता अपराधी मैं हूँ, मैंने कुल संहार किया
और अंत में निज माताको, स्वयं व्यथा उपहार दिया,
नहीं समझ में आता कुछ भी, देख अवस्था यह तेरी
केशव[९१], कृष्णा के आगे सच, बात न एक चली मेरी."

( ६३ )

"बोली जननी—"निज मन में तुम, व्यर्थ वेदना भरो नहीं
व्यथा ग्रस्त हूँ निश्चय ही, पर, व्यर्थ कल्पना करो नहीं,
तुमने जो कुछ किया, उचित ही किया, समय की मांग वही
मैंने ही केशव[९२] के द्वारा तुम्हें कहा था, करो यही.

( ६४ )

क्षत्राणी हूँ, इसीलिये भी, था तुम को आदेश[९३] दिया
माता का कर्तव्य यही था तब तो, मैंने शेष किया,
झुको न अन्यायी के सम्मुख, करो सामना डरो नहीं
निर्भय बनकर करो युद्ध ही, कायरता को वरो नहीं.

( ७५ )

यह मेरे ही शब्द, स्मरण है, यथा समय[९४] थे कह डाले
बने न निर्बल अब भी बेटे, भले मृत्यु को अपना ले,
किन्तु लजाये नहीं कोख मम, बार-बार था जतलाया
कोई रोष न तुमपर, तुमने 'कहा'[९५] वही कर दिखलाया.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६६ )

हूँ निश्चय अति विकल आज, पर उसका कारण[१६] यही नहीं
'एक जलांजलि' अभी शेष है, आई कहने तुम्हें यही,
प्रसन्न मन से वह दे डालो, शेष यही सत्कार्य रहा
रह जाओगे ऋणी अन्यथा, एक यही अब कार्य महा.

( ६७ )

वह भी कर दो, मुक्त बनो, मैं यही बताने आई हूँ
जलांजलि सामान्य नहीं वह, अंत समय पछताई हूँ,
तेरे हाथों हो यह सब अब, अंतिम इच्छा एक यही
मनको शांति दिलाने की अब अल्प औषधि अन्य नही.

( ६८ )

तुझपर भी है कुछ ऋण उसका, होंठ कपेंगे बतलाते
किन्तु मौन अब रह न सकूँगी, अपराधी[१] के भी नाते,
सभी तुझे अब कह देना है, नहीं बने अब चुप रहना
शांत चित्त से सुन ले तू भी, एक अभागिन का कहना.

( ६९ )

इसके पहले प्रश्न करूँगी, उत्तर देना पुत्र सही
धर्मभीरु धर्मज्ञ तज्ञ तुम, यही तुम्हारी ख्यात रही,
यही एक विश्वास लिये मैं, बटोर साहस हूँ आई
तुमने अर्जित किये पुण्य की, आज कसौटी हूं लाई.

( ७० )

पुत्र ! कहो, क्या नीति[१८] युद्ध की, कहे वीर को मात्र यही
किसी तरह से शत्रु मिटा दो, नहीं देखना पात्र कहीं ?
कहीं हुआ है न्याय, किन्तु अन्याय हुआ है कहीं-कहीं
हर्ष किसी का, अंतर पीड़ा किसकी, जाती नहीं सही.

( ७१ )

मारा ऐसा वीर एक, जो अद्वितीय था, लासानी
ऐसा हीरा अमूल्य था वह, कहीं नहीं उतरा पानी,
जीवन भर की गई उपेक्षा, देख सभी चुपचाप रही
अंत समय भी यही हुआ कुछ, चुभती मन को बात यही.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ७२ )

पर अपराधी मैं हूँ इसमें, अन्य किसीका दोष नहीं
हुई भूल मुझसे ही अबतक, रहा मुझे ही होश नहीं,
वहीं वेदना जला रही मन, तोष मिला, दिन रैन नहीं
पश्चाताप हुआ बहुतेरा, नहीं मिला सुख चैन कहीं.

( ७३ )

पाप हुआ यह मेरे हाथों, कुरेदती मन व्यथा यही
मेरे कारण मृत्यु हुई वह, लिखी जायगी कथा यही,
निश्चित वह निष्पाप, 'पाप तो मेरा,' मैंने घात किया
बना भोग वह मेरे कारण, नहीं किसी का साथ लिया.

( ७४ )

अन्य सभी दुख फीके लगते, स्मृति में उस मन भावन के
नित्य तोड़ती आई मैं ही, सपने अपने सावन के,
आया उसको जाना ही है, टले मृत्यु का दिवस नहीं
उसके[९९] जैसी मृत्यु न आये किसे, निवेदन एक यही.

( ७५ )

मृत्यु मार्ग से नहीं गया वह, मृत्यु दिवस भी न था वही
पुत्र! मान्यता, ऐसी मेरी, चुभन हो रही वृथा यही,
युद्ध-नियम भी गया न पाला, जहाँ-तहाँ छल, कपट मिला
कलंक यह धोया न जायगा, ऐसा ही सब कार्य खिला.

( ७६ )

यों तो इसमें गये स्वजन[१००] भी, पर न हुआ संताप कहीं
नहीं हिलाया हृदय किसी ने, नहीं हुआ तिल ताप कहीं,
वही एक मूरत है ऐसी, जिसने चैन चुराया है
बाद मृत्यु के अब तो उसने, दिन भी रैन बनाया है.

( ७७ )

जीवन भर ही चुपके चुपके, उसने मुझे रुलाया था
पत्थर मन तो था मेरा ही, मैंने उसे भुलाया था,
जब कि न सचमुच भुला सकी, पर नित्य उपेक्षा की उसकी
अवस्था न बतला सकती मैं, अपने अंतर्मानस की."

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ७८ )

"कहा धर्म ने किन्तु कौन वह वीर, उसे किसने मारा ?
शत्रु पक्ष या मित्र पक्ष का ? स्पष्ट करो मां ! वह सारा,
कौन मृत्यु के पूर्व गया वह, विह्वल किसने तुम्हें किया ?
कौन विसर्जन प्राण कर गया विषण्ण किसने तुम्हें किया ?

( ७९ )

कहो कौन वह महाभाग है, जो अब तुम्हें रुलाता है ?
सुखज्ञ इतना कौन, स्मरण यह किसका तुम्हें जलाता है ?
कहो अंब ! वह हृदयशील है कौन ? तनिक तो स्पष्ट करो
पुण्यश्लोक वह कौन ? स्पष्ट कहने का जननी ! कष्ट करो.

( ८० )

विनय यही, जो हो कह डालो, किसने उसका अहित किया ?
हे कल्याणी ! कौन आर्य वह, जिसने तुमको व्यथित किया ?
वन्दन शत् शत् उस महान को, जिसका स्मरण किये माता—
बिलख रही, दे नाम बता वह, विलंब अब न सहा जाता.

( ८१ )

प्रिय, अप्रिय जो कुछ भी हो, बतलाओ मां ! शीघ्रता करो
कौन सुजन वह तर्क न चलता, मेरी भी व्यग्रता हरो,
किसने व्याकुल तुम्हें बनाया, है यह किसकी अहो ! व्यथा ?
कौन भला वह, बतलाओ मां ! है यह किसकी करुण कथा ?"

( ८२ )

बोली माता, "सच तो यह है, वह साधारण व्यथा नहीं
किन शब्दों में सहज बताऊँ ? ऐसी भी वह कथा नहीं,
नहीं शब्द मिलते, न शक्ति है, जो करलूँ झट उच्चारण
'नारी-जीवन-रामायण' का, कैसे हो सब पारायण ?

( ८३ )

लाल ! सुनो, उसकी कीमत अब, आज हो रही, खेद यही
क्या करती, लाचार घनी थी, दिया किसी को भेद नहीं,
और आज तो स्वप्न बना वह, केवल स्मृतियाँ सता रही
पाकर भी उसको खो बैठी, लेखा-जोखा मिटा नहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ८४ )

उसके जाते रहा-सहा भी, जीवन का आनंद गया
तुम्हें राज्य मिल गया, मनाओ तुम सारे आनंद नया,
मैं अब शोक मनाऊँगी, मन मारे ही रह जाऊँगी
लिखा गया भाग्य में यही वह, केवल अश्रु बहाऊँगी.

( ८५ )

अब तो जीवन भार रूप है, जीवन, जीवन नहीं रहा
निश्चित ही अब बोझ बना 'तन', आगे जायेगा न सहा,
पुत्र ! लुट गई रही-सही भी, अब तो उसके जाने से
लाभ न होगा इसीलिये अब, उसका नाम सुनाने से.

( ८६ )

किन्तु उसी आत्मा का बेटे ! ऋण अब हमें चुकाना है
वह अधिकार तुम्हें भी है कुछ, निज कर्तव्य निभाना है,
इससे अधिक नहीं कह सकती, कहने की भी शक्ति नहीं
ले निश्चलता आई हूँ पर, साथ स्वरों की युक्ति नहीं."

( ८७ )

कहते आसूं बह निकले, रुक गई, हो गया रुद्ध गला
शब्द अड़ गये भीतर ही, तो बढ़ता दुःखावेग चला,
दुःस्सह स्थिति यह देख मातु की धर्मराज भी घबराया
प्रश्न किया, पर मनही मनमें, दृश्य देख यह पछताया.

( ८८ )

अतः कह गया "मात क्षमा हो, मेरी भी लाचारी है
निश्चित तुम कुछ रहस्य लाई, समझ गया, दुख भारी है,
कुछ तो हो स्पष्टता, सुनाओ, भले कथा वह अनय रही
कह डालो क्या कहने आई, करो भार कम विनय यही."

( ८९ )

कंपित स्वरमें बोली कुंती "बेटे ! कहा नहीं जाता
प्रयत्न करती हूं मनसे, पर, स्वर होंठों तक ही आता,
यों तो कहने आई हूं सब, पर कहते घबराती हूं
किन शब्दों में स्पष्ट करूंगी, उक्ति न कोई पाती हूँ"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ९० )

कहा धर्मने "जैसे भी हो, कहो, सुने बिन शांति नहीं,
मैं बेटा हूं, अन्य नहीं हूं, रखना मन कुछ भ्रांति नहीं,
निश्चय ही मृत वीर निकट का, होता अब विश्वास यही
यों दिखती शोकाकुल तुम भी, अनायास अन्यथा नहीं.

( ९१ )

बार-बार अब विनय यही, संकल्प पूर्ण कर लो अपना
क्या कहने आई हो कह दो, मन हलका कर लो अपना,
कहो करूँगा वही, रहोगी हर्षित जिससे, धर्म वही—
एक पुत्रके नाते होगा, अब मुझसे सद्धर्म वही."

( ९२ )

बोली माता "बेटे ! मैंने, आते ही निज व्यथा कही
सहज, सरल शब्दों में कहने, जैसी तो वह कथा नहीं
अब केवल संकेत यही है, उसे पार्थ ने मारा है
यही सुना हैं मैंने, उसका अर्जुन ही हत्यारा है.

( ९३ )

यही नहीं उसके मरने पर, तुमने हर्ष मनाया है
घी के दीपक जले शिबिरमें, यह सुनने में आया है,
हर्षोन्मत्त हुये तुम सारे, उसको मारा यह सुनकर
साथ कृष्ण के सब शामिल थे, उस उत्सव में हिलमिलकर."

( ९४ )

कहा धर्मने "आह ! अन्तमें सुना गई तुम विचित्र हो
उर की व्यथा, कथा का बदला पर तुमने अब चित्र नहीं ?
यह क्या बोल गई हो माता ! उसे धनंजय ने मारा ?
उस प्रिय आत्मा का भ्राता ही कनिष्ट मेरा, हत्यारा ?

( ९५ )

हन्त ! अंतमें निश्चित अप्रिय, सुना गई, बढ़ गई व्यथा
अस्तु, बताओ कौन सु-कुल वह, किसकी यह संताप कथा ?
चिंतित हूं, अविलंब कहो, वह कौन, कहां का बासी है ?
जिसके लिये तुम्हारे मनमें, छाई घोर उदासी है.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

( ९६ )

कह किसका सिंदूर धुल गया, कौन बनी विधवा बतला ?
कौन अनाथ बना है, किसपर कह अर्जुन का बाण चला ?
किस कुलकी वह कह शोभा था, हाल सुनाओ उस जनका ?
किसका जाया यदि जीवित है, रूप कहो उस आनन का ?

( ९७ )

आया रोना सुन कुन्ती को, रूप बता उस आनन का,
कांटो तो अब खून नहीं, सुन, 'कह बेटा है वह किसका',
भला कहेगी क्या अब कुन्ती, 'वृत्त यही ले वह आई'
प्रश्न किया जब वही पुत्र ने, घबड़ाई लख कठिनाई.

( ९८ )

पागल सी हो गई अवस्था, अजब नियति की यह माया
सम्मुख अब उसके आँखों के पल में अंधियारा छाया
कहना होगा क्या इसको भी 'अग्नि परीक्षा नारी की'
ऐलवंश शासित संस्था के, भारतीय महतारी की."

( ९९ )

बुरी फँसी थी भोज-सुता, सुधि भूल गई अब तन मन की
क्या देगी इसका उत्तर, थी विकल, विलोडित जीवन की,
ज्ञात पुत्र को यही नहीं था, किस दुविधा में है माता
सहज कह गया, बोलो जननी, विलंब अब न सहा जाता.

( १०० )

अंब ! भ्रांत हूँ मैं पहले ही, एक भ्रांति[१०४] तुम बढ़ा गई
राज्य क्या मिला, व्यथा मिली, रण चंडी किसको लड़ा गई ?
नही हृदय में शांति, मरे आत्मीय, लाभ क्या दिख आया
पाप, वेदना, क्लेश बटोरा, वृत्त यही तो लिखवाया ?

( १०१ )

मन में बोला "हुई अवध्यों[१०५] की भी हत्या, सत्य यही
राज्य लोभ वश हुआ सभी यह, इसमें तनिक असत्य नहीं,
क्या अच्छा होता जीवन में, आते कृष्ण, न यह होता
नहीं सुलगती आग, जलाती जीवन, सुध-बुध मैं खोता.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १०२ )

न्यायोचित था यही कि हम भी, पंथ भरत[१०६] सा अपनाते
बिना द्यूत के इन्द्रप्रस्थ हम, दुर्योधन को दे जाते,
करते जीवन की व्याख्या, दुनिया की व्याख्या हम करते
जीवन है दो दिन का मेला, कुछ आदर्श नया धरते.

( १०३ )

शकुनि[१०७] खेलने बैठ गया तो, स्मरण कृष्ण[१०८] का किया नहीं
विवेक खोकर तब मैंने ही, पांसा कर में लिया नहीं ?
सर्वस हार गया पल भर में, होश संभाला गया नहीं
पांचाली[१०९] के सरल प्रश्न पर, मौन रहा, स्वर दिया नहीं.

( १०४ )

आगे जो कुछ घटित हुआ, वह विनाश का आमंत्रण था
दोष किसी को क्या दूं निजपर, मेरा नहीं नियंत्रण था,
हन्त ! द्यूत क्रीड़ा के कारण, यह भारी संकट आया
नहीं समझ में सका युद्ध में, काम कौन उद्भट आया.

( १०५ )

निश्चय वज्राघात हुआ है, लगता माता के मन पर
पर मैं भी विक्षिप्त नहीं कम, आते दोष धनंजय पर,
किसकी आहूति पड़ी, न मां से जाता किसका विरह सहा ?
लगता जननी के मानस में, था उसके प्रति स्नेह महा.

( १०६ )

किन्तु, कौन वह ? कैसे जानूं, जब तक खुलता भेद नहीं
हत्यारा पार्थ है इसलिये भी, होता कम खेद नहीं,
अब तो होगा उचित यही, मां रहस्य सारा स्पष्ट करे
दुविधा में डाले न मुझे भी, सब कहने का कष्ट करे.

( १०७ )

अतः कहा "मां ! किसके कारण, हृदय तुम्हारा व्याकुल है ?
वंश, गोत्र, कुल उसका सुनने को, मेरा मन आतुर है,
निश्चय कोई अनिष्ट लक्षण, देख रहा हूं मँडराता
लेखपत्र क्या विधि विधान का, मेरी समझ नहीं आता.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १०८ )

होगा आविष्कार अमंगल का ही, इसमें निश्चित है
सहर्ष है स्वीकार मुझे भी, पापों का प्रायश्चित है,
एक ओर संहारा कुल को, असह्य उसका ताप हुआ
एक ओर यह व्यथा तुम्हारी, यह दुगना संताप हुआ.

( १०९ )

कहो यथावत यही विनय, मनका न तुम्हारे पता चला
पर यह भी सच, समर धरापर, होता किसका कौन भला ?
किसके हाथों कौन मरेगा, यह भी मुश्किल है कहना
शत्रु देख कर उठता ही है, वहाँ कठिन है चुप रहना.

( ११० )

इच्छा को दे मान सुयोधन[११०] के, यह रण सानंद किया
शूर वीरता का ही परिचय, दे सबने आनंद लिया,
माता ! रण के पागलपन ने, खड़ा दृश्य विद्रूप किया
कह न सकेंगे किसने, किसका, कैसे किस पल प्राण लिया.

( १११ )

यह भी संभव, किसी वीर पर, स्नेह अतीव तुम्हारा हो
और नहीं आश्चर्य युद्ध में, वही पार्थ ने मारा हो,
तो दो उसका दंड मुझे अब, मैं भोगूंगा वचन यही
और कहूँ क्या तुम्हीं बताओ ? मानो मेरा कथन सही.

( ११२ )

निश्चित मैं ही हूँ अपराधी अब, मैंने विश्वास किया
धर्मजयी हो मानवता का, मैंने ही उपहास किया,
मेरे कारण व्यथित आज तुम, भली भाँति यह जान लिया
पर बतलाया नहीं पार्थ ने, देह दंड वह किसे दिया ?"

( ११३ )

बोली माता "तनिक धीर धर, सभी कहूँगी तात ! वही
तेरा धीरज छूट गया, अविलंब कहूँगी उचित वही,
किन्तु शेष कुछ कह लेने दे, उतना सुनना आज तुझे
मेरे बेटे ! कम करने दे, अपने मन का बोझ मुझे.

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ११४ )

यह कैसा आश्चर्य आज हम, सभी सभ्य कहलाते हैं
पर पशु से कम नहीं, यही तो दुनिया को दिखलाते हैं,
प्रश्न यही है साथ जन्म के, मृत्यु लिखाई जाती है
मृत्यु दिवस निश्चित होता, वह आकस्मिक कब आती है ?

( ११५ )

बर्बर युग के भाव लिये ही, आज जी रहा है मानव
संस्कारी तो कहलाता पर, करनी में दिखता दानव[111]
कैसे सभ्य उसे कह दे तब, क्या होता यह प्रश्न नहीं ?
हिंसक[112] पूजा जाता, यह तो मानवता का चिह्न नहीं.

( ११६ )

हम सब वही पुराने अबतक, गये रक्त संस्कार नहीं
अपने तक ही देख रहे, दृष्टि में अन्य संसार नहीं,
किये कराये पर पछताना, बाद सभी को आता है
किन्तु लाभ क्या खेती चुगकर, जब पंछी उड़ जाता है.

( ११७ )

बतलाओ तो कुरुक्षेत्र पर, इतना शोणित बहकर भी
क्या पाया बदले में हमने, दुख जीवन भर सहकर भी,
मृत्यु अटल है तनधारी की, इसमें तनिक नहीं शंका
किन्तु महँगा पड़ा मुझे ही, पुत्र ! युद्ध का यह डंका.

( ११८ )

हृदय टटोलो, बोलो, क्या था मरना सबको लिखा यहीं
एक साथ[113], इतनी संख्या में, यह शंका तो वृथा नहीं ?
लाल ! कई आत्मायें उनमें, अरे ! मृत्यु[114] पूर्व ही गई
अतः रहेगी नित्य भटकती, मृत्यु[115] दिवस तक निश्चय ही."

( ११९ )

बीच कह गया धर्म "कृपा कर यो विषयांतर करो नहीं
बिना कामकी बातें करके, मन विषाद से भरो नहीं,
पहले उसका नाम बता दो, इधर-उधर की बात न हो
भरो न मेरे भावुक मनमें, और अधिक तुम आग अहो ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १२० )

बोली माता "व्यर्थ शब्द मैं, बोली एक न अबतक भी
विषयांतर भी नहीं हो रहा, और करूँगी नहीं कभी,
मैं देने वक्तव्य न आई, विपर्यास यों करो नहीं
गया वीर वह मृत्यु पूर्व ही, विषय चल रहा एक वही.

( १२१ )

एक उसीने मेरे मन को, अब आहत कर डाला है
मानवता का सरल नियम भी, गया न रण में पाला है,
मृत्यु दिवस पूर्व ही गया वह वीर, लाल यह सुन लेना
अब तो इतना ही सुन लेगा, फिर चाहे सब गुन लेना.

( १२२ )

लो, कारण भी बतलती हूँ, कर में शस्त्र न था उसके
उस निःशस्त्र[११६] पर बाण चले हैं, निर्दय बन कर अर्जुन के,
यों तो पार्थ खड़ा था, केशव ने ही था लाचार किया
बाण निहत्थे पर बरसा कर, मन-धारा साकार किया.

( १२३ )

तब कैसे मैं मानूं उसकी, मृत्यु तभी थी लिखी हुयी
रण क्षेत्रपर हन्त किसी में, धर्म-भावना दिखी नहीं
शस्त्र निहत्थे पर चलना, क्या धर्म-कार्य कहलाता है ?
धर्म इसे ही कहकर मानव, कैसे मन बहलाता है ?"

( १२४ )

सुनकर के यह कथन, धर्म के होश ठिकाने नहीं रहे
निःशस्त्र मारा गया पार्थ से, शब्द गये यह नहीं सहे,
निःशस्त्र मरने वाले सारे शनैः शनैः सम्मुख आये
सभी अग्रणी,[११७] बढ़े-बढ़े थे, जिनसे थे सब घबड़ाये.

( १२५ )

निःशस्त्र केवल दो ही मारे गये पार्थ के ही द्वारा
एक भीष्म है, एक कर्ण है, स्पष्ट चित्र उभरा सारा,
"पर माताके मन में क्या है, सुने बिना निर्णय इसका—
कैसे लूं मैं?" कैसे जानूं, मां को दुःख हुआ किसका ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

( १२६ )

हीन दीन बन, अतः कह गया, तव मुखपर की व्याकुलता
डरा रही है, शांति न मन को, जबतक भेद नहीं खुलता,
अंब ! कहो भी कौन सुभट वह ? छलो मुझे अब तनिक नहीं
जननी ! दे दो उसका परिचय, तड़पन अब यह क्षणिक नहीं.

( १२७ )

कहो कौन वह निःशस्त्र मारा, निर्दय बनकर अर्जुन ने ?
किसकी हत्या हित उकसाया था अर्जुन को केशव ने ?
कहो कौन वह पुण्य पुरुष था ? पा न सका जो अभय कहीं
नाम बता दो उसका माता ! व्यथित मत करो, विनय यही."

( १२८ )

बोली माता "उसे किसीसे, आशा नहीं अभय की थी
वह तो आप स्वयं निर्भय था, उसकी वृत्ति सदय की थी,
अरे ! अभय तो तुम्हें मिला है, सदा सर्वदा केशव से
तुमने पाया सभी कृष्ण के, बुद्धि कुशल धन वैभव से.

( १२९ )

उसका अपना ही वैभव था, औ औ' अपना ही पौरुष था
उधार बल, बुद्धि पर न जीवन, मूर्तिमंत वह पौरुष था,
वह आजीवन उदार ही था. मृत्यु समय भी कब बदला ?
बैरी मन को बैरी मन का, कब बतलाओ पता चला ?

( १३० )

उसका अपना बल था, अपने बलपर वह जीता आया
हरदम की नेकी बदले में, कालकूट पीता आया,
मित्रनिष्ठ था, किन्तु अंत में, कब अवसर[११८] उसने पाया ?
जिससे चुका सके उस ऋणको, अन्त अभागा[११९] कहलाया.

( १३१ )

जबतक आया नहीं वीर वह, समर धरापर, ज्ञात किया
तुम सबने कर युद्ध, रात्रि में, नित्य शांति का स्वाद लिया,
किन्तु एक दिन बन सेनापति, जब आया वह सजधज कर
रथ[१२१] उसका देखते कृष्ण भी अहो ! रह गये घबड़ाकर.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


एक-एक स्मृति उसकी बेटे! अब भीतर से रुला रही
किन शब्दों में कह बतलाऊँ, सुध-बुध कैसे भुला रही,
कहा धर्म ने "किन्तु कौन वह अब तो माता स्पष्ट करो
मेरी दुविधा कम करने का, एक बार अब कष्ट करो.

( १३३ )

बोली माता "इसलिये तो आई हूँ, कुछ धीरज धर
तुझको ही तो सब कहना है, किन्तु न खुलते शीघ्र अधर,
निर्भय बनकर कहा न जाता, मेरी भी लाचारी हैं
सच तो यह है तेरी माता, मर्यादा की मारी है.

( १३४ )

एक बार निश्चिन्त तुझे अब, मेरे बेटे! कर दूंगी
पर प्रसन्नता तुझे न होंगी, मैं तो मन की कर लूंगी,
केवल चिंता यही, यही डर, तू कैसे सह पायेगा?
सुनकर के वह सत्य संतुलन कैसे, अरे! संभालेगा?

( १३५ )

बेटे! अनसूना हो मैं इस, व्यथा-कथा में लाई हूं
निश्चय क्लेश तुझे पहुंचाने, आज अधिक मैं आई हूं,
है तो इसमें तू अपराधी, था तुझको भी होश नहीं
हा! हा! इस नरमेध यज्ञ में, तू भी तो निर्दोष नहीं!

( १३६ )

हम माया में फँसे, इसलिये हमें विस्मरण होता है
पाप, पुण्य, शुभ, अशुभ-बीज तो, मानव मन ही मन बोता है,
जनम-जनम का यह संचित ही, साथ जीव के आता है
वर्तमान में भूतकाल है, नहीं समझ वह पाता है.

( १३७ )

अतः यही विश्वास, पूर्व जन्मका शत्रु, तू भी निकला
तेरा गत भव का 'देना' था मुझे, यही कुछ पता चला,
बेटा भी तो पूर्व जन्म का, शत्रु सिद्ध हो सकता है?
इसमें क्या आश्चर्य, ताप, संताप तीव्र दे सकता है."

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बोला बेटा "यही विनय अब, ऐसी वैसी बात न हो
तर्क न कोई नया निकालो, और अधिक आघात न हो,
जो है कह दो, रखो न मनमें, मेरी चिंता नहीं करो
चाहे जितना दुख हो, मुझको दोष बताने नहीं डरो"

( १३९ )

जो कुछ भी हो सभी सुनूंगा, प्रिय, अप्रिय जो भी लाई
सब कुछ कह दो, खुले हृदय से, जो भी कुछ लेकर आई,"
माता बोली, "तो सुनले बन सजग, सतर्क, न घबराना
ऐसा ही कुछ सुनना होगा, फिर जीवनभर पछताना.

( १४० )

हृदय थामकर सुनो, नहीं वह मरा, गया मरवाया है
धर्मराज तुमने मरवाया, वृत्त यही लिखवाया है,
शांति तुम्हें तो तभी मिली है, 'उसको मारा सुनकर ही'
यह मेरा आक्षेप नहीं हैं, ज्ञात हुआ है मुझे यही."

( १४१ )

कहा धर्मने "माता यह क्या, एक नया तुम सुना गई ?
उसकी हत्यामें अपराधी, प्रकट मुझे भी बना गई ?
संभव है होगा, सच भी पर, इसमें मेरा दोष नहीं
वह तो क्षेत्र समर का था, था नहीं दया-हित होश कहीं"

( १४२ )

बोली माता "यों न दुखी हो, तुम अपराधी आप नहीं
वह वास्तव में कौन तुम्हारा, था यह तुमको ज्ञात नहीं,
बना सभी यह अनजाने में, तुम्हें तनिक कल्पना नहीं
दोषी इसमें मैं हूँ, उसकी की मैंने वंचना सही."

( १४३ )

"अब तो निश्चित धर्मराज के, सम्मुख आकर कर्ण खड़ा
तर्क सृष्टि में जो था अबतक, कांप गया, सोच में पड़ा,
निःशस्त्र मरनेवालों में तो तीन सुभट सर्वश्रुत है
मरे न, मारे गये सभी, पर मां किसके हित आहत है ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


दो मारे पार्थने, एक को धृष्टद्युम्न ने मारा है
धृष्टद्युम्न आचार्य द्रोणका, कहलाया हत्यारा है,
शेष भीष्म औ' कर्ण, पार्थके द्वारा मारे जाते हैं
वीर भयंकर अतुल विक्रमी, यह तीनों कहलाते हैं.

( १४५ )

देवव्रत है पूज्य पितामह, वंदनीय सबके कारण
प्रश्न द्रोण का गौण, द्रोण के लिये शोक है निष्कारण,
किन्तु एक कर्ण भी शेष है, निःशस्त्र हत्या है उसकी
किसका नाम सुनायेगी माँ, भला व्यथा माँ की किसकी ?

( १४६ )

कर्ण विषय की शंका अबतक, हुई हृदय से नष्ट नहीं
तो क्या मां का वही पात्र प्रिय, मात करेगी स्पष्ट यही ?
तब तो होगा अनर्थ भारी, इसी सोच में मैं खोया
जिसके कारण वर्ष त्रयोदश,[१२२] भला शांति से कब सोया ?

( १४७ )

तो क्या हूँ शोकार्थ, उसी के लिये कहेगी अब माता ?
मन ही मन कह गया, सामने अहो ! कर्ण ही अब आता,
कहा इसलिये "स्पष्ट करो मां, जाता नहीं विलंब सहा
जो कहने आई हो, कह दो, प्रश्न सामने अंब ! महा.

( १४८ )

कह विलंब क्यों ? शीघ्र नाम का, अब उसके उच्चार करो
बेटा हूं मैं, गैर नहीं, मत तीक्ष्ण व्यथा की धार करो,
जलांजलि क्यों श्रद्धांजलियाँ, सौ-सौ बार उसे दूंगा
आज्ञा दे दो, कुटुंबादिका भार उठा उसके लूंगा.

( १४९ )

उस पवित्र आत्मा का मुझ को, नाम सुना दो, धीर नहीं
उदारता दिखला दो इतनी, अधिक बढाओ पीर नहीं,
उथल पुथल है मची हृदय में, किस का नाम सुनाओगी ?
एक नाम बतलाते मुझपर, बिजली आप गिराओगी.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १५० )

निःशस्त्र मारे गये वीर है तीन,[१२३] आयु में ज्येष्ठ रहे
गुणागार, ज्ञानी, पराक्रमी, सर्वश्रुत है, श्रेष्ठ रहे,
नहीं हमें भी, केशव को भी, बना रहा उनका ही डर
उन्हें मिटाये बिना न यश है, यही सुना केशव का स्वर.

( १५१ )

एक नाम उनमें ऐसा है, उसे पार्थ ने मारा है
निःशस्त्र मारा, सच है पर वह, कौन भाग्य का मारा है ?
किसके कारण तुम्हें वेदना, नहीं समझ मैं सका यही
निःशस्त्र मरने वालों में तो एक अकेला नहीं वहीं.

( १५२ )

निः शस्त्र मरने वाले है, एक से अधिक, डर अतः यही
किसका नाम बताओगी तुम, शंका मन को सता रही,
बातें तेरी शनैः शनैः अब चिंता, व्यथा बढ़ाती है
लगता रणचंडी भी मुझपर, आंखें आज चढ़ाती हैं."

( १५३ )

बोली माता" अब घबड़ाकर लाभ नहीं होने वाला
कलंक तेरे माथे का यह, अन्य नहीं धोने वाला,
पहला दोषी धर्मराज है, ज्वाला[१२४] तुमने भड़काई
तेल कृष्ण ने डाला, उसकी मृत्यु कहानी बन पाई.

( १५४ )

प्रमुख दोष इसमें तेरा भी, मेरे बेटे ! बना यही
तेरे ही तो उकसाने से, उस हत्या से सनी मही,
इससे तू मुकरेगा कैसे, ज्ञात तुझे सब होनेपर
काम न आयेगा विलाप यह, अब तो उसके खोनेपर

( १५५ )

इतने पर भी तुम पांचों को, दोषी नहीं गिनाऊँगी
उसकी हत्या में अपराधी, तुमको नहीं बनाऊँगी
कृष्ण चाहते, उस निःशस्त्र की, हत्या कभी नहीं होती
औ' आकर के तेरे सम्मुख, माता कभी नहीं रोती"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १५६ )

कहा धर्म ने "चरण पकड़कर, यही, अंब अब त्वरा करो
दयापात्र हूँ, आर्द्र बनो ओ' शीघ्र पुत्र की द्विधा हरो"
बोली माता—" बेटे अब वें, होंगे मीठे बोल नहीं
तुम को अधिक तड़पना होगा, संभलेगा संतुलन नहीं

( १५७ )

बोला बेटा—"जो भी हो कह, उसका फल मैं भोगूँगा
था विधान ही प्रबल भाग्य का, यही अंत में बोलूँगा"
बोली माता—"तो सुन बेटे ! शेष जलंजलि एक वही
जलांजलि है शेष पार्थ की, आई कहने आज यही.

( १५८ )

पुत्र ! सत्य है यही, युद्ध में मारा सच्चा पार्थ[१२५] गया
दोनों दल में स्वार्थ भरा था, एक वही निःस्वार्थ[१२६] गया,
हूं पापिन मैं, इतना तो हो, 'और जलांजलि एक भरो'
अंतिम इच्छा यही, तुम्हारे हाथों उसका श्राद्ध करो".

( १५९ )

कहा धर्मने—"आह अंब ! तुम, घाव बढ़ाये जाती हो—
एक एक कर वार नया यों, कह इसमें क्या पाती हो ?
इतना तो विश्वास हो गया, वह आत्मीय, निकट का है
निश्चय ही अब तुमने मुझको, गहन गर्त में पटका है.

( १६० )

हूँ आभारी, जब कि अंत में, सत्य वही कुछ बतलाया
किन्तु पार्थ कहकर फिर मुझको, और अधिक ही भरमाया,
भेद नहीं अबतक भी खोला, केवल पार्थ बताया है
समझ न पाया ढंग बात का, यह भी कैसी माया है ?

( १६१ )

हन्त ! भाग्य लीला यह कैसी ? क्षत-विक्षत मन बना गई
यह भी कैसी व्यथा दे गई ? कथा कह गई पुनः नई,
सच्चा पार्थ मरा रण में तो, क्या यह नकली सम्मुख है
यह भी है आश्चर्य, अभीतक देखा, खड़ी अधोमुख[१२७] है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
( १६२ )

अर्जुन को छोड़कर बताओ, अन्य पार्थ था कौन भला ?
बोलो माता ! शब्द तुम्हारे, मुख से कैसे यह निकला ?
जो हो, जो कुछ है बतला दो, अब तो रखो नहीं मन में
करो नहीं छल अधिक, पुत्र हूँ, भड़क उठी ज्वाला तन में.

( १६३ )

रण की बलि वेदी पर बोलो, कौन पार्थ वह अन्य चढ़ा ?
कह अर्जुन से कुरुक्षेत्रपर, कौन पार्थ वह अन्य लड़ा ?
तुम जीवे जो मुझे जलाने, अब निश्चय ही हो आई !
हो जाना है भस्म इसी में, ऐसी व्यथा, कथा लाई.!!

( १६४ )

यही विनय अब, दया करो, अविलंब कहो, मन में न रखो
कृपा करो, पीड़ा न बढ़ाओ, अन्य दृश्य मेरा न लखो,
कौन पार्थ वह बतलाओ भी, रहस्य अब क्या और रहा ?
ऐसा भी क्या कठिन नाम, जो तुमसे जाता नहीं कहा ?"

( १६५ )

बोली माता—"तनिक धीर धर, वही सुनाने आई हूँ
जीवन भर की मौन घुटन को, आज खोलने लाई हूँ,
'ज्येष्ठ लाल' युद्ध में हुआ बलि, चुपके-चुपके मैं रोई
भाग्यहीन का भाग्य भला क्यों, कहो सँवारे भी कोई ?

( १६६ )

कौरव कुल के नूतन राजा ! गाथा नारी जीवन की
ऐल राज्य में रही करुण ही, जाने वह उसके मन को,
विधान प्रारब्ध का मानकर, आँसू पीती आई है
मन से तो मर चुकी कभी की, तन से जीती आई है.

( १६७ )

अस्तु, कहूँगी तुझे सभी अब, कुछ भी नहीं छिपाना है
नश्वर तन, जीवन का अब क्या, कोई भला ठिकाना है ?
किसी वस्तु का मोह नहीं अब, करना केवल मन हलका
था सुनने को कौन भला यह, रामायण भी निर्बल का ?

CC-0. Agamnigam Digital Preseyation Foundation, Chandigarh
( १६८ )

तो सुन बेटे ! पार्थं नहीं यह, अरे ? पार्थं था मात्र वही
वही पृथा का बेटा था, यह पार्थं पृथाका[१२८] पुत्र नहीं,
अपितु सभी तुम कुन्ती जाये, वही पृथाका जाया था
नियम बाह्य अपकृत्य बना था, अतः प्रसव अलगाया था.

( १६९ )

मेरा दोष नहीं था, शासन था ऐलों का उचित नहीं
देव जाति[१२९] पर रोक-टोक थी नहीं, जाति थी पतित वही,
नारी किस वस्तुका नाम है, था ऐलों ने भुला दिया
देव जाति के वश हो धरती की शुचिता[130] को डुला दिया.

( १७० )

मुझसे कैसे दोष हुआ यह, कैसे अब कह बतलाऊँ ?
पडी महंगी दुर्वासा[131] की सेवा, कैसे कह पाऊँ ?
मैं हो निरबल निकली, परखा नारीका इतिहास नहीं
सब कुछ होनेपर पछताई, थी सुधार की आस नहीं.

( १७१ )

करूं कहीं पर हृदय रिक्त, थी चाह, किन्तु थल मिला नहीं
लिखी निराशा ही जीवन में, प्रशस्त पथ ही खिला नहीं,
मन को मारे बैठ गई मैं इसीलिये, लाचारी थी
दूर किया अविलम्ब, क्या करूं, अवैध[132] की महतारी थी.

( १७२ )

आक्रोशों से भरा हृदय का गगन, किन्तु ना एक चली
गर्भवास[133] से पुत्र प्रसवतक मौन रही, ना खिली कली,
ऐल राज्य शासन में नारी, मेरे लाल ! अरक्षित थी
सभ्य[134] कहाने वालों से भी, देख लिया वह भक्षित थी.

( १७३ )

फिर भी सत्य यही दोषी मैं, संभला मुझसे गया नहीं,
नारी-दुर्बलता को मुझसे, सबल बनाया गया नहीं,
नहीं बनी मैं शकुन्तला[135], निज जीवन को मोड ना सकी
ऐलों के शासन का कोई पाश[136] न बेटे ! तोड सकी.



५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १७४ )

शूल भरे ही मार्ग सभी थे, पहुँच न उसके पास सकी
श्रेष्ठ कहाने वालों से भी, निजको निर्भय पा न सकी,
रोई, तडपी, मन ही मन, पर जुटा सकी उत्साह नहीं
लोक लाज के कारण बेटे ! पा न सकी मैं राह नई.

( १७५ )

माता तो मैं बनी, किन्तु कर्तव्य प्रसवपर भुला दिया
लिखा दिया इतिहास यही, बन जननी सुतको डुला दिया,
हन्त ! उजाड़ा मैंने अपने हाथों निज जननीपन को
हूँ मैं एक अभागिन, ढोती आई केवल जीवन को.

( १७६ )

किन्तु न उसको भुला सकी मैं, स्मृतियां ताजा है मन में
सब कुछ पाया, उसी को, पा न सकी मैं जीवन में,
गला घोंट तो नहीं सकी, कर दिया प्रवाहित चंबल में [१३८]
अगणित[१३९] तारे थे साक्षीमें, त्याग समय कृष्णांबर में.

( १७७ )

थे सबके शुभ भाव साथमें, यात्रा चली पिटारी[१४०] की
भला अवस्था कैसी होगी, तब उसके महतारी की,
क्या करती लाचार बनी थी, जनक[१४१] नहीं उसका आया
बेटे ! मैंने ऐल राज्य में[१४२], निश्चय यह धोखा खाया.

( १७८ )

कहा धर्मने—"किन्तु कथा अब एक बार यह पूर्ण करो
मेरे मनकी अकुलाहट को, एक बार अब चूर्ण करो,
कहो कौन वह ज्येष्ठ सहोदर, भाग्यवान वह कौन भला ?
पडी आहूति किसकी रणमें, कह कैसे वह मौन पला ?"

( १७९ )

बोली माता—"मौन नहीं रे, प्रकट लाड प्यार में पला
"आत्मज बन कर, नहीं कि पालित,' पता मुझे यह सभी चला,
यही नहीं आज भी उसे कहते हैं उनका ही जाया
भाग्यवान था, साथ जन्मके, निजका भाग्य लिखा लाया.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १८० )

इसीलिये निश्चिन्त बनी थी, बेटा सुखमें पलता है,
किन्तु रात दिन इसपर भी मन, रहा मुझे ही छलता है,
कभी उसे जा मिल न सकी मैं, परिचय उसको दिया नहीं
नहीं अंक में लिया, धन्य दोनों में कोई किया नहीं.

( १८१ )

अंत दिवस यह भी अब देखा, कैसा भाग्य लिखा लाई !
बोझ संभाला, प्रसव किया, औ यद्यपि जननी कहलाई,
किन्तु न कहलाई मैं माता, उसकी जननी होकर भी
सभी स्वप्नवत बना, न मानव समझे ईश्वर सूत्र कभी."

( १८२ )

कहा धर्म नें "तो दे परिचय, अब विलंब में अर्थ नहीं
विलंब क्षण का भी सहने में, मेरे कान समर्थ नहीं,
बहुत हो चुका अब इतना ही, करो दीर्घ अब कथा नहीं
शीघ्र नाम शुभ वह सुनवा दो, व्यर्थ बढ़ाओ व्यथा नहीं."

( १८३ )

मनमें बोला—"शासन नैतिकता का मूल्य नहीं करता
जिसे विवेकी कहते वह भी, देखा डग न उचित भरता,
पाप जघन्य जहाँ करने को, मानव डरता आज नहीं
उस समाज में लुटती देखे, क्यों नारी निज लाज नहीं ?

( १८४ )

अब तो रह-रह खटका तो कर्ण ही मुझे दे जाता है
निःशस्त्र मरने वालों में तो, वही स्पष्ट[१४३] हो पाता है,
अन्य मरा है निःशस्त्र कोई नहीं ध्यान में आता है
किन्तु कहूँ मैं कैसे ? अब तो सभी कहेगी माता है.

( १८५ )

भले कर्ण ही क्यों न सिद्ध हो, घबड़ाने की बात नहीं
विधान विधिका सत्य बनेगा, वह तो अपने हाथ नहीं,
उत्तरदायी किन्तु यहां मैं, ऐसा मां का कहना है
भले सत्य हो, जो भी शासन दे मां मुझको सहना है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १८६ )

जो हो, खुल जाये रहस्य यह, सफल प्रतीक्षा हो जाये
जननी द्वारा भले अनंतर, अग्नि परीक्षा हो जाये,
भोग किये का बिन भुगते अब छुटकारा कब संभव है ?
अब तो निश्चय ही बिगड़ा है, रहा-सहा मेरा भव है."

( १८७ )

यही सोचकर बोल गया—"मां ! तुमको मैं दूं दोष नहीं
नहीं कहूँगा पुत्र त्यागते समय, तुम्हें था होश नहीं,
अस्तु छोड़ संकोच बताओ, भला किसे तुम पा न सकी ?
जो भी हो बतलाओ अब तो, व्यथा करुण है यह किसकी ?

( १८८ )

अंब ! नाम उस ज्येष्ठ सहोदर का सुनेने को आतुर हूँ
शेष छिपाने जैसा अब क्या ? स्पष्ट करो, चितातुर हूँ,
पुत्र वत्सला ! अब होनो का तनिक न पश्चाताप करो
यही विनय है अपने मन का, दुःख, शोक, संताप हरो.

( १८९ )

इतना तो अब कहना ही है, यह सब कहने अब आई ?
और जलांजलि दो इतना ही, आकर केवल कह पाई ?
उसके प्रति कर्तव्य हमारा, क्या इतना ही शेष मिला ?
खेद यही जननी होकर के हृदय तुम्हारा आज खिला ?

( १९० )

अन्य पार्थं भी है कोई क्यों, अबतक देखा गया नहीं ?
आज कह गई सही पार्थ अब, इस धरती पर रहा नहीं !
जो हो, फिर भी नाम न बोला, केवल पार्थं बताती हो
अब तो खोलो भेद सभी, क्यों आत्म क्लेश अब पाती हो ?

( १९१ )

बोल गई, ऊपर से मैंने मारा, मुझको दोष दिया !
सब कुछ लुटजाने पर आकर, हन्त ! आज आक्रोश किया !
तो फिर क्यों युद्ध के पूर्व ही, आकर यह सब कहा नहीं ?
देश, काल, स्थिति को भी तुमसे, कैसे परखा गया नहीं ?

( १९२ )

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तुमने अपने मन को मारा, कह बदले में क्या पाया ?
अपने ही बेटों के हाथों, अपना बेटा मरवाया !
भले न मरवाया माँ ! तुमने, किन्तु मृत्यु को पोष लिया ?
ऊपर से कह दिया कि हमने, मार उसे संतोष किया !

( १९३ )

सत्य यही यह रीति, कथा की, दोष पूर्ण तो नहीं रही
अंब ! कथा-क्रम रहा उचित ही, इसमें भी दो राय नहीं,
पर होता आश्चर्य यही, तुम शूरों की जननी होकर
सत्यवती[१४४] सी कुछ न कर सकी ! बैठी अपना सुत खोकर !!

( १९४ )

समाज में छल, कपट सदा का, देखा पूजा जाता है
अनाचार, मद, दंभ सभी का, इस वैभव से नाता है,
रहते ऐसे समाज में तुम, अपना बेटा पा न सकी !
युक्ति, शक्ति ऐसी जीवन में, क्षत्राणी हो ला न सकी !!

( १९५ )

देखा, परखा ऐल[१४५] जगत को हमने, तुमने, इसपर भी
तुम कैसे यों निर्बल निकली, पांडव जननी होकर भी,
माँ होकर तुमने ही हम से, घोर पाप यह करा लिया ?
क्या ऐसी माँ और मिलेगी ? आप कलंकित नाम किया !

( १९६ )

ऐसा भी क्या कलंक उसके, सिरपर था जग से भारी ?
जिसे खोलते है दुविधा में, अब तक उसकी महतारी,
जब कि आज वह नहीं रहा, हा ! गया छोड़ ही स्पष्ट हमें
अब तो केवल नाम चाहिये, है इसमें क्या कष्ट तुम्हें ?

( १९७ )

कौन पार्थ था ? अब न छिपाओ, आया, गया यही जानो
दया करो इस व्याकुल मन की, व्यथा कथा को पहचानो
करो धड़ाका एकबार, परिणाम की न चिंता करना
बेटा हूँ मैं वत्सलताका माता ! बहने दो झरना".

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( १९८ )

बोली माता—"लाल ! धीर धर, यही कार्य अब करना है
भूखी वत्सलता का मेरे, बह निकलेगा झरना है,
संभव है कुछ विलंब होगा और, किन्तु पाना उत्तर
तुझको ही है सब कुछ कहना, रखकर मनपर अब पत्थर.

( १९९ )

बहुत डर चुकी मैं समाज से, अपने से, है सत्य यही
अब डरने के लिये बचा क्या ? अतः कहूँगी सत्य वही,
तनिक दीर्घ पथ तो नापूंगी, मेरी भी है लाचारी
प्रकट पाप यह करते सोचे, क्यों न भला कह महतारी.

( २०० )

तो सुन बेटे ! जिसने केवल, धर्म—सहारा लेकर ही
युद्ध किया है अंतिम क्षणतक, साख नीति का देकर ही,
गंगाजल सा मन निर्मल था, थी असत्य की चाड़ नहीं
एक जलांजलि शेष उसी की, आई कहने आज यही.

( २०१ )

शूरवीर, रणधीर प्रखर था, न था प्रपंची, प्रबुद्ध था
भीतर-बाहर अतमंन से, परख लिया अति विशुद्ध था,
जाया था मुझ क्षत्राणी का, नहीं गँवाई लाज कहीं
एक जलांजलि शेष उसी की, आई कहने आज यही.

( २०२ )

वीर, किन्तु था उदार, ऐसा सदय पात्र तो दिखा नहीं
उदारता ही दुर्गुण उसका, वृत्त जायगा लिखा यही,
अधर्म से ही मारा जिसको दबा सकों आवाज नहीं
एक जलांजलि देना उसको, आई करने आज यहीं,

( २०३ )

कुरुक्षेत्र की समर धराका प्रमुख[१४६] पात्र वह कहलाया
तुम कायर थे, उसे निहत्था मारा, मनको बहलाया,
कुशल धनुर्धर इसी नाम से बेटे ! जिसकी ख्यात रही
एक जलांजलि शेष उसी की, आई कहने आज यही.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


धर्मवीर था, महान त्यागी, नीतिमान था, कुटिल नहीं
गुणज्ञ था, गुणग्राहक भी था, था निज व्रतमें शिथिल नहीं,
सत्यव्रती था, ध्येयनिष्ठ था, गुण सागर था निश्चय ही
एक जलांजलि शेष उसी की, आई कहने आज यही.

( २०५ )

दयासिंधु था, हृदयशील था, मित्रनिष्ठ सर्वश्रुत था
नहीं मिला मित्रघ्न, अन्त में, प्रथम पुत्र, कुन्ती-सुत था,
किसी मोडपर नीच पुरुष बन, लजाया न मम रक्त कहीं
एक जलांजलि शेष उसी की, आई कहने एक यही.

( २०६ )

खेद यही, जीते जी उसका, मूल्य किसी से हुआ नहीं
मनः शुद्धि थी नहीं किसी में, निराश किन्तु न हुआ कहीं,
मूल्यांकन होगा ही उसका, एक दिवस विश्वास यही
ऐसा था वह, सत्य यही है, अमर बने अभिलाष यही.

( २०७ )

तनिक न शंका, सभी कहेंगे, हुआ युद्ध में अमर वहीं
विजय तुम्हारी कपट पूर्ण है, हुआ धर्ममय समर नहीं,
नहीं वीरता लड़ी वीर से, सत्य, सत्य से लड़ा नहीं
यही लिखा इतिहास जायगा, प्रश्न रहेगा खड़ा यही.

( २०८ )

सुनकर जिसकी मृत्यु, प्रथम था, तुमने[१४७] ही मधुहास किया
अन्त उसे छल से ही मारा, पौरुष का उपहास किया,
इसमें साथ दिया केशव ने, जिसका कोई कल्प नहीं
कुन्ती सुत था जान इसे भी, किया सरल मन अल्प नहीं.

( २०९ )

बचन, नियम पर जो था दृढ़ ही, किया अंत तक सिद्ध यही
कुरुक्षेत्र के समर धरापर, रहा वस्तुतः विद्ध वहीं,
जीवन दान दिया तुम सबको उसने, तुमको ज्ञात नहीं
एक जलांजलि शेष उसी की आई कहने आज यही.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २१० )

उसने तो दे दिये प्राण, था दिया बचन मुझको, पाला
सिद्ध हुआ अन्त में वही तो, अर्जुन का भी रख वाला,
ज्येष्ट बन्धु था, बाण इसलिये, सहन किये कुछ कहा नहीं
यही जान आगे जीवन का, महत्व अब कुछ रहा नहीं.

( २११ )

भूल सका वात्सल्य नहीं, कर्तव्य नहीं, निज मानवता
तुम माँ जाये, अन्तिम क्षण में ही तो उसको चला पता,
इसीलिये भी आज तुम्हें मैं बेटे ! जीवित देख रही
कमी न देखी अपनेपन में, लिखा जायगा लेख यही.

( २१२ )

यह कैसा उन्माद विजय का, मानवता की चाह नहीं
भाई से भाई मरवाया, धर्म युद्ध की राह नहीं,
यों न कभी वह मर सकता था, केशव ने ही कपट किया
हन्त ! धर्म युद्ध के नाम पर, बेटा माँ से झपट लिया.

( २१३ )

एक बहुत था, स्वयं स्फूर्त था, प्रथम दिवस यदि आ जाता
अट्ठारह दिन युद्ध न होता, दृश्य यही तू लख पाता,
सबके मुख से सुना यही, था कोई उसका काल नहीं
क्या अर्जुन क्या कृष्ण न करते, उसका बाँका बाल कहीं.

( २१४ )

जिस दिन सेनापति बन आया, युद्ध दिवस तो रहा वही
अन्य युद्ध युद्ध ही नहीं था, मुझसे सबने कहा यही,
जिसके सम्मुख भीष्म, द्रोण थे फीके, सत्य बचन मानो
एक जलांजलि शेष उसी की, किसकी यह भी पहचानो.

( २१५ )

कहा धर्म ने "समझ गया माँ ! तुमने सब कुछ कह डाला
किसका नाम सुनाओगी अब, चित्र स्पष्ट वह कर डाला
शोच रखा सच वही हो रहा, हन्त ! भाग्य ने घात किया
निश्चय ही इसमें मानव ने पशुता पर भी मात किया."

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
( २१६ )

बोली कुन्ती—"जो हो, सुन लो शेष, न बीच अभी बोलो
फिर जीवनभर जीवन व्यवहारों के अपने स्वर तोलो,
उसके प्रति श्रद्धा ही रखना, पूज्य भाव मन में लाना
जीओ तबतक उसे न भूलो, बचन निभाकर दिखलाना.

( २१७ )

फिर न कभी कहना दुष्मन था, ज्येष्ठ बंधु, मां जाया था
बढ़ चढ़ बनकर ही दुनिया में, नाम कमाने आया था,
पावन तो कर गया उदर, पर, शेष रहा मन ही मनमें
एक जलांजलि शेष उसी की, कहने आई अभी तुम्हें.

( २१८ )

बहे नहीं यह रक्त, हटे वह युद्ध भूमि से मन लाकर
युद्ध पूर्व मैं लोक लाज तज, गई, मिली उसको जाकर,
किन्तु मिला प्रतिकूल दैव ही, मन का चाहा बना नहीं
तुम जीवित पा सकी किन्तु हा ! उसको जीवन मिला नहीं.

( २१९ )

जिसको निर्दय बनकर तुमने मारा, यह सब ज्ञात किया
यह भी कैसा वीर कर्म है, पशुतापर भी मात किया,
अस्तु, जलांजलि शेष उसी की, कहने बेटे ! मैं आई
मेरे अपने ज्येष्ठ लालकी, करुण कहानी अब लाई.

( २२० )

मेरी भूखी ममता, उसके लिये तडपती नित्य रही
क्या करती मैं, कोई क्षमता, मां हो दिखला सकी नही,
ज्येष्ठ सहोदर दे न सकी मैं तुम्हें, क्षमा मुझको करना
दुखियारी मां के जोवनमें. कोई आग नहीं भरना.

( २२१ )

जो तुम सबका ज्येष्ठ सहोदर, था वास्तव में पार्थ वही
बीच तुम्हारे चाहा उसको, पर था भाग्य यथार्थ नही,
एक जलांजलि शेष उसी की, तुम्हें सुनाने अब आई
जिसे कहा था हीन, सूत वह, कर्ण तुम्हारा था भाई.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# १

सभी लुटाकर यह क्या तुमने आज कहा ?
हत्यारा हूँ ज्येष्ठ बन्धुका अब यह सहा नहीं जाता
कौन करेगा क्षमा मुझे अब ?
रोम-रोममें उसने मेरे भ्रातृ भाव उपजाया है
कैसे उसको भुला सकूँ अब ?
जीवन पृष्ठ लिया कला !
बड़ी क्रूर हो
हृदय हीन हो
बिपदाओं से जननी बनकर नहीं लड़ी
कन्याओं की छेड़ छाड़ तो आर्यों का कर्तव्य नहीं ?
जन में होंगे कर्ण अनेको प्रश्न एक कर्ण का नहीं
कौन वीर जन्म से शुद्ध है ?
दोष यह अनधिकार शासन का है
रण डायन बनकरके तुमने खाया
तुम नारी का एक रूप ही लेकर बैठी, खेद यही
वह तेरा अपना जाया था

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# उत्तरार्ध

( २२२ )

कहा धर्मने—"बहुत हुआ मां ! अब कुछ अधिक न स्पष्ट करो
नहीं सुना जायेगा आगे, मत कहने का कष्ट करो,
सोचा वही सही उतरा, मैं आज कहीं का नहीं रहा !
ओरी माता ! सभी लुटाकर, यह क्या तुमने आज कहा ?

( २२३ )

मानव हूं अंतमें, देवता नहीं, सोच तो तनिक यही
पास हृदय, मन है मेरे भी. बोल अत: यह क्षणिक नहीं,
कैसे दुनिया को दिखलाऊँ मुख मैं, समझ नहीं पाता
हत्यारा हूँ ज्येष्ठ बन्धुका, अब यह सहा नहीं जाता.

( २२४ )

यह संघर्ष भयानक मनका, अब होगा ही शांत नहीं
किया नियति ने मानो मुझपर, आप अहो यह क्रान्त नहीं ?
यह उद्घातक वृत्त सुनाकर, हन्त ! बवंडर उपजाया
कौन करेगा क्षमा मुझे अब, सुन वह कुंती का जाया.

( २२५ )

कल तक था वह शत्रु अत: हम, अंधःकार में धंसे रहे
रात दिवस उसके विनाश में, शक्ति-युक्ति में फंसे रहे,
वह साधारण वीर नहीं था, केशव को भी भारी था
इसीलिये उसकी हत्या का यत्न हमारा जारी था.

( २२६ )

इसमें दोष हमारा क्या था ? केवल शत्रु मिटाना था
विजय मार्ग का वह अवरोधक पत्थर एक, हटाना था,
एक नहीं थे तीन-तीन थे, महाकाल का रूप लिये
किसी तरह से नष्ट सभी हो, प्रयत्न हम ने यही किये.

( २२७ )

आज कह गई वह भाई था, यह संघातक वृत्त नहीं ?
डरा रही हैं दशो दिशायें, अहो ! ठिकाने चित्त नहीं,
रोम-रोम में उसने मेरे, भ्रातृ-स्नेह उपजाया है
जब से सुना तुम्हारे मुखसे, कि था कर्ण, मां जाया है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २२८ )

अंब ! बताओ कैसे उसकी, विरह व्यथा अब अहो सहूँ ?
अरी अभागिन ! आज कह गई, उसे ज्येष्ठ कौंतेय कहूं ?
जब कि मिटाकर उसको, अपने हाथों, कहने अब आई ?
'सही पार्थ था वहीं, सहोदर, ज्येष्ठ, तुम्हारा था भाई.

( २८९ )

हृदय पूर्ण ग्लानि से भरा है, यह हिंसा थी खेल नहीं
उसमें हत्या ज्येष्ठ बंधु की, पड़ा आग में तेल नहीं ?
अंत सहोदर था वह मेरा, कुछ तो सोच लिया होता
आती, कहती युद्ध पूर्व ही, तो भाई को क्यों खोता ?

( २३० )

कैसे उसको भुला सकूँ अब, कैसे होगा कह संभव ?
राजपाट सब फीका लगता, नहीं चाहिये यह वैभव,
मेरा वैभव चला गया, यह वैभव मेरे योग्य नहीं
अब जीवन में अर्थ नहीं है, यह क्षण का वैराग्य नहीं.

( २३१ )

नहीं समझ मैं सका कि तुमने, कैसे उसे छिपाया था
अबतक रखा भुलाये उसको, जब कि तुम्हारा जाया था,
तुमने लाज बचाई अपनी, "बेटे को मरवा डाला
बेटों के ही हाथों, "अपना, जीवन पृष्ट किया काला.

( २३२ )

हत्यारा हूँ ज्येष्ठ बंधु का, अब यह सहा नहीं जाता
मात्र कमाया गया पाप, पर, कितना कहा नहीं जाता,
सच कहता हूं सिवा बंधु के, अब तो रहा नहीं जाता
बीत रही क्या मेरे मन पर, वह भी कहा नहीं जाता.

( २३३ )

कुरुक्षेत्र की धरा रक्त से सनी, हन्त ! मेरे कारण
नहीं हुआ यह धर्म युद्ध भी, वैसा एक उदाहरण,
अथ से इति तक कपट, छल हुआ, अंब ! तुम्हारे शब्द सही
पर तुम भी तो इस कलंक से, बची नहीं, है खेद यही.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २३४ )

दोषी तो तुम भी हो इसमें, अपना बेटा मरवाया
अपने ही बेटों के हाथों, अंत लाल का करवाया,
बड़ी क्रूर हो, उसको खोकर, परिचय देने अब आई
वृत्त कहो इतिहास लिखेगा क्या ? वह सोच नहीं पाई.

( २३५ )

हृदय हीन हो, जननी होकर, तुमको दया नहीं आई
कैसी मां हो, नौ महिनों की, कीम्मत चुका नहीं पाई,
आर्या[1] होकर मातृ कुलों की, महती तुमसे बढ़ी नहीं
भारतीय[2] थी, बिपदाओं से, जननी बनकर लड़ी नहीं.

( २३६ )

आर्य स्त्रियों की संतानें तो, नहीं खिलौना[3] कहलाई ?
वह तो निज संतान मांगकर,[4] आप विधाता से लाई,
भारतीय मां, मां ही होती, उसका गौरव मरा नहीं
क्यों तपस्विनी नहीं बनी तुम, वह गौरव क्यों वरा नहीं ?

( २३७ )

जन्म जात पुरुषी प्रतिभा की, नारी में पहचान रही
उसके बौद्धिक, तार्तिकता में, देखी गई कमी न कहीं.
उसने तप, साहस द्वारा तो, विजय[5] काल पर पाई है
परंपरा यह उसकी तुमने, कैसे अहो ! भुलाई है ?

( २३८ )

नैतिकता का साथ सदा, नारी ही देती आई है
प्रशंसा पथ कर विकास का वह, जन-मानस पर छाई है,
नित्य आग में जीवन झोंका, तो नारी ने झोंका है
उदारता को पर नारी के, दिया पुरुष ने धोखा है.

( २३९ )

आज खंडहर यह जीवन के, नैतिकता[6] का घोर पतन
किसके कारण, कब[7] से आया, भारत में यह परिवर्तन ?
पहुँचा तह में जब मैं इसकी, दृश्य यही साकार मिला
देव[8] जाति के कारण ही, भारत में भ्रष्टाचार[9] खिला.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २४० )

कहाँ गया वह नारी गौरव, शेष नहीं अब शैशव भी
पतन हुआ ऐलों के कारण, रहा नहीं अब संशय भी,
जाकर कहाँ रुकेगा रथ यह, नहीं समझ में यह आता
नारी की महिमा का नाटक, मन को पीड़ा पहुँचाता.

( २४१ )

नर प्रधान संस्था ने अपनी, सुविधाओं पर, ध्यान दिया,
अपनी सुविधा की रक्षा में, नारी का नित दमन किया,
स्वयं आद्य चैतन्य शक्ति वह, दुनिया का इतिहा यही
ऐल राज्य में हुआ सदा का हा ! उसका उपहास नहीं ?

( २४२ )

उच्छृंखलता ऐल प्रजा की, नित्य निरंकुश कहलाई
भोग भूमि[१०] के संस्कारों में, कोई कमी नहीं आई,
बीत गई पीढ़ियाँ[११] अनेकों, असर रक्त का गया नहीं
'कर्मभूमि' यह, ऐल पा सके, अबतक जीवन नया नहीं.

( २४३ )

पुरुष पिता[१२] बन सकता, कहला सकता, बंधन कहीं नहीं
नारी भी माँ बन सकती पर, माँ कहलाई कहीं नहीं,
क्यों उसको माँ कहलाने का, दिया गया अधिकार नहीं ?
यह तो समझे ऐल, किन्तु सत्य को मिला आकार नहीं !

( २४४ )

प्रसव प्रसविनी फेंके, कन्या कहलाये, इस धरती में !
यह साहस या लाचारी है ? चन्द्रवंश की युवती में
यह तो कम आश्चर्य नहीं, यह विलास प्रियता की सुविधा
अपनी रक्षा में ऐलों ने, सरजी नित्य नवीन विधा.

( २४५ )

फलतः देना जन्म कर्ण को, त्याग, कुमारी कहालाना
रीति चन्द्रवंश ने चलाई, पहन धर्म का नव बाना,
सामाजिक शुचिता का इसमें, बोलो प्रश्न कहाँ आता ?
इसमें तो नित नये पतन का, मानव मार्ग नया पाता.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २४६ )

इसीलिये भी ऐलवंश, कमजोर मिला नैतिकता में
आध्यात्मिकता मात्र दिखावा, फंसा मिला भौतिकता में,
नर जीवन की महानता को, जान न पाया, सत्य यही
नर से नारी नहीं, अपितु नारी से नर, धृव सत्य यही.

( २४७ )

अस्तु ऐल राज्य की नींव[१३] ही, विलास प्रियता लिये खिली
एक-एक अधिकार तभी से, नारी खोती हुई मिली,
कन्याओं की छेड़छाड़[१४] तो आर्यों का कर्तव्य नहीं ?
सभ्य कहाने वालों का यह, कर्म शुद्ध अपसव्य नहीं ?

( २४८ )

कर्ण जन्म का त्याग, कहो फल, किसका तुमने यह पाया ?
इसमें दोषी आप नहीं तुम, शासन[१५] की है यह माया,
किन्तु खेद यह, भारतीय हो, तुमने बेटा अलगाया
बैठी लेकर उसे नहीं तुम, क्यों ? न समझ में यह आया.

( २४९ )

खेद यही, अब आकर बोला, यह भी कैसी लचारी ?
समझ रहा हूँ, अज्ञ नहीं, पर 'बनकर उसकी महतारी—
उसको बेटा कह न सकी, माँ रह न सकी आश्चर्य यही,'
ऐल राज्य शासन भविष में, बना शोध-सत्कार्य नहीं ?

( २५० )

यह कैसा दुर्भाग्य कहो तो, भाई को भाई न मिला
युद्ध पूर्व क्यों किसी दिवस यों माँ ! तेरा मन नहीं खिला,
कैसे उस रत्न को छिपाया ? किन्तु छिपाये छिपा नहीं
प्रखर सूर्य था वह अपने में, गया किसी से ढका नहीं.

( २५१ )

सभी प्रभावित थे भैया से, रिपुओं ने भी गुण गायें
चहुँदिशि थी गुण चर्चा उसकी, हम भी तो यह सुन पाये,
चरित्र बल तो उसके जैसा, अन्य किसी में नहीं मिला
खेद यही पर प्रथम पुष्प यह, गोद तुम्हारे नहीं खिला.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २५२ )

ध्यान देशका नहीं किया, आकर के भेद नहीं खोला
रक्त स्नान से धरा बचाई नहीं, न हित का कुछ बोला,
क्या अच्छा होता आ जाती, युद्ध पूर्व ही, कह जाती
तो मन कहता स्थितियाँ भी कुछ नव आयाम लिये आती.

( २५३ )

'कर्ण-जन्म' का दोष तुम्हारा, कैसे तुमने कह माना ?
ऐल राज्य-शासित समाज को, गया न तुमसे पहचाना,
जनमें होंगे कर्ण अनेकों, प्रश्न एक कर्ण का नहीं
अस्त व्यस्त है समाज सारा, प्रश्न एक वर्ण[१६] का नहीं

( २५४ )

'देव'[१७] ऐल दोनों की मैत्री, ऐल पतन ही दिखा गई
नियोगादि की घृणित[१८] प्रथायें, आर्य धरा में लिखा गई,
पति[१९] पत्नी नाम के रह गये, स्ववेंश्याओं के रहते
कहो[२०] कौन जन्म से शुद्ध है ? डर क्यों अब यह भी कहते ?

( २५५ )

कइयों[२१] ने पुरुषार्थ खो दिये, पुत्रोत्पादन कर न सके
तो कोई वंशधर चाहिये, इस अभाव को सह न सके,
अपनी नपुंसकता ढंकने को, नियोग धार्मिक कह डाला
गृह लक्ष्मी, गृहस्वामिनियों का, शील भंग यों कर डाला.

( २५६ )

ऐल प्रजा का चित्र यही है, पतन, पतन ही लिखा गया
नारी केवल भोग्या, दासी, बस इतना ही दिखा गया,
अतः तुम्हें मैं दोष न दूंगा, दोष ऐल शासन का है
परंपरा रक्त[२२] की, दोष यह, अनधिकार[२२] आसन का है.

( २५७ )

विशेषता संतान शब्द की, गई भुलाई, हुआ यही
हेतु बिना[२४] की संतानों से, त्रस्त हुई है आज मही,
सामाजिक परिवार[२५] योजना, इनसे सँभली गई नहीं
वैध, अवैध[२६] फलों के कारण, प्रकटी एक न ऊषा नई.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २५८ )

भारत का इतिहास इसलिये, कई भ्रांतियों को लेकर
लिखा जायगा, नारी दुर्बलता की, साख सही देकर,
खेद यही नारी भी, निर्बल बनी रही, कुछ कर न सकी
इतनी निर्बल बनी रही वह, साथ समय का दे न सकी.

( २५९ )

सामाजिक नियमों में ईश्वर निर्मित, एक नियम न मिला
आश्रम या वर्णाश्रम एक न, ईश्वर द्वारा कहीं खिला ?
समाज संचालन–सुविधा में, जो आवश्यक जान पड़ा.
विशेषता कल्याण रूप में, नियम उसी का नाम पड़ा.

( २६० )

पर आगे सत्ता ने अपनी-अपनी सुविधा को लेकर
नियम बनाये, धार्मिकता की, वेषभूषा उनको देकर,
उस चक्की में निम्न वर्ग औ' नारी पीसी गई यहाँ
ऐल राज्य में इसीलिये भी, तुमने इतना दुःख सहा.

( २६१ )

हन्त ! भाग्य मां कहलाने का उसकी, तुमको मिला नहीं
प्रसव किये पर तव आंचल में, शैशव उसका खिला नहीं,
बनी कुमारी उसे त्याग कर, समझा इसका अर्थ नहीं
धन्य ऐल-शासन, समाज की, भरा व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं ?

( २६२ )

फिर भी तू नारी भारत की, तेरी मिट्टी[२७] न्यारी है
इस मिट्टी में आर्य जगत की, नित्य खिली नव क्यारी है,
वह अपना गुण नहीं छोड़ती, सत्यवती[२८] ने दिखलाया
तुम क्यों पीछे रही ? तुम्ही में, साहस क्यों न वहीं आया ?

( २६३ )

खूब क्रोध आता है तुमपर, प्रकट न पर मैं कर पाता
यही मानकर, ऐसा साहस, पाया सब में कब जाता,
किन्तु तुम्हारा मौन हमारी, जीवन व्यथा न बन आया ?
रण डायन बनकर के तुमने, खाया अपना ही जाया !"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २६४ )

बोली माता—"यों तीखें शर मार न बेटे ! संयम कर
मैं माता हूँ, तू बेटा है, मर्यादा अवलंबन कर,
आते ही मैं बोल गई थी, कुछ कहने की शक्ति नहीं
सिद्ध हुई निर्बल ही, फलतः शोध सकी कुछ युक्ति नहीं.

( २६५ )

होकर के विश्वस्त तुम्हीं से, मैंने साहस कुछ पाया
फिर भी उसका नाम न मुख में, सहज सरलता वश आया,
क्या लाती ! क्यों लाती !! कोई लाभ दिखाई दिया नहीं
ऐल राज्य की नारी जो थी, साहस कोई किया नहीं.

( २६६ )

साथ अन्यथा रहस्य यह सब, मेरे आने वाला था
उसकी स्मृति में वह जीवनभर, मुझे रुलाने वाला था,
जो न युद्ध यह होता, ऐसा कह कब समय भला आता ?
निश्चित बेटे का रहस्य भी, मेरे साथ चला जाता.

( २६७ )

मुझे ज्ञात था नारी रक्षक, इस समाज में आज नहीं
और नहीं था इसके पहले, ऐल-जगत-इतिहास[२९] यही,
तब मैं किससे न्याय मांगती ? कोई सम्मुख शुद्ध नहीं
इतने पर भी प्रमुख वहीं, तब कैसे मिलता न्याय कहीं ?

( २६८ )

इसलिये तो बेटा खोया, बनी रही नित लाचारी
उसकी जाया होकर भी, कहला न सकी मैं महतारी,
सत्यवतीपर[31] उंगली कोई, उठा न पाया, सत्य यही
वह साहस[32] अपने में बेटे ! ला न सकी मैं कभी कहीं.

( २६९ )

भारतीय थी, अतः रही, मर्यादा अपनी, पितुकुलकी
प्राप्त नहीं कर सकी कहीं से बेटे ! औषधि उस हल की,
बचन दिये पर जनक[33] न उसका आया, भेद न खोल सकी
प्रसव कालतक मन की उलझन, नहीं किसी को बोल सकी.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २७० )

मां बनते हो भारतीय नारी की, सृष्टि बदल जाती
भारतीय इतिहास कह रहा, उसकी दृष्टि बदल जाती,
पर मेरा मातृत्व मान सम्मान, लिये था कब आया ?
इसीलिये अविलंब पुत्रको, था मैंने भी अलगाया"

( २७१ )

कहा धर्मने—"किन्तु खेद है, जब तुमने यह सब जाना
सानुकूल स्थिति में भी निर्बल, रहने का था क्यों ठाना ?
क्यों न बनी कह शकुंतला, क्यों लेकर बैठी उसे नहीं ?
क्यों अलगाया हिय का टुकड़ा, क्यों पलको में रखा नहीं;

( २७२ )

जब खाया था धोखा ही तो, मन मारे ही रह जाती
भारतीय थी, सुत के खातिर, दुख दुनिया का सह जाती,
पाल पोस कर बड़ा उसे ही करती, तपस्विनी बन कर
उंगली कौन उठाता ? जीती, ऐल राज्य में बनठन कर.

( २७३ )

क्यों यह साहस नहीं दिखाया, क्रांति-कार्य अनिवार्य किया
क्यों न मिटाया इस दुर्गति को, कोई नव सत्कार्य किया ?
निलज्ज नर शासित संस्था को, क्यों न लजाया और अहो !
मौन तुम्हारा नारी हित में, कहा बना शुभ तुम्हीं कहो !

( २७४ )

इसनी सूझबूझ होकर भी, नहीं समस्या सुलझाई
इतनी प्रतिभा होकर तुम में खिली न तुम ! क्यों मुरझाई ?
प्रतिभा और समस्या का क्यों अहो ! बिठाया मेल नहीं ?
दोनों पूरक होकर जीवन हन्त ! बन गया खेल नहीं ?

( २७५ )

तुम नारी का एक रूप ही, लेकर बैठी, खेद यही
पुरुष वर्ग की रीति-नीति का, तुमने परखा भेद नहीं,
नर प्रधान संस्था ने सचमुच, निज विधान को पुष्ट किया
दुर्गा[३५] बन कर उसे तोड़ ने का कब तुमने कष्ट किया ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २७६ )

वह तेरा अपना जाया था, यह भी तो तुम भूल गई !
आर्या हो, इतिहास पृष्ट को, दे न सकी तुम दिशा नई,
कुछ तो आत्मनिरीक्षण करती, कोई मार्ग निकल आता
भाई के हाथों भाई की, हत्या देख नहीं पाता.

( २७७ )

नहीं समय का साथ दिया, माता ! न समय से बोध लिया
केशव सी नित नई धर्म-धारा का तुमने शोध किया,
निश्चित जीव अभागा था वह, मां होकर मां नहीं मिली
निरपराध वह कोमल कलिका, गोद तुम्हारे नहीं खिली.

( २७८ )

भाई था इसलिये नहीं अब, सत्य वही बतलाता हूं
वैसी शुचि आत्मा निश्चय ही, अन्य न कोई पाता हूँ,
मूर्तिमंत यश, शील, सत्य का, साक्षात्कार दिया जिसने
ऐसा एक वही, हत्या से, उसके मेरे हाथ सने.

( २७९ )

हा ! दुर्भाग्य ! अभी आकर के, परिचय तुमने मुझे दिया
ओ री माता ! पांडव जननी होकर, तुमने कुछ न किया,
वीर धनुर्धर, त्यागी, धर्मात्मा को तुमने मरवाया
अपने ही बेटों के हाथों, अंत पुत्र का करवाया !

( २८० )

नहीं सवारा तुमने अपना भाग्य, हो रहा खेद यही
या न दिया हम को भी अवसर, किया तुम्ही ने भेद नहीं ?
क्यों न जगा मातृत्व तुम्हारा, बोलो उसके ही कारण ?
भारतीय स्त्री आदर्शों का, दिया नहीं क्यों उदाहरण ?

( २८१ )

ऐसा अद्भूत विक्रम जिसका, उसको हमसे अलग किया !
ज्येष्ठ सहोदर की हत्या का, पातक हमपर लाद दिया,
माँ ने सहोदरों के हाथों, एक सहोदर मिटा दिया
नहीं भ्रूण हत्या की लेकिन, अंत वृत्त क्या लिखा दिया ?"

•

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २८२ )

बोली कुंती, "पुत्र ! बहेगा कितना ? कुछ तो संयम कर
बोल रहा यह स्नेह बंधुका, फिर भी कुछ तो नियमन कर,"
कहा धर्मने– "पर माता ! जो हुआ उचित तो हुआ नहीं ?
वत्सलता का अल्प अंश भी, हृदय तुम्हारे छुआ नहीं.

( २८३ )

अब भाईका वियोग मुझसे, निश्चित सहा नहीं जाता
जीवन लीला समेट लूं मैं, मनमें आज यही आता,
हृदय वज्र सा बना, न पिगला कभी, वृत्त अब यह लाई–
बाद मृत्युके ? कहने आई, कर्ण तुम्हारा था भाई.

●

( २८४ )

चिह्न कौन सा है भैया का, शेष अभी, यह तो बतला ?
जिसे लगाऊँ अब छाती से, शांत करूँ मन-दाह भला,
होता यह, अंत्येष्टि कराती, उसी दिवस पर आ जाती
तो उसको तुम गले लगाती, अंतिम यह सुख तो पाती ?

( २८५ )

मैं भी स्पर्श चरण का करता, भाग्य कमाता इतना ही
पर यह भी तो बना न तुझसे, बनी रही निर्बलता ही
भाग्य न इतना भी दे पाई, उसकी जननी तुम होकर ?
इतना भी बन आता तो मैं, पूण्य कमाता पग धोकर.

( २८६ )

क्या ही अच्छा होता, आती उसी शाम को, साहस कर
तो शव यात्रा निकालते हम, तब भैया की सजधज कर
अब खोजूं मैं उसे कहाँ ? कौन सी दिशा में कह जाऊँ ?
उसका पार्थिव देह शोध कर, कहो कहाँ से अब लाऊँ ?

( २८७ )

अट्ठारह दिन में अठ्ठारह, अक्षौहिणी को नष्ट किया
घास, फूस, मूली, गाजर सा, नर रत्नों को काट दिया,
कहीं किसी का धड़ है केवल, पैर किसी का कहीं पड़ा
कहाँ पड़ा है मुंड, दृस्य है समर धरा का, यही बड़ा.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २८८ )

वृत्त सुना है निकट सुयोधन के, शृगाल[३६] भी था आया
समर भूमि को राज्य बनाना, जब पशुओ को था भाया,
क्या ऐसे में मैं भैया की, देह सुरक्षित पाऊँगा ?
कैसे सद्गति उसको दूंगा ? कैसे चिता जलाऊँगा ?

( २८९ )

आयें उतने मिटे यहाँ पर, किसको सद्गति कहो मिली ?
किसने किसका पता किया, है किसकी कोई चिता[३७] जली ?
किसे समय[३८] था यह करने का, वन पशुओं का भोग बने !
नित्य नया मोर्चा[४०] खुलने से, ऐसे ही तो योग बने !!

( २९० )

यह भी कैसी अहो ! दुर्गति, नर तनुओं की हुई यहाँ
विद्वानों ने अत्याग्रह से, दुर्लभ नर तन जिसे कहा ?
क्यों न कहे तब द्वापर[४१] में भी, यह मानव पशु तुल्य नहीं ?
जब उसके मन मानव-तन-जीवन का, कोई मूल्य नहीं !

( २९१ )

एक-एक आक्षेप तुम्हारा, पीड़ा ही पहुँचाता है
एक न अनुचित, किन्तु जब तुम्हें, ज्ञात सभी हो जाता है,
क्यों बैठी तुम मौन लिये तब, आप हुए पर अपराधी
क्या है अनुचित तब तुमपर मैं, तनिक दिखाऊँ नाराजी ?

( २९२ )

क्यों न बनी तुम सजग बताओ, तुम तो जननी थी उसकी ?
छोड़ कृष्ण को हम सब थे, अज्ञात, भूल यह कह किसकी ?
क्यों तुमने आ युद्ध भूमि पर, भाई का परिचय न दिया
कैसी माँ हो, अन्तिम क्षणतक, अपना भाग्योदय न किया !

( २९३ )

कर्ण-मृत्यु-आनन्दोत्सव में, क्यों तुम आई नहीं वहाँ
पूछा क्यों न तभी आकर के, यह उत्सव किसलिये यहाँ ?
सहज सभी यह हो सकता था, इतना भी तुम कर न सकी
जब जाया था तेरा ही तो, उसे बचा भी नहीं सकी.

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# २

क्रूर नियति ने दंड दिया
मुझपर वज्राधान किया
भूखा वात्सस्य मुझे तड़पाता है
देश चाहता आज समन्वय
निहत्था, कैसे शस्त्र चलाऊँ मैं ?
युद्ध की नीति यही कहती भाई
क्यों न पार्थ सा निकट किया ?
लखी बुआ की व्यथा नहीं
प्राण पार्थ के मांग न पाये
नहीं लड़ सकी बिपदाओं से
दूध बोलता नित्य यहाँ
क्यों केशव ने भेद न खोला
शत्रु नहीं वह मां जाया है
क्यों चाही हत्या ही उसकी
मान बैठा था कर्ण मुझे भाई
कर्ण मृत्यु में कृष्ण प्रमुख है
अवैध समकालीन जो रहे
वहाँ अंधेरा एक तुम्हारा
जन्म अलौकिक ऋषि मुनियों के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( २९४ )

सच तो यह अपराधी हूँ मैं, भूल ध्यान में अब आई
समानता दोनों के मुख[४२] की, छिपी नहीं यह सच्चाई,
बीच-बीच में मेरे मन को, शंका तीव्र सताती थी
देख कर्ण को कभी-कभी बेचैन बनाकर जाती थी.

( २९५ )

तुम दोनों के आनन का मैं सूक्ष्म अध्ययन था करता
साम्य देखता, किन्तु पूछने, रहा सदा तुम से डरता,
आज भूल वह खाये जाती, हृदय जलाये जाती है
किसे सुनाऊँ मूक व्यथा यह, कैसे दाह बढ़ाती है.

( २९६ )

प्रयत्न करने पर भी तो माँ! सफल नहीं मैं बन पाया
सच क्या तुमसे गया न पूछा, कई बार जब मन आया,
क्या ही अच्छा होता, शंका निरसन की हिम्मत आती
सम्भव था उस मन्थन से कुछ, नई कहानी बन जाती."

( २९७ )

बोली माता-"रंगभूमि के समय, रहा डर बना यही
इसीलिये भी मूर्छा आई, कहीं भेद यह खुले नहीं,
क्या करती कह, समाज-बन्धन रहे, अतः मन मार गई
रंगभूमि का अवसर खोया, आप और मजधार गई.

( २९८ )

कन्या मिटकर माँ बनने का, था मैंने अपराध किया
पुत्र त्याज्य इसलिये बना, अविलम्ब नदी में बहा दिया,
देख सकी तब नहीं ठीक से, उसका मुख मैं, सत्य यही
रंगभूमि के अवसर पर ही देखा, तो देखती रही.

( २९९ )

प्रतिकृति मेरे ही मुख की, ज्येष्ठ लाल ले आया था
यही देखकर मूर्छा[४३] आई, मन भीतर घबड़ाया था,
कहीं किसी के मन में बेटे! आ न जाय साम्यता यही
इसीलिये तो बचा रखा था, मैंने निज को निश्चय ही.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३०० )

अच्छा होता कभी किसी दिन, मन हल्का तू कर लेता
करता साहस, शंका सम्मुख, निर्भय बन कर धर देता,
तो बेटे ! कुछ कहे बिना ही, तुमको उत्तर मिल जाता
सहज प्राप्त करते भाई को, भाग्य हमारा खिल जाता.

( ३०१ )

आज कह गया-'तेरे मुख की समता मुझे सताती थी
उसे देखकर रह-रह मुझको, शंका आ ही जाती थी,'
तुमने भी तो अवसर खोया, उद्घाटन ही नहीं किया
निर्भय बनकर उदारता का, परिचय तुमने नहीं दिया.

( ३०२ )

किन्तु दोष क्यों भला तुम्हें दूं, तब तो मैं भी घबड़ाई
समाज के डरसे ही बेटे ! मेरी ममता कतराई,
पुरुष वर्ग की प्रधानता ने, सोख लिया था बल मेरा
अंधकार ने सभी ओर से, लगा रखा था निज डेरा.

( ३०३ )

केशव के उपरांत स्वयं मैं, गई उसे समझा ने को
किन्तु हुई थी देर, अतः लाचार वही था आने को,
उसने जो कुछ कहा,[४४] उचित था, सफल मुझे होने न दिया
अपितु मान सम्मान मुझे दे, बेटे ने था विदा किया.

( ३०४ )

वह अपने तर्कों[४५] में कितना, सचोट था, आश्चर्य लगा
कहीं नहीं इतिहास कहेगा, माता को पुत्र ने ठगा,
अभियुक्ता के प्रति भी उसके मन में, आदर भव्य मिला
महान ही थी आत्मा उसकी, मिलन मधुरतम, दिव्य खिला.

( ३०५ )

इतना कहते शब्द अड गये, कुन्ती के, स्वर टूट गया
और रो पड़ी फूट फूट, जब बाँध हृदय का टूट गया,
पुत्र विरह में प्रकट रूप में, सुध-बुध माता ने खोई
हा ! जीवन में प्रथम बार ही, कर्ण-शोक में वह रोई.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३०६ )

विकलावस्था देख मातु की, धर्मराज भी घबड़ाया
क्या बोले, कैसे समझाये, कुछ भी सोच नहीं पाया,
स्वर में कंपन, बोल गया माँ ! क्रूर नियति ने दंड दिया
निर्दय बनकर, मेरे भावुक मन को, खंड विखंड किया.

( ३०७ )

पहले ही मैं अति विह्वल हूं, था न राज्य का मोह मुझे
केवल भाई मिल जाता, भाई का मिलता स्नेह मुझे,
तो भी मैं सब कुछ पा जाता, पर तुमने भी घात किया
अब तक रोती आप रही, अब मुझपर वज्राधात किया.

( ३०८ )

होनी हो ही गई किन्तु अब, होनी भी निर्दोष नहीं ?
होनी को बदनाम करे क्यों ? हम दोषी अब आप नहीं ?
कृपा करो, बस करो दुःख यह, मुझसे सहा नहीं जाता
संभलो, मुझे संभालो तुम ही, बेटा हूं, तुम हो माता."

( ३०९ )

बोली जननी–रे ! भूखा वात्सल्य मुझे तड़पाता है
पुत्र निहत्था आकर सम्मुख, प्रतिपल हृदय जलाता है,
कहता–"माता ! देखो, कैसे, केशव ने प्रतिशोध लिया
माँ जाये को, मां जाये की, हत्या कर यह बोध दिया.

( ३१० )

युद्ध नीति का नाम रटन कर, मुझको तुमसे दूर किया
मां से बेटा नहीं मिलाया, क्या न कार्य यह क्रूर किया ?
ज्ञात हुआ था कुन्ती सुत हूँ, मैं तो था अनजान भला
इतने पर भी कहा पार्थ से, वीर ! न रुकना, बाण चला.

( ३११ )

आज देश चाहता समन्वय, पर विघटन ही यहाँ चला
इस प्रवाह में देखा बहता, आज देश में भला-भला,
दूर किये को गले लगाना, आवश्यक था आज जहाँ
केवल हिंसा करो, यही श्रीकृष्ण नीति का राज रहा.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३१२ )

तुरंत बोले—' शेष यही तो, विषाक्त कांटा एक रहा—
बीच राह के, इसे मिटा दो, यही काम अब नेक रहा,"
कहा पार्थने—"किन्तु निहत्था कैसे शस्त्र चलाऊँ मैं ?
नीति, धर्म का विरोध करके, कैसे कीर्ति लजाऊँ मैं ?'

( ३१३ )

तो केशवने कहा—"युद्ध की नीति यही कहती भाई !
वह तो प्रतिपल समय, अवस्था, देख बदलती है आई
कंटक तो बस यही एक अब, निकाल, कर सत्कार्य यही
भले निहत्था, मार गिरा दे, महत् कार्य अब शेष यही.

( ३१४ )

पूर्णाहूति हो युद्ध-यज्ञ की, है श्रीफल उपयुक्त यही
विधान विधिका यही एक अब अटल, टले यह वक्त नहीं.
करो समय का मूल्य, अन्यथा हाथ न फिर यह आयेगा
रे ! तुमसे क्या, मुझसे भी, फिर कभी न मारा जायेगा.

( ३१५ )

ऐसा कहकर मुझे निहत्था मारा, तुम से जुदा किया
हन्त ! पार्थ से मिले बिना ही, मुझे जगत से विदा किया,
नहीं धर्म से मुझे मिलाया, बात भीम से हुई नहीं
नहीं नकुल, सहदेव मिले, यह बात कृष्ण-मन छुई नहीं.

( ३१६ )

कैसे छू सकती बतलाओ, कहीं सहोदर है उनका ?
अतः क्यों न माने केशव फिर, एक सहोदर को तिनका ?
तिनके से क्या अधिक मूल्य, केशव ने मेरा कहो किया ?
झटके से सिर कलम किया औ' भेज मुझे परलोक दिया.

( ३१७ )

सही पार्थ था जब मैं ही तो, क्यों न पार्थ सा निकट किया
नहीं युद्ध में नीति दिखाई, अथ से इति तक कपट किया,
नहीं मिलन[४६] में अपनापन था, दूत कार्य ही स्पष्ट किया,
निज पर दोष, आने पाये, अतः मिलन का[४७] कष्ट किया'.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३१८ )

आये भी तो अंतिम क्षण में, जब कि कर्ण लुटा हुआ
बचन बद्ध था, इसीलिये भी, उसका उर था फटा हुआ,
लुटे हुये की हन्त मिटाकर, कहा 'एक सत्कार्य किया'
बोलो इसमें वासुदेव ने, कौन राष्ट्र का कार्य किया ?

( ३१९ )

मेरी हत्या में माधव ने, कैसा अभिनय सफल किया ?
तेरी आशाओं को निर्मम, बनकर कैसे विफल किया ?
मुझे निहत्था मार कौन सा कहो, अहो ! पुरुषार्थ किया ?
मेरी हत्या में केशव ने, कौन कार्य निःश्वार्थ किया ?

( ३२० )

"मित्र सुयोधन का हूं" केवल, नित्य चले बस मान यही
"कुंती सुत भी हूँ" इतना भी, रखा साथ में भान नहीं,
लाभ उठाया अतः समय का, समय कृष्ण ने नाप लिया
एक निहत्था मार गिराया, कार्य घिनौना आप किया !

( ३२१ )

यों तो मेरी मित्रनिष्टता, काम न आनेवाली थी
कपटी, छली पुरुष के आगे, लूली पड़नेवाली थी,
यह तो मैं भी समझ गया था, निष्फल मैं बन जाऊँगा
कुटिल नीति के सम्मुख कैसे, निजको निर्भय पाऊँगा ?

( ३२२ )

अठ्ठारह दिन युद्ध चला पर, मुझे मिला मौका कितना ?
दश दिन तक तो वीर पितामह देवव्रत का धनुष तना,
गुरु द्रोण उपरान्त आ गये, मेरा ही प्रस्ताव रहा
पंद्रह दिन यों बीत गये, मैं सेनापति ही बना कहाँ ?

( ३२३ )

नहीं मित्र ऋण चुका सका मैं, प्यार तुम्हारा पा न सका
किसी बंधु को कभी प्यार से, बढ़कर गले लगा न सका,
घेर लिया था चहुँ ओर से, दुर्भाग्य ने, हुआ न यही ?
केशव ने भी अंतिम क्षणतक, नीति स्वयं की तजी नहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३२४ )

यह भी कैसी शत्रु भावना, मेरे हित, उनमें आई ?
महान होकर दूरदर्शिता, तनिक न जीवन में पाई !
राष्ट्र पुरुष क्या ऐसे होते ? जिन्हें वीर की चाह न हो
अपना पक्ष प्रबल करने की, जिनमें कोई कला न हो.

( ३२५ )

मुझसे मिलने आये भी तो, सूत्र न ऐसा एक मिला
इसीलिये तो कृष्ण मिलन में, एक नहीं सुविचार खिला,
जो कुछ लाये, सभी गौण था, हेतु न उनका एक फला
सच कहता हूं उस मंथन से, कोई सार नहीं निकला.

( ३२६ )

बोला—"कुंती के जाये हो, पांडव बंधु तुम्हारे हैं
राज्य मिलेगा तुम्हें, चलो, आज्ञा में होंगे सारे हैं,
जो तुम कहो करूंगा मैं भी वही, कृष्ण की कथा यही
मूल प्रश्न को रखा भुलाये, लखी बुआ की व्यथा नहीं.

( ३२७ )

इस प्रतिभा संपन्न पुरुष ने, मुझसे मिलकर कुछ न किया
जिससे कोई नया मोड आ सके, न वैसा पंथ लिया,
राजनीति ले आये केवल, प्रश्न कर्ण का अन्य नहीं ?
नहीं राज्य का लोभी था मैं, मुझको परखा गया नहीं.

( ३२८ )

प्राण पार्थ के मांग न पाये, दानी का अपमान किया
दरिद्रता इतनी वाणी में ? महानता को घटा दिया,
आये थे तो प्राण मांगते अर्जुन के, मैं दे देता
मिट जाता आप ही, शांतिका सांस अंत में मैं लेता.

( ३२९ )

मैं दानी था, जब दानी से मिलने केशव आये थे
तब क्यों अपनी भव्य, दिव्यता अपने आप भुलाये थे ?
नहीं अमर इतिहास किया दानी का, अपना, खेद यही
कुंती जाया ज्ञात किये पर भी, दिखलाया भेद नहीं ?"

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३३० )

ऐसा क्या क्या नहीं कह रहा, सम्मुख आकर अब बेटा
कहता—माता ! ऐल राज्य में, क्या मैं ही था कह हेठा ?
क्या उत्तर दूं ? नहीं सूझता, मन मेरा लगता न कहीं
मेरे मन के महायुद्ध की पुत्र ! तुझे कल्पना नहीं."

( ३३१ )

कहा धर्म ने—"वह माता का हृदय, कहा से मैं लाऊँ ?
तेरी वत्सलता, ममता को, कैसे निज में दिखलाऊँ ?
पर वह मेरा ज्येष्ठ सहोदर, यह तो भुला नहीं सकता
रक्त, मांस का रिस्ता अब तो, चुप्पी साध नहीं सकता.

( ३३२ )

हम सब में था ज्येष्ठ, सभी के लिये पूज्य था, अन्य नहीं
तुमने उसका प्रसव किया, पर, तुम कहलाई धन्य नहीं,
आप बनेगा अमर वही, इस विज्ञापन में भूल नहीं
हन्त ! प्राप्ति में उसके तुम ही, मिली हमें अनुकूल नहीं.

( ३३३ )

जीवन भर तो उसे भुलाया, स्मरण अंत तक नहीं किया
ऐसा तो मैं नहीं कहूँगा, पर, परिचय तो यही दिया ?
सहोदरों में बढ़ी शत्रुता, इसको मन से दूर किया
ऐसा भी तो नहीं कहूँगा, किन्तु कार्य तो क्रूर किया !

( ३३४ )

कहो, अन्त में तुम्हें क्या मिला, उसकी स्मृति में नित्य जली
तुम्हीं बताओ किस के डरसे, पुत्र विरह में नित्य पली ?
क्या पाया इस पर भी बोलो, सिवा वेदना के तुमने ?
मरवा कर बेटों से बेटा, प्राप्त किया क्या जीवन में ?

( ३३५ )

ओ री माता ! कुछ तो बोलो, इस चुप्पी में क्या पाया ?
क्या वात्सल्य मिटा भारत से, कहीं दृष्टि में कह आया ?
यह भारत, तुम इस धरती[४८] की, तुममें संकर[४९] रक्त नहीं
तुम आर्या हो, कर्म भूमि की, संस्कारों से[५०] रिक्त नहीं.



७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३३६ )

कर्मभूमि की माताओं के, मिट सकते संस्कार नहीं
भोगभूमि की माताओं में, इनका आविष्कार नहीं,
पर तुमने तो भैया के हित, अनुचित ही व्यवहार किया ?
नहीं लड़ सकी विपदाओं से, उसे मृत्यु उपहार दिया.

( ३३७ )

यह अनुभव की वाणी माता ! दूध बोलता नित्य यहाँ
यहाँ दूध की कीमत होती, जग में ऐसा सत्य कहाँ ?
यहाँ दूध के मानी, माँ का परिचय पाया जाता है
दूध इसलिये भी राधा का, अपना मूल्य चुकाता है.

( ३३८ )

नहीं, नहीं, पालक माँ राधा, राधा, प्रसवा सही मिली
कैसे पालक माता राधा, जननी बनकर नहीं खिली ?
उसकी यह साधना कर्ण के लिये, बनी वरदान नहीं ?
बोलो, भैया के जीवन में, देखो तुमने कमी कहीं ?

( ३३९ )

'राधा, अधिरथ' दोनों की साधना, कर्ण के लिये रही
दोनों का पुरुषार्थ और वात्सल्य, किसी में कमी नहीं,
कैसे हम ना कहे इसे कह, रक्त अन्य का होकर भी—
अपना बनकर पला, बढ़ा वह, दर्शन है प्रत्यक्ष सभी.

( ३४० )

उनसे परिचय कर लेती तो, निश्चय ही अच्छा होता
सच कहता हूँ यों न सहज में, तब तो भाई को खोता,
कर्ण प्राप्ति में हम क्या पाते ? यह तो अब कह सकूँ नहीं
पर जो होता, अच्छा होता, बन्धु विरह सह सकूँ नहीं.

( ३४१ )

ऐल आगमन बाद यहाँ का, सारा नक्शा बदल गया
दुर्गति वर्णाश्रम में आई, प्रतिपल देखा दृश्य नया,
दोष नहीं मैं तुमको दूँगा, 'यह भूलूंगा किन्तु नहीं—
नहीं मिलाया मुझे बन्धु से, मन से जाता नहीं यहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३४२ )

हत्या उसकी केशव के ही, धर्म युद्ध की, नीति रही
तीर पार्थ का चल सकता, अन्यथा निहत्थे पर न कहीं,
मैंने भी तो उकसाया था, किन्तु शत्रु था जान यही
था मैं भी अज्ञात, किन्तु थे, माधव तो अज्ञात नहीं.

( ३४३ )

कहीं पदच्युत नहीं हुआ वह, नेक[५७] मिला अपने पथ का
रक्त मांस से पंकिल[५२] भू में, चक्र फंसा था जब उसका,
नीति पंथ पर अडिग, स्वयं स्फूर्त था, लिये उत्साह लड़ा
दिन-दो पहरों[५३] में संकट में, यों था अपने आप पड़ा.

( ३४४ )

अंत समय तक पार्थं कर्ण से, था केशवने दूर रखा
मित्रनिष्ठ कर्णं को कृष्णने, भलीभांति देखा, परखा,
विजय कर्ण पर सिवा न इसके, संभव थी, जानकर यही—
निःशस्त्र मारा गया वीर वह, इसमें तनिक असत्य नहीं.

( ३४५ )

बना रहा डर "कर्णं भीष्म द्रोण "का, हमें था अभय नहीं
सत्य यही था सिवा कपट के, हमें मिलेगी विजय नहीं,
इसीलिये भी था केशव ने, अपने मनका[५४] कहा किया
खेद यही, पर एक पार्थं का, रक्त व्यर्थ ही बहा दिया.

( ३४६ )

डर दो[५५] का तो निकल गया था, 'कर्ण सुयोधन' शेष रहा
क्यों न कान में आ चुपके तब, केशवने यह भेद कहा ?
क्यों हत्या अनिवार्य बनी ? क्या इसके सिवा न चारा था ?
कूटनीतिविद् होकर भी क्यों, केवल यही विचारा था ?

( ३४७ )

हम तो थे अनभिज्ञ, कृष्ण को, ज्ञात वृत्त जब सारा था—
अबतक की भूल को कृष्णने, फिर क्यों नहीं सुधारा था,
क्यों उसकी हत्या ही चाही ? यही समझ में सका नहीं
क्यों न कर्ण का रहस्य खोला ? था न समय उपयुक्त वहीं ?[५६]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३४८ )

वह चरित्र का उदार ही था, मैंने भी था सुना यही
कहीं नीति में नहीं गिरा वह, शब्द तुम्हारे सभी सही,
हा ! केशव ने इतने पर भी क्यों, खोला यह भेद नहीं ?
क्यों न लगाया उसे गले से, होता है अब खेद यही.

( ३४९ )

क्यों न कहा कर्ण से–"कर्ण ! अब के तो हाथ मिला जाना
सहोदरों को गले लगाना, अंतिम भाग्य खिला जाना,
कौरव कुल मिल गया धूलि में, क्यों ? कैसे ? यह मन लाना
और किसी से क्यों लडना अब, दुर्योधन से समझाना.

( ३५० )

शेष बचा दुर्योधन ही जो, मित्र अनन्य तुम्हारा है
सार्थक उसकी शेष आयु हो, हमनें यही विचारा है,
आओ अब हम देश बनाये, होनी की चिंता न करो
भूतकाल को भूल, सजग बन, वर्तमान में प्राण भरो.

( ३५१ )

ज्येष्ठ, श्रेष्ठ हो हम सबमें तुम, मैं भी अनुज तुमारा हूं
प्रथम भेंट में ही मैं आगे, अहो ! तुम्हारे हारा हूं,
निश्चित ही विधि विधान है कुछ विचित्र, आया समझ नहीं
इसलिये भी अंतिम क्षणमें, भेंट आपसे आज रही.

( ३५२ )

'डरो न दुर्योधन से, उससे फिर निबटेंगे' कहा यही ?
अब तो आओ पांडु पक्षमें, हुआ शत्रु दल स्वहा नहीं ?
दुर्योधन को तुम संभालना, प्रयत्न करना, रहा-सहा
आओ देश बनायेंगे, कृष्ण ने क्यों न कर्ण से कहा ?"

( ३५३ )

अब विचार तो यही आ रहे–"सब कुछ केशव होकर भी
डर तो केवल एक उसीका, औ' वह अपना होकर भी,
क्यों केशव ने भेद न खोला, पास हमारे, खेद यही
वह भी तो था बंधु हमारा, हुआ व्यर्थं यह वेध नहीं ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३५४ )

सत्रहवे दिन आपा खोकर, जब मैंने था क्रोध किया
'मृत्यु कर्ण की' मुझे चाहिये, अर्जुन को था बोल दिया,
क्यों न कहा–केशवने तत्क्षण, "क्यों आपत्ति बुलाते हो ?
क्यों अपयश अपने ही हाथों, आप अहो ! घर लाते हो ?

( ३५५ )

वह तो बंधु हमारा है, मां कुंती का ही जाया है
राधा नन्दन नहीं कर्ण, वह राधा का अपनाया है,
ज्ञात हुआ था रहस्य मुझको, कर्ण जन्मका सारा है,
क्यों कर उसकी मृत्यु चाहते, वह तो बंधु तुम्हारा है.

( ३५६ )

अब विचार का समय नहीं है, निर्णय तुमको करना है
एक नया डग अब तुमको ही, नवोत्साह ले भरना है,
निःशस्त्र बन कर्ण के सामने, अब तुम को ही जाना है
वह है ज्येष्ट सहोदर, जाकर, वन्दन कर के आना है.

( ३५७ )

बहुत हुआ इतना ही नाटक, वह साधारण व्यक्ति नहीं
उसके सम्मुख तुम्हें भेजना, यह अनुचित अभिव्यक्ति नहीं,
उसे ज्ञात है कौन धर्म, यह नहीं पड़ेगा कुछ कहना
केवल जाकर वन्दन करके, खड़े सामने चुप रहना.

( ३५८ )

चिंता तो है एक उसी की, उसके वश होते क्षण में
दुर्योधन की मृत्यु आप है, शेष रहा क्या तब रण में,
निर्भय हो कर जा कर वन्दन करो, सहज में विजय करो
शत्रु नहीं वह, मां जाया है, जाओ, निज में अभय भरो."

( ३५९ )

बस इतना कह देते केशव, करता आज्ञा का पालन
विनम्र होकर, सम्मुख जाकर, करता मैं पद प्रक्षालन,
कैसा सुन्दर प्रयोग था यह, पर केशव से बना नहीं
क्यों चाही हत्या ही उसकी, प्रश्न सताता एक यही.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३६० )

सर्वश्रुत था कर्ण पराक्रम, भीष्म, द्रोण से कम न कहीं
पार्थ छोड़कर सभी गौण थे, अनुचित यह अनुमान नहीं,
शत्रु हाथ में आकर उसको, यों जीवन का दान दिया
ऐसा तो देखा न गया, यह नूतन एक विधान किया.

( ३६१ )

उदारता रिपु के हित इतनी ? देख हुई थी हैरानी
उदारता दिखलाते यद्यपि, अवश्य भृकुटी थी तानी,
पर उसमें क्रूरता नहीं, था पूर्ण रूप से मार्दव ही
किन्तु कहां यह समझ सका मैं, मन था रिपु का भाव नहीं ?

( ३६२ )

मैंने माना तिरस्कार यह, 'लगा घोर अपमान किया—
मेरा राधा सुत ने', मुझको दया पात्र कह छोड़ दिया !
किन्तु समझ यह अनुचित ही थी, बात ध्यान में अब आई
शत्रु भावना नहीं, मान बैठा था कर्ण, मुझे भाई

( ३६३ )

इसकी हो कल्पना मुझे क्यों ? मेरा भी था दोष नहीं
समर धरा पर कर्ण शत्रु था, अतः मुझे था होश नहीं,
"कर्ण मृत्यु के बिना नहीं है शान्ति," यही कह पाया था
इसीलिये भी तब[५९] अर्जुन पर, मैंने क्रोध जगाया था.

( ३६४ )

क्या करता मैं, तेज कर्ण का लजा गया पल में मुझको
क्रोध[६०] भरे स्वर में जब मैंने, कहा लक्ष्य कर अर्जुन को—
गांडीव को धिक्कार, पार्थ ! धिक्कार पराक्रम को तेरे
तेरे रहते हर लेता था, बैरी प्राणों के मेरे.

( ३६५ )

दिन सत्रहवा, प्रहर तीसरा, पार्थ कृष्ण मिलने आये
मैं घायल था, बोल गया, क्यों खाली हाथ चले आये,
प्राण कर्ण के लिये बिना अब, मुझे नहीं मुख दिखलाना
बोल गया तब ऐसा मैं ही, उसे मिटा कर ही आना.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
( ३६६ )

'कर्ण मृत्यु हो' यही ध्येय था, हम तीनों का, सत्य यही
किसी तरह से मरे कर्ण, था मेरे हित सत्कृत्य यही,
'कर्ण मरा' यह सुनकर ही तो, शान्ति मिली मेरे मन को
सोया[६१] सुख से उस दिन मैं भी, धन्य मान कर जीवन को.

( ३६७ )

युद्ध नीति ने रंग जमाया, केशव का भी दोष नहीं
दोष यही, कौंतेय ज्ञात कर, रहा उन्हें भी होश नहीं,
क्यों चाहो हत्या भैया की, यही प्रश्न अब सता रहा
कर्ण मृत्यु में कृष्ण प्रमुख है, कहने को मन सिखा रहा.

( ३६८ )

क्यों न कर्ण का रहस्य खोला, कहाँ रुकावट थी आई ?
हम जैसा ही क्या न कर्ण भी, कहो कृष्ण का था भाई ?
रहस्य जब तक रहस्य था, रिपु मैंने भी तो वह माना
उसको भी था ज्ञात कहाँ ? कृष्ण ने क्यों न यह पहचाना ?

( ३६९ )

क्या ही अच्छा होता, रहस्य खुलता, हवा बदल जाती
होता उपचार ही रोगपर, सुखद भावना बल खाती,
नहीं सुधारक निकले केशव, विध्वंसक ही कहलाये
महायुद्ध के महानाश से, धरती नहीं बचा पाये.

( ३७० )

कितना नर संहार हुआ यह, नही स्वप्नवत् बना सभी ?
अठ्ठारह दिन में ही केवल, होगा, सोचा न था कभी,
रोक सका कोई न इसे हा ! यह भी कम आश्चर्य नहीं
विकसा ने मानवोद्यान को, मिला नहीं सहचर्य कहीं.

( ३७१ )

अस्तु, करे दुख भी कितना अब, होनी ने निज कार्य किया
अंत युद्ध प्रिय मानव ने भी, वही कार्य अनिवार्य किया,
हानि पूर्ति यह कब होगी अब, विचारका यह प्रश्न नहीं ?
उजाड़कर उद्यान अंत में, निज में खोये[६२] कृष्ण नहीं ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३७२ )

सत्य कहा तुमने केशव भी, इस हिंसा पर पछताये
कर्ण मृत्यु पर भी पछताये, नेत्र सजल उनके पाये,
तब हत्या क्यों की भैया की, कुछ तो सोच लिया होता
दूर दृष्टि आती केशव को, तो क्यों भाई को खोता ?

( ३७३ )

माँ की, माँ के महानता की, कीम्मत नहीं घटाऊँगा
निष्ठुर निकली भैया के हित, इतना कहना चाहूँगा,
क्या ही अच्छा होता किंचित्, साहस तुम ही दिखलाती
तो भैया की करुण कहानी, ऐसी नहीं लिखी जाती.

( ३७४ )

अधिक छिपा ने का अब धीरज, शेष नहीं था तुममे भी
सब कुछ तो लुट चुका, लुटा कर ले आई वह वृत्त अभी,
बेटे के उस करुण अंत ने, हृदय तुम्हारा हिला दिया
एक बचा ने गई, दूसरा आप धूलि में मिला दिया.

( ३७५ )

और ज्येष्ठ था वही, यही तुम, आई आज बता ने को
मेरे द्वारा उसे जलांजलि, आई आज दिला ने को,
ऊपर से कह गई, मान्य था, केवल यही विधाता को
तुमने अपने हाथों खोया हा ! हा ! मेरे भ्राता को.

( ३७६ )

तुम से क्षत्राणी के मुख से, क्या सुन ने थे शब्द यही ?
व्यास जी रहे, कर्ण न जीता, मिला एक प्रति शब्द कहीं ?
अपने साथ उसे भी तो तुम, हा ! निर्बल ही बना गई
वीर प्रसूता का पद पाकर, भाई सपना बना गई.

( ३७७ )

ओ री माँ ! इस जलांजलि का, होगा अब कुछ मोल नहीं
बीच पाँच के उसे देखती, दिन होते अनमोल वही,
वह संभव था जीते जी ही, वैसा अवसर मिल जाता
कुछ तो दृश्य नया खिल जाता, जब भैया को मैं पाता.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३७८ )

मैं इतना ही कह सकता हूं, मुझको भाई मिल जाता
सच कहता यह युद्ध न होता, यह भी संभव बन आता,
अंब ! सहोदर मिल जाता तो, मानो मिल जाती जगती
तो यह होनी निर्मम बन कर, ऐसी मुझे नहीं ठगती.

( ३७९ )

कर्णार्जुन के रहते दुर्लभ, भला कहाता क्या बोलो ?
तनिक कल्पना करो, कल्पना के इतिपर ही स्वर तोलो,
अवैध समकालीन जी रहें, ज्ञात हमें क्या अहो ! नहीं ?
क्या मेरा भैया ही जीता नहीं, लगा डर तुम्हें यही ?

( ३८० )

जैसा अबतक हमें सँवारा, सार्थक निज मातृत्व किया
वैसा भैया के कारण क्यों, बोलो परिचय नहीं दिया ?
हन्त ! बहुत ही निर्बल निकली, हम शूरों की माँ होकर
नारी शक्ति को जगा न पाई, बैठ गई बेटा खोकर.

( ३८१ )

भ्रष्ट ऐल शासित मानव, जो शूर वीर कहलाता है
कौन श्रेष्ठ जन्म से ? बताओ, कैसे मन बहलाता है ?
प्रकाश कितना है महलों[६३] में किसके ? देखो झांक यही
आत्म निरीक्षण की मानव को, आई अबतक आँख नहीं.

( ३८२ )

वहाँ अंधेरा एक तुम्हारा, और, पचाता कौन नहीं ?
कार्यं कठिन था तनिक नहीं, पर तोड़ा तुमने मौन नहीं,
नारी के उस प्रखर तेज का, तुमने परिचय नहीं दिया
इस मिट्टी की महानता को, अनदेखा ही नहीं किया ?

( ३८३ )

कर्ण-रहस्य न खुलने पाये, इसीलिये तुम डरती थी
क्यों जीवन में, तुम भी अबतक, फूंक फूंक डग भरती थी ?
प्रश्न कर्ण का ही था ऐसा, कैसे तुमने मान लिया ?
कहाँ कमी भी संकर संतानों को, बेटा गवां दिया.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३८४ )

साहस करती, भैया मिलता, था शंका का स्थान नहीं
नहीं देखती ? 'व्यास, द्रोण, कृप' पाते है अपमान कहीं ?
तुम को केशव के प्रभाव की, क्या अबतक पहचान नहीं ?
ऐल-राज्य 'शासित समाज' से, थे केशव अनजान नहीं.

( ३८५ )

केशव से ही न्याय मांगती, साहस यदि किंचित् करती
तो सामाजिक जीवन में मां ! रंग तुम्हीं निश्चित् भरती,
कर्ण नहीं राधेय, पार्थ है, इतना ही तुम कह आती
सच कहता हूँ तो माधव का, कुछ दायित्व बढा जाती.

( ३८६ )

प्रश्न वंश का हुआ उपस्थित, सत्यवती थी घबड़ाई
वंश बचाया खंडित होते, खोला भेद, न शरमाई,
इसमें सत्यवती ने अपना, मान कहां था घटा लिया ?
प्रश्न भीष्म के सम्मुख अपितु, साहस पूर्वक खड़ा किया.

( ३८७ )

प्रश्न तुम्हारा सामाजिक था, पर तुमने था भुला दिया
न था कर्ण पार्थ के बैर का, वस्तुस्थिति को डुला दिया,
होने को था परिवर्तन ही, लाभ देश को मिला नहीं
नारि-शक्ति जागृति का उपवन, तुम से ही तो खिला नहीं.

( ३८८ )

किस समाज का सोचा तुमने ? यहाँ भूल अन्य की नहीं
कितनी निर्बल निकली, तुमने नारि शक्ति की धन्य नहीं !
समाज का चैतन्य तत्व है नारी, सत्य यथार्थ नहीं ?
चंडी, दुर्गा बनी न जीवन, कर दिखलाया सार्थ नहीं.

( ३८९ )

मां ! ऐलों की समाज रचना, भारतीय तो आज नहीं
तुम जैसी कितनों की इसमें, लुटी गई हो लाज नहीं ?
इस शासन की समाज रचना, भारत हित उपयुक्त नहीं
नैतिकता है वंचित कब से, पावन जीवन सूक्त नहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३९० )

इन विलास प्रिय ऐलोंने ही, नैतिकता पूजी न कहीं
क्या छोटे, क्या बड़े, किसी पर कोई बंधन, कहीं नहीं,
चाहे जो इतिहास कहे, पर नव विवाद उठ जायेंगे
जन्म अलौकिक ऋषि[६६] मुनियों के अवैध ही कहलायेंगे.

( ३९१ )

मंत्र-पूत हो कैसे संभव ? नियोग[६७] भी किसलिये चला ?
किसके द्वारा चला, किया यह किसने कैसे रूढ भला ?
सूर्यवंश में क्यों नियोग की, परंपरा दिखती न कहीं
ऐलों में अनिवार्य हुई क्यों ? यह उत्तर भी कठिन नहीं.

( ३९२ )

आर्यों का इतिहास प्रथा यह, नहीं मानता निश्चय ही
प्रपंच यह सब ऐल प्रजा का, कहता है इतिहास यही,
देव प्रजा से अबतक रिस्ता, इनसे तोड़ा गया नहीं,
इसीलिये भी नवजीवन से, रिस्ता जोड़ा गया नहीं.

( ३९३ )

ऐल आगमन पूर्व यहाँ पर, हो इसका आभास नहीं
ऐल विलासी, संभल न पाये, है साक्षी इतिहास नहीं ?
नैतिकता की परंपरा, इसलिये यहाँ की चली नहीं
महानता परखी न गई, तो नारी-दुर्गति टली नहीं.

( ३९४ )

भरतों का इतिहास नहीं यह, इसे ऐल इतिहास कहो
भरतों के जीवन दर्शन[७३] का हुआ न यह उपहास अहो ?
ऐल आगमन पूर्व यहाँपर, देव[७४] जातियाँ मिली नहीं
इसीलिये भी स्वैर संस्कृति, इस धरती पर खिली नहीं.

( ३९५ )

कैसे झुठलाये हम इसको, यह तो होगा न्याय नहीं
यह सब कुछ बन सका, बन रहा, ऐल आगमन बाद नहीं ?
अमूल्य नर तन, जीवन' का, शासन में इनके मोल नहीं
सत्य यही ऐलों की निंदा का, मैं पिटता ढोल नहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ३९६ )

ऐल भिन्न[७५] संस्कृति ले आये, एक सरल आचार नहीं
जिस संस्कृति में नारी भोग्या, नहीं शुद्ध व्यवहार कहीं,
पनपेगा संस्कारी मानस, क्या ऐलों में अतः वहाँ ?
बाढ आगई है संकर की, दृश्य छिपाये छिप न रहा.

( ३९७ )

कर्ण योग्यता सर्व विदित थी, कथन तुम्हारे सभी सही
उसकी गुण गरिमा से थे, अज्ञात कृष्ण भी तनिक नहीं,
कृष्णार्जुन के बदले जोड़ी, कर्ण कृष्ण की बन आती
कूटनीति कृष्ण की, कर्ण की नीति, बहारें नव लाती.

( ३९८ )

होता यह, कर्ण से मिलाते हाथ, मित्रता को लेकर
या कि बुआ के बेटे भाई, एक दुहाई यह देकर,
तो युगांत यह निश्चय ही, स्वर एक नवा लेकर आता
कुछ तो परिवर्तन आता ही, नव आदेश दिये जाता.

( ३९९ )

यही नहीं, श्रीकृष्ण, कर्ण, पार्थ का त्रिवेणी यह संगम—
जो बन आता, तो निश्चय ही, दृश्य खिलाता हृदयंगम्,
सत्यं, शिवं, सुन्दरम् का ही, साक्षात्कार करा जाता
मधुर मिलन यह कुछ ऐसा ही, नव संदेश लिये आता.

( ४०० )

सच कहता हूँ ऐसा कोई साथी, केशव को न मिला
नहीं कृष्ण के पास किसी का, निर्भय होकर हृदय खिला,
परामर्श कर सके कृष्ण से, ऐसा एक न मित्र कहीं
रहे अकेले में ही हरदम, केशव-जीवन-चित्र यहीं.

( ४०१ )

इस तुलना में कर्ण योग्य था, सभी विषय का ज्ञाता था
किसी बात में कमी नहीं था, तर्क विशारद, दाता था,
पर यह उनसे बना नहीं, वें बदले जीवन में न कहीं
कौन वीर है शुद्ध जन्म से, सोचा माधव ने न यही.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# ३

व्यास पूज्य औ' हेय कर्ण है
सदाचार शब्दों में रहते
चुप न कभी इतिहास रहेगा
समाज संचालक नारी
चंडी, दुर्गा तुम सी नारी
यह ऐलों की हार नहीं ?
नर प्रधानता जोर कर गई
प्रकृति रूपिणी नारी है
स्वार्थी मानव प्रधानता ने
मान घट गया गृह लक्ष्मी का
क्या न दिया उसने जीवन में ?
साक्षी यह ऋग्वेद दे रहा
ऐल राज्य की विचित्रता ने
नारी इतनी गई दबाई
जहाँ कृष्ण से मौन
सहोदर क्या होते हैं यह केशव को ज्ञात नहीं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


ऐल जगत के सुधार की, कल्पना कृष्ण मन खिली नहीं
विशाल मनकी तनिक भावना, मुझे कृष्ण मन मिली नहीं,
और तुम्हारी बात ! किसी से, न्याय मांग तुम सकी नहीं
बेटे के खातिर भी तो मां ! कहीं तनिक तुम झुकी नहीं.

( ४०३ )

जहाँ कर्ण-सी और अन्य संतानें, अबतक जीवित हैं
वहाँ उसे ही रखा गया क्यों, बोलो, अंब ! उपेक्षित है,
सत्यवती जागी तुम सोई, क्या न हुआ अन्त में यही
व्यास पूज्य औ' हेय कर्ण है, हुआ यही अन्त में नहीं ?

( ४०४ )

देश, काल या अपना भी तो, तुम से सोचा गया नहीं
पास तुम्हारे मातृ हृदय था, तनिक टटोला गया नहीं,
भाग्य संवारा नहीं तुम्हींने, पहले दोषी माता है
दूजा दोषी शासक, शासन, जो कि सभ्य कहताता है.

( ४०५ )

धन, दौलत, भौतिक सुख साधन, विशाल सत्ता, वैभव है
क्या इसमें ही मान लिया था, ऐलों ने निज गौरव है ?
झांकी भारत के अतीत की, इसमें कैसे भला मिले
सदाचार शब्दों में रहते, कैसे कह संस्कार खिलें ?

( ४०६ )

अस्तु अंब ! इस मंथन से अब, निकलेगा नवनीत नहीं
सुनायगा आक्रोश बंधु का, अब मुझको संगीत नहीं,
क्रूर नियती ने दीपक गाया, आग लग गई तन मनमें
कौन मेघमल्हार गायगा, अपराधी के जीवन में.

( ४०७ )

इस रहस्य को छिपा हमारा, क्या तुमने कुछ भला किया ?
तो भारत के हित में भो क्या, परिचय कोई भला दिया ?
अच्छा होता युद्ध पूर्व ही आती, कहती यह सारा
तो भैया भी नहीं इस तरह, जाता केशव से मारा.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४०८ )

मात ! तुम्हारी निर्बलता ने, भाई हमसे जुदा किया
हा ! हा ! ऐसा जुदा किया, जो दुनिया से ही विदा किया,
अच्छा होता अंतिम क्षण में, निलज्ज बनकर कह जाती
केवल बेटे के कारण ही, समाज निंदा सह पाती.

( ४०९ )

जननी ! सत्यवती सा कोई, विचार मनमें तू लाती
पास कृष्ण के हृदय खोलकर, अपना पाप दिखा आती,
तो निंदा का समय न आता, बेटा गले लगा जाती
केवल केशव के द्वारा ही, अपना भाग्य जगा पाती.

( ४१० )

महानतम आश्चर्य नहीं यह, अब आई, बेटा खोकर ?
इतने दिनका ढका पाप, क्या अब निकलेगा कह धोकर,
क्या ही अच्छा होता माधव, यही कहानी सुन पाते
अपने घर की[७८] लगी आग पर, कुछ तो मन से गुन पाते.

( ४११ )

चुप न कभी इतिहास रहेगा, यह तो सोच लिया होता
जैसा सोचा अभी, कभी तो, साहस अल्प किया होता,
तुम जननी थी, हम सा उसको, तुमने ही तो जाया था
हमसे बढ़ा चढ़ा था वह तो, तुमको नहीं लजाया था.

( ४१२ )

अस्तु, शोक अब भला किसलिये, चला गया जानेवाला
जलांजलि या श्रद्धांजलि दो, लौट नहीं आनेवाला,
अंब ! तुम्हारी क्षणिक भूल ने, अपना जाया मरवाया
तुमने अपने ही बेटों से, अंत लाल का करवाया.

( ४१३ )

मातृ शक्ति को समझ न पाई, होता है अब खेद यही
नर संचालित समाज का, पहचान सकी तू भेद नहीं,
यह भी सच, इस परिवर्तन में, इस धरती का हाथ नहीं
ऐल प्रजा ने नैतिकता का, दिया भूल कर साथ नहीं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४१४ )

अच्छा होता भूत देखती, तो आती यह घड़ी नहीं
अतीत में भारतीय नारी, विपदाओं से लड़ी नहीं ?
क्या न किया उसने जीवन में ? समाज संचालक नारी
तूफानों से टकराई है, यह भारत की महतारी.

( ४१५ )

चंडी, दूर्गा तुम सी नारी, रण संचालन करती है
सूत्र स्वयं करमें लेती है, रिपुओं को दम भरती है,
पुरुष वर्ग पुरुषार्थ हीन है, सिद्ध वही तब करती है
अपने सच्चे रूप, शक्ति को, सबके सम्मुख धरती है.

( ४१६ )

नर स्वार्थी ही रहा सदा का, नारी के हित कृतघ्न ही
इसका तो इतिहास यही है, इससे अब हम अज्ञ नहीं,
नर प्रधानता ने निसर्ग का, तनिक नहीं सम्मान किया
प्रकृति पुरुष, नर नारी, नारी मूल, सत्य-अवसान किया."

( ४१७ )

स्वगत कह गया "नारी पूज्या, शक्ति सनातन सत्य यही
'पूजनीय रूप की मान्यता उसके' मिलता तथ्य यही,
नर नारी का स्नेह समन्वय, सृष्टि-रहस्य-महात्म्य बना
शक्ति रूप-आवाहन करते, नर का पूर्ण हुआ सपना.

( ४१८ )

वह पूज्या है सर्व प्रथम, पर है, अचरज की बात यही
भोग्या के उपरांत अधिकता, पूज्य भाव की आप रही,
माता पद की प्राप्ति बाद वह, और पूज्य बन जाती है
हेय नहीं वह, नीति नरों की, नहीं समझ में आती है.

( ४१९ )

होता यहीं, ऐसा न नरों का, मिलता भी अस्तित्व कहीं
प्रकृति पुरुष के मधुर मिलन का, फल यह मानव तत्व नहीं ?
एक रूप भोग्या है उसका, शेष पूज्य कहलाते हैं
सर्व काल वह पूज्य, यही तो, विद्वज्जन बतलाते हैं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४२० )

पशु का भाव लिये जब मानव, उसको भोगा करता है
तो वह पशु ही, पशुत्व का वह, भाव हृदय में भरता है,
किन्तु वीर भाव से भोगते, पुत्र रूप पति पाता है
आत्म अंश वह पतिका, पत्नी बनती पति की माता है.

( ४२१ )

और इसीसे नारी पूज्या, दिव्य भाव यह कहलाता
कितनी ऊँची आर्य सभ्यता, कितना ऊँचा यह नाता,
पत्नी का मातृत्व रूप में, पर न किया स्वीकार कहीं
आकर[८०] भी इस पूण्य धरा में, यह ऐलों की हार नहीं ?

( ४२२ )

इन ऐलों ने देव जाति के, प्रभाव में आ, कुछ न किया
बने नागरिक[८१], शासक भी पर, इस धरती को कुछ न दिया,
कर्मभूमि यह एकमात्र है, भोग भूमियाँ अन्य सभी
आकर संपर्क में, न इसके, ऐल कहाये धन्य कभी.

( ४२३ )

विलास प्रियता, निलज्जता की ओर मनुज को ले जाती
उसमें यदि नर प्रधानता हो, नया रंग वह ले आती,
नारी भोग्या ही कहलाती, है इसका फिर नियम यही
जहाँ विकारों की ही जय हो, वहाँ चले यम-नियम नहीं.

( ४२४ )

नर प्रधानता जोर कर गई, तभी खिला यह दृश्य नहीं ?
नारी हीम्मत हार गई, अब कहना होगा एक यही,
अतीत कहता इस भारत की, नारी अबला न थी कभी
कुटुम्ब संचालिका वहीं थी, कहते आये यही सभी.

( ४२५ )

कैसे तर्क करे अब इसमें ? प्रकृति रूपिणी नारी है
विश्व प्रसव का मूल वही, अतएव बनी महतारी है,
रचना काया की निसर्ग ने, जब ऐसी ही की उसके
गर्भ धारणा[८२] घटा गई सम्मान, शब्द यह है किसके ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


तो क्या बोलो, निर्बल से, बल हीन और निर्बल जनमें ?
कितने है बल हीन बतायें, कोई मुझ को इस क्षण में ?
यों निर्बल कहने का साहस, किया किस तरह मानव ने ?
कैसे कैसे फूल खिलायें, इस नारी के उपवन ने ?

( ४२७ )

क्या व्याख्या[८३] है ऐलों की, ऐलों से शासित समाज की ?
चली आ रही परम्परा यह, नहीं अभी की, न आज की,
स्वार्थी मानव प्रधानता ने, बन्धन उस पर डाल दिया
तुम बच्चों को पालो पोसो, नेक कार्य यह भी न किया.

( ४२८ )

बल्कि इसीसे हीन-दीन वह, कह उसका अवसान किया
उदाहरण यों अतीत में भरतों[८४] ने शायद नहीं दिया,
भारतीय संस्कृति में ऐसी, नुक्ताचिनी मिली न कही
नारी का सम्मान सुरक्षित रखा गया, था सत्य यही.

( ४२९ )

नारी सर्वेसर्वा बनकर हा भरतों[८५] में सदा खिली
हीन, दीन या केवल भोग्या, वह भरतों में नहीं मिली,
जब से आये ऐल[८६] यहाँपर, स्ववेश्यायें साथ लिये
मान घट गया गृहलक्ष्मी का, उसपर अत्याचार किये.

( ४३० )

क्या न दिया उसने जीवन में ? समाज संरक्षक नारी
अन्यायों से कभी न परिचित, यह कुल रक्षक, महतारी,
आर्य सभ्यता, संस्कृति का, तो मूलाधार ही है नारी
प्रकृति इसलिये उसे कहा, है वह जगती की महतारी.

( ४३१ )

अतीत ही कहता मानव का, नारी सबका मूल रही
नारी के प्रति रहा पुरुष भी, कहीं कभी प्रतिकूल नहीं,
उसके बीच न किया पुरुष ने, कोई हस्तक्षेप कभी
उसके कार्य वही करती थी, रहे सुरक्षित क्षेत्र सभी.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४३२ )

यह परिवर्तन ऐलों के, शासन में भारत में आया
यही कहेगा भावी का मनु, जायगा न यह ठुकराया,
चतुर्वर्ण[८७] का विधान टूटा, ऐल प्रजा के कारण ही
साक्षी यह ऋग्वेद[८८] दे रहा, संकर इनकी देन रही.

( ४३३ )

कैसे भी औ' कहीं किसी से, इनके हुये समागम[८९] है
फलत: जन्मी जो सन्तानें, हेतु बिना का संगम है,
कहीं किसीपर मिला न बन्धन, कहता है इतिहास यही
मात्र खिलौना माना उसको, यह नारी—उपहास नहीं ?

( ४३४ )

बाध्य सोचनेपर हूँ अब मैं यही, अन्त लाचारी है
शिकार इस रोग का हुई जब, मेरी ही महतारी है,
रीति-नीति भारत[९०] की न्यारी, इसीलिये सुत अलगाया
ऐल राज्य की विचित्रता[९१] ने बलात् यह सब करवाया.

( ४३५ )

होनी तो हो गई, दे गई पीड़ा, अब जीवन भर की
अपने ही लाल की उपेक्षा, माता ने जीवन भर की,
केवल डर कर शासन से, थी जिसमें नैतिकता न कहीं
नारी इतनी गई दबाई, माता कहला सकी नहीं.

( ४३६ )

जब कि तनिक जग जाती नारी, वातावरण बदल जाता
यह तो निश्चित कह न सकूंगा, वह क्या परिवर्तन लाता,
फिर भी यह भारत की नारी, कुछ तो नवीनता लाती
इतना कहने को मन करता, मां, माता ही रह पाती.

( ४३७ )

अस्तु, सोचना बहुत हुआ, अब व्यर्थं नहीं कहलायेगा ?
कौन भाग्य को नारी जगके, भविष्य में सहलायेगा ?
इसके उद्धार में कौन वह, व्यास पीठ पर आयेगा ?
जहाँ कृष्ण से मौन, वहां यह स्वप्न, स्वप्न रह जायेगा.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४३८ )

कर्ण शोक अब भला किसलिये ? चला गया जानेवाला
जलांजलि या श्रद्धांजलि दो, लौट नहीं आनेवाला,"
अतः कह गया अंब ! अनिल ही इस उलझनने बढ़ा दिया !
तुमने अपने ही बेटों से, अपना बेटा लड़ा दिया ?

●

( ४३९ )

जैसे पार्थ हमारा बल था, वैसे कर्ण सुयोधन का
कर्ण-सहारा पाकर ही तो, धैर्य बंधा कौरव-धन का,
इधर पार्थ था, उधर कर्ण था, किसी एक का हट जाना
युद्ध न होता, इसी सत्य को, था माधव ने पहचाना.

( ४४० )

उन्हें ज्ञात थी कर्ण योग्यता, यह मेरा अनुमान नहीं
फिर भी केशव द्वारा उसका, किया गया सम्मान नहीं,
कर्ण-मिलन आयोजन में क्यों, पावन हृदय दिया न गया
जब था वह कौंतेय, उसे कौंतेय बनाया क्यों न गया.

( ४४१ )

मान्य मुझे, था शत्रु पक्षमें कर्ण, किन्तु दोषी न मिला
किसने जाकर उसे बताया, तू कुन्ती के उदर खिला ?
अन्त समय तक वह अनजाना हमसे, बोलो क्या न सही ?
कब केशव थे गये बताने,[१२] तू राधा का रत्न नहीं ?

( ४४२ )

अथ से इति तक कर्ण मुझे, निर्दोष मिला, है सत्य यही
क्यों माधव ने यही न सोचा ? इसका अब कम दुःख नहीं,
होता है आश्चर्य यही, जब पृथा पुत्रसे स्वयं मिले.
कहा बुआका बेटा भी, पर, अपनापन ले नहीं खिले.

( ४४३ )

शंका का ही विषय बना यह, मिलन, मिलन ही हुआ नहीं
कुटिल नीति ही साथ रही, सद्भाव हृदय को छुआ नहीं,
जो हो सच है यही कि माता ! मैंने भाई खोया है
अपने हाथों शोक बीज यह, बंधु विरह का बोया है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४४४ )

जब कि हितैषी कृष्ण हमारे, क्यों न बंधु को अपनाया ?
और ज्ञात, राधेय नहीं, है जननी कुन्ती का जाया,
क्यों उसको संकट में डाला, किया मिलन अंतिम क्षण में ?
मात्र दूत का कार्य किया, ! सद्भाव कौन सा था मनमें ?

( ४४५ )

कर्ण कृष्ण का यही मिलन यदि, विलंब[९३] से होता न कभी
औ' होता सद्भाव कृष्ण-मन, भाई को खोता न कभी,
क्यों विलंब से किया मिलन यह, यही समझ मैं नहीं सका
क्यों चाही कर्ण की मृत्यु ही ? विचार कर मैं यही, थका.

( ४४६ )

सत्य, सहोदर[९४] क्या होते हैं, यह केशव को ज्ञात नहीं
रहेगा न यह कारण भी, भावी के हित अज्ञात नहीं,
निरपराध की हत्या कर, केशव ने निजको धन्य किया
भाई द्वारा भाई की हत्या का, पाप जघन्य किया.

( ४४७ )

कृष्ण कर्ण को अपनाते औ' बहुत पूर्व यह बन आता
एक नया आदर्श, अनोखा दर्शन, भी शासन पाता,
कर्ण-कृष्ण का मिलन, संगठन, सैद्धांतिक ही कहलाता
जो ऐलों के इतिहासों में, नवीनता ही कुछ लाता.

●

( ४४८ )

कर्ण कर्ण था, पार्थ नहीं, पार्थ से भिन्न ही कर्ण रहा
मैं ही क्यों इतिहास कहेगा, कर्ण तपाया स्वर्ण रहा,
फूले नहीं समाते केशव, कर्ण प्राप्ति पर निज मन में
अपितु त्रिवेणी संगम इनका, बहार लाता निर्जन में.

( ४४९ )

नहीं समझ मैं सका कृष्ण ने, खोया अवसर क्यों ऐसा
स्वयं विचारक, स्वयं स्फूर्त, नरवीर भुलाया यह कैसा ?
जब कि पराया नहीं निकट का, रक्त मांस का रिश्ता था
था अर्जुन का ज्येष्ठ सहोदर, गुण संपन्न कहाता था.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४५० )

जननी तुल्य बुआ का बेटा, क्या न प्राण से प्यारा था ?
देश, काल, स्थिति को केशव ने, कैसे नहीं विचारा था ?
राष्ट्र कार्य यदि करना था तो, शत्रु कर्ण को क्यों माना ?
पार्थ सखा सा मान उसे भी, था जीवन में अपनाना.

( ४५१ )

निश्चित भाई के खोने में, केशव का ही हाथ रहा
भाई की हत्या से निश्चित, घात देश के साथ रहा,
कर्ण, भीष्म, द्रोण की कहो तो, कौन पूर्ति[१५] कर पायेगा ?
इनकी क्षति पाकर अब भारत, कैसे रंग जमायेगा ?

( ४५२ )

भले मिली हो विजय, राज्य भी, पर यह विष मेरे हित है
कर्ण मृत्यु है हार, कि जिसने, चुरा लिया मेरा चित है,
क्या अच्छा होता माधव की, एक कला भी खिल जाती-
लक्ष्य राष्ट्र कार्य को बनाकर, उदारता मन मिल जाती-

( ४५३ )

तो होता संहार नहीं यह, भीष्म, द्रोण वश कर लेते
उदार बनकर अपने पन का, परिचय भाई को देते,
विदुर महात्मा, थे अपने ही, पवित्र संगम बन आता
विचार कों का यह सम्मेलन, नवीनता ही कुछ लाता.

( ४५४ )

वासुदेव इस कटाकटी में, तटस्थ बन कुछ कर जाते
राष्ट्र-समस्या सम्मुख रखते, प्राण सभी में भर जाते,
उन्मादी दुर्योधन अपने आप, शीतल तब बन जाता
विचार कों का यह सम्मेलन, नवोनता ही कुछ लाता.

( ४५५ )

पर इसमें नेतृत्व कृष्ण का, आवश्यक था सर्व प्रथम
केशव में थी यही योग्यता, अन्य कौन था नर उत्तम ?
तत्कालीन समाज कृष्ण का, क्या करता सम्मान नहीं ?
अगुआ बनकर सम्मुख आते, समय-मांग थी एक यही.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# ४

कर्ण तपाया स्वर्ण रहा
शत्रु कर्ण को क्यों माना ?
कर्ण मृत्यु है हार
भाग्य देश का रोयेगा
लगा ग्रहण खग्रास मान लो
कहता दानी ! बन्धु दान दे
यह कुन्ती का आंचल-धन
रोग कौन, औषधि कौन सी ?
दोष ऐल शासन का ही
त्रेता से द्वापर आया
देव जाति का संग रहा
श्वेतकेतु सा कुछ करते
नैतिकता धन भरत जनों का
केशव ने उपहास किया
क्यों न कृष्ण यह कह पाये ?
हमको भाई नहीं दिया
मोड़ कृष्ण ने दिया नहीं
कर्ण भी पांडु जनों का वैभव है
हन्त सहोदर अलगाया
इस दानी को मरवाया
निरपराध का प्राण लिया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४५६ )

चंद्रवंश की शासन संस्था, शुद्धिकरण[९६] थी चाह रही
रोग कौन सा ? किन्तु किसीने, ली उसकी तो थाह नही,
उदासीन इसमें सब निकले, स्नेह, समन्वय खिला नहीं
वासुदेव को सिवा युद्ध के, अन्य मार्ग क्यों मिला नहीं ?

( ४५७ )

कृष्ण प्रभावी अपने युग के, जो जनता पर छा जाते
लोक सुधारक बनकर खिलते, गीत मेल का ही गाते,
अच्छा होता रक्त बहाये बिना, क्रांति यह आ जाती
तो निश्चय ही आभारी, कृष्ण की भारती कहलाती.

( ४५८ )

किन्तु हुआ ही नहीं सभी यह, भाग्य देश का रोयेगा
रंगमंच पर दुनिया के यह, आगे शीघ्र न आयेगा,
बिगड़ा भारत' हाथ आ गया, साथ कृष्ण का होकर भी
फलती देखूँगा अभिलाषा, मैं अब जीते जी न कभी.

●

( ४५९ )

केशव-आश्रय, पार्थ भीम-बल, यश तो भारी दिला गये
पर इसके स्वर कर्ण-हानि सुन, अब जीवन को हिला गये,
मात ! युद्ध यह भारत हितमें, शाप बनेगा निश्चय ही
लगा ग्रहण खग्रास मान लो, कब छूटेगा प्रश्न यही.

●

( ४६० )

ओह ! मुझे पहले कह जाती, केवल मुझे बता जाती
'कर्ण सहोदर ज्येष्ठ' स्मरण रख, केवल इतना कह जाती,
यही बहुत था मैं भैया के' चरणों में जा गिर जाता
कहता, दानी ! बंधु दान दे, अन्य नहीं अब कुछ भाता.

( ४६१ )

नहीं चाहिये मुझे युद्ध यह, मनसे कहता इतना ही
मुझे चाहिए बंधु, अन्य हो सभी सुयोधन नृप का हो,
दे दो सब कुछ दुर्योधन को, भले रहे खुश दुर्योधन
बदले में चाहिये मुझे तो, यह कुंती का आंचल-धन.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४६२ )

अनजाने में बैर आ गया, तुम, हम सब निर्दोष रहे
कोई किसी को जान न पाया, तब दोषी हम किसे कहे ?
अब तो ज्ञात हुआ हम सबको, अतः भूत को भूल सभी
हम हो लेंगे एक, प्रार्थना, सविनय तुमसे यही अभी.

( ४६३ )

यों कहने पर भी न सफल होता तो कहता स्पष्ट यही—
प्रथम कलम कर दो सिर मेरा, करो बधुवर ! कष्ट यही,
रहो खुशी से मित्रनिष्ठ बन, मुझे गिराना तुम्हें नहीं
मेरे पहले मरे न अर्जुन, कहना सविनय तुम्हें यही.

( ४६४ )

दुर्योधन को दिये बचन का, सहर्ष पालन तुम करना
अपने मैत्री को न लजाना, व्यर्थ न अपयश को वरना,
रहे अबाधित कीर्ति तुम्हारी, नाम तुम्हारा पावन है
सत्यव्रती ! तुम वंदनीय हो, सत्य वही कहता मन है.

( ४६५ )

इसीलिये मेरी अभिलाषा पूर्ण करो, फिर युद्ध करो
सारे पांडव बाद मरेंगे, हेतु तुम्हारे सिद्ध करो,''
मेरा इतना कहना भी तो, उसको विचलित कर देता
ज्येष्ट सहोदर था वह मेरा, भ्रातृ भाव मन भर देता.

( ४६६ )

पाकर केवल उसको ही मैं, धन्य मानता अपने को
तोड़ गिराता कृष्णा, केशव के, हिंसा के सपने को,
एक बार की भेंट बहुत थी, कुछ तो परिवर्तन लाती
कहता भीतर से मन मेरा, सफल न होनी ही पाती.

( ४६७ )

हम सबका परिचय हो जाता, मंगल अवसर वह आता
बन जाता मंगलमय जीवन, रक्त नहीं यह बह पाता,
दाशराज्ञ[९७] युद्ध के बाद यह, हुआ व्यर्थ संहार नहीं
स्थितियाँ[९८] दोनों की समान है, जीत आज यह हार नहीं ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४६८ )

मुझे राज्य की चाह नहीं थी, मैंने चाहा युद्ध[९९] नहीं
पर केशव, कृष्णा के कारण, बना रहा हत बुद्ध नहीं ?
प्रसन्नता मुझको न तनिक थी, मैंने दब कर युद्ध किया
अपना ही कुल आप संहारा, कार्य कौन सा शुद्ध किया ?

( ४६९ )

हन्त ! जानता कर्ण बंधु था, सारा चित्र बदल जाता
यह उपवन भी उजड़ न पाता, नव जीवन यह कुल[१००] पाता,
बंधु मिलनपर मैं भी तो कुछ, अन्दर बाहर खिल जाता
बदल हवा ही जाती सारी, जब कि सहोदर मिल जाता.

( ४७० )

तब तो निर्भय बन केशव से, मैं ही कहना स्पष्ट यही
'जीयो, जीने दो' ही उत्तम, हिंसा मुझे अभीष्ट नहीं,
राग पुराना यह हिंसाका, बोलो कबतक है गाना ?
आओ माधव कृण्वन्तो....मार्यम्[१०१] का पथ है अपनाना.

( ४७१ )

बदलो अपनी रीति नीतियाँ, युग को आज बदलना है
विचारज्ञ हो इसीलिये भी, तुमसे यह सब कहना है,
आज तुम्हीं सर्वज्ञ, राह भूलों को पथपर लाना है
समाज कब से भटक गया है, क्यों न अभीतक जाना है.

( ४७२ )

राज्य हेतु यह युद्ध, क्रूर बन हिंसा ? शोभा दे न कभी
कृष्ण ! बनो नवयुग के दृष्टा, कार्य तुम्हारा यही अभी,
धरती को कुछ तुम्हें नया ही, देना होगा, मांग यही
मानव को जैसे थे रहना, द्वापर में तो उचित नहीं

( ४७३ )

देना होगा कुछ जगती को, इसमें शंका लेश नहीं
बिगाड़ रक्खा है ऐलों ने, यह भरतों का देश नहीं ?
क्या हिंसा ही औषधि इसपर, एकमात्र उपचार रही ?
यह तो कैसे कहा जायगा, द्वापर में तो उचित नहीं ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४७४ )

तुम जैसा नररत्न आज इस, अवनी तल पर अन्य नहीं
ऐल आगमन बाद यहाँ की, धरा, हो सकी धन्य नहीं,
क्या यह तुमने लखा नहीं, क्यों अन्य मंत्र तुमने न दिया
हिंसा के अतिरिक्त मार्ग क्यों, आंगिकार तुमने न किया ?

( ४७५ )

इन ऐलों के किये पाप का, बोझ तुम्हें कम करना था
भारत के बिगड़ी में माधव, रंग तुम्हें ही भरना था,
सारा चोला बदल दिया है, मूल देश का ऐलों ने
दाशराज्ञ युद्ध के बाद में, देव लोक की संस्कृति ने.

( ४७६ )

रोग कौन ? औषधि कौन सी ? रोगी सुधर नहीं पाया
बदले में प्यार के शस्त्र कब, काम कहीं पर भी आया
सूत्र पात कब नयी व्यवस्था का, तुम माधव ! कर पाये ?
इन ऐलों के जीवन में, संस्कार न नव क्यों भर पाये ?

( ४७७ )

'ऐल-शुद्धि-साधना' शोध का, विषय जहाँ था बना हुआ
वहाँ तुम्हारे मानस को यह, प्रश्न अभीतक नहीं छुआ !
विलासिता उच्चांखलता ने, अपना कहा चलाया है
तुमसा तर्क विशारद क्यों यह, सोच न अबतक पाया है !

( ४७८ )

सांधिकाल है, रात्रि जा रही, उषा आ रही, कहना था
युगांत है, उसके स्वागत में, परिश्रमी बन रहना था,
दोष नहीं संतान, स्त्रियों का, दोष ऐल शासन का ही
तुम्हें कार्य करना था केवल, माधव ! अनुशासन का ही.

( ४७९ )

फसल काटने भर का ही तो, काम नहीं था, केशव का
पानी सिर से गुजर चुका है, मानव तो जीवित शव था,
यह कहकर ही उसे मिटाया, नव जीवन क्यों नहीं दिया ?
योग्य पुरुष होकर तुमने ही, यही कार्य अंत में किया ?

CC-0. Agamnigam Digital Preseyation Foundation, Chandigarh

( ४८० )

विनाश का आतंक कम नहीं, त्रेता से द्वापर आया
जंगल में मंगल दिखलाया, मानव महलों में पाया,
यद्यपि नित प्रगति का गीत ही, दशों दिशाओं ने गाया
उजाड़ना उद्यान वहीं तब, कैसे मानव मन भाया ?

( ४८१ )

ऐसे प्रश्न अनेकों करके, मैं हैरान उन्हें करता
यह साहस मुझमें भैया का, प्यार आप ही तब भरता,
जब हो जाता ज्ञात, कर्ण है, जेष्ठ सहोदर हम सबका
टूट गया होता केशव का, स्वप्न सुनहरा यह कब का.

( ४८२ )

कहता–"केशव ! क्यों भैया की मृत्यु अहो ! तुमने चाही ?
उत्तरदायो एक तुम्ही हो, देंगे इसकी सब ग्वाही,
छुट न सकोगे, आयेगा स्वर, जनता का यह निश्चय ही
मन लाते, होती न कर्ण की मृत्यु, अटल है सत्य यही.

( ४८३ )

कहो, क्या न तुम कर सकते थे ? किंचित् तर्क किया होता
ऐल-हितों[१०३] में सदाचार पर, कुछ तो जोर दिया होता,
बिगड़े मनु के सुधारने में, हँसकर कष्ट किया होता
यही माँग थी युग की, इसपर कुछ तो ध्यान दिया होता.

( ४८४ )

हृदय बदलते सभी बदलता, मानव नव युग ले आता
पतझर लाती नई बहारें, वसंत जीवन में छाता,
युग पलटा आता निश्चय ही, इसमें शंका लेश नहीं
पुनः नये से कुछ देने को, तत्पर रहता देश यही.

( ४८५ )

हुई व्यतित पीढ़ियाँ,[१०४] यहाँ का अन्न ऐल खाते आये
दूर देश से पूर्वज[१०५] आये, केवल शासक कहलाये,
नमक दूध में डाल गये पर, निकाल नवनीत न पाये
देव जातिका संग रहा तो, गीत पतन के ही गाये.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४८६ )

आत्म निरीक्षण नहीं किसी ने किया, हो रहा खेद यही
कहाँ लिये जा रहे देश हम, लिया किसी ने भेद नहीं,
नव सर्जन का अहो किसी ने, सूत्रपात ही नहीं किया
देव जाति का रंग चढ़ा तो, मोड़ स्वयं को नहीं दिया.

( ४८७ )

एक दिवस के आगन्तुक[१०६] है ऐल, सत्य इतिहास यही
इससे अन्य न लिखा जायगा, प्राचीन इतिहास में कहीं,
आर्य[१०७] देश में ऐल आ गये, परम्परा अपनी लाये
देव जाति का रंग चढ़ा तो, नहीं नया कुछ दे पाये.

( ४८८ )

हम उनके वंशधर[१०८] कहाते, न हो हमें आभास यही
खेद यही तब हमसे भी, सत्य का हुआ उपहास नहीं ?
साथ तुम्हारा [१०९] पाकर भी हम, कुछ भी सोच नहीं पाये
अबतक दृष्टि न आई व्यापक, हिंसक ही तो कहलाये.

( ४८९ )

दोष आयगा सन्तानोंपर, निश्चित वह दिन आयेगा
सत्य यही इतिहास किसी को, क्षमा नहीं कर पायेगा,
हमको भी तुम जगा न पाये, श्वेतकेतु-सा[११०] कुछ करते
दृष्टि राष्ट्र की सम्मुख रखते, प्राण सभी में तुम भरते.

( ४९० )

केवल बल, ऐश्वर्य, और धन, सत्ता, काम न आयेंगे
रहा निरंकुश मन तो, स्वच्छन्दता यही फैलायेंगे,
यही हुआ है आजतलक, क्या माधव ? तुमने लखा नहीं ?
आया क्या परिणाम अन्त में, क्या उसका फल चखा नहीं ?

( ४९१ )

शील, स्वत्व के बिना देश यह, उन्नत होगा नहीं कभी
कृष्ण ! ग्रहण यह दीर्घकाल का, पीड़ित होंगे यहाँ सभी,
क्या राजा, क्या प्रजा, सभी थे, इसी व्याधि से ग्रस्त हुये
ऐल आगमन हुआ तभी से, सभी भूमिकण त्रस्त हुये.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


सत्य यही ऐलों के कारण, दुर्दिन देखें भारत ने
दाशराज्ञ युद्ध के अनन्तर, जब थे शासक ऐल बने,
दिवोदास[१११] से पहल हुई है, यह मेरा आक्षेप नहीं
साक्षी है ऋग्वेद,[११२] आज तक प्रकटी एक न उषा नई.

( ४९३ )

देश बिगड़ना या कि सुधरना, संस्कारों पर निर्भर है
नैतिकता के अभाव में हो, कैसे मनु-मन उर्वर है?
जीता आया, जी सकता है, भारत, संस्कारों पर ही
खेद यही, केशव तुम भी तो, सोच न पाये इस पर ही

( ४९४ )

इस धरती की विशेषता ही, एकमात्र संस्कार रहे
नैतिकता धन भरत जनों का, अतीत ही यह हमें कहे,
यही सनातन सत्य, इसे कब ऐलों ने आकार दिया?
इस दीमक पर केशव! तुमने भी तो, कब उपचार किया?

( ४९५ )

क्यों न कहो तब दुर्योधन को जीता प्रेम, अहिंसा से
क्या पाया तुमने? ऐलों ने? बोलो तो इस हिंसा से?
नष्ट किया उद्यान मनोहर, क्यों हिंसा-प्रिय आप मिले?
पुरुषोत्तम! इसकी रक्षा में, माली बनकर क्यों न खिले?"

( ४९६ )

यों चर्चा करता केशव से, हृदय खोलकर मैं अपना
एकबार तो तोड़ गिराना, उनका हिंसा का सपना,
पर यह होता तभी, बंधुका भेद बताकर तुम जाती
तो न अवस्था मेरे मन की, यों शोकाकुल तुम पाती.

●

( ४९७ )

क्यों न कर्ण से हाथ मिलाया, तेरा जाया सुनकर भी
कूटनीतिविद् और हितैषी, पांडु सुतोंके बनकर भी,
कर्ण 'पांडु[११३]-कानीन' पुत्र था, इतना ज्ञात किये पर भी
कर्ण प्राप्ति में अंतर्मन से, क्यों न मिले सक्रीय कभी.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ४९८ )

क्यों भाई से रखी शत्रुता, अग्रज मेरा वह होकर
क्या पाया माधव ने बोलो, पार्थ-सहोदर यह खोकर,
रही सरल क्यों नहीं कृष्ण की, नीति, कर्ण के कारण ही–
खेद यही, रहते उनके भी, होकर रहा महा रण ही ?

( ४९९ )

क्यों न कभी आकर के बोला, कर्ण तुम्हारा भाई है
कैसे युद्ध करे हम उससे, मृदुल समस्या आई है,
धर्म ! कहो, अब तुम्हीं, करे क्या ? खड़ी हुई कठिनाई है
तो क्या उससे युद्ध करोगे ? ज्ञात हुये पर भाई है ?

( ५०० )

"अब तक था वह शत्रु हमारा, दर्द वही था दिन दुगना
उसे कुचल देना ही होगा, वरना सफल नहीं सपना,
भीष्म, द्रोण की हमें न चिंता, भय है सबसे यही बड़ा"
किन्तु आज वह अपना निकला, जायेगा उससे न लड़ा.

( ५०१ )

कहो बंधु ! अब क्या करना है, प्रश्न नहीं है यह भारी ?
यह कैसा आश्चर्य ? कहो, तव जननी, उसकी महतारी,
वह मां जाया सगा तुम्हारा, अब क्या करना, तुम्हीं कहो
कैसे युद्ध करे हम उससे, सोचो, कहीं अनर्थ न हो.

( ५०२ )

कैसे उस पर शस्त्र चलाये, हृदय न निर्णय ले पाता
हम सबमें तो ज्येष्ठ वही अब, श्रेष्ठ उसीका है नाता,
कैसे निपट सकेंगे उससे, हमें सोचता आज यही
चले हमारा शस्त्र बंधु पर, यह तो होगा उचित नहीं.

( ५०३ )

बंधु बंधु में रण हो, भाई, भाई से मारा जाये
यह तो होगा निंद्य कार्य, यह, अधर्म ही तो कहलाये,
हाथ हमारे ही आयेगा हमसे, 'वधु—वैधव्य' नहीं ?
विलाप उसका सह न सकोगे, क्या यह सच मंतव्य नहीं ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५०४ )

अनाथ होगा भतिजा किसका ? कैसे देख सकोगे तुम ?
विधवा भाभी को बतलाओ, कैसे देख सकोगे तुम ?
अनुचित ही होना है यह सब, होगा पाप जघन्य नहीं ?
भाई-हत्या महा पाप है, नरक यातना अन्य नहीं !"

( ५०५ )

क्यों न कृष्णने विचार ऐसे, रखे सामने तुम्हीं कहो
क्यों न कहा 'मेरे विचार में बंधु-बंधु में युद्ध न न हो,
उलटे यह सब गुप्त रह गया, तनिक नहीं आभास दिया
खेद यही, क्यों ज्येष्ठ भ्रात का, केशव ने उपहास किया !

( ५०६ )

जो न सत्य यह, क्यों न विचारा, कर्ण उधर से हट जाये
किसी तरह से युद्ध नहीं हो, खाई भी यह पट जाये,
मुझसे आकर कहा न क्योंकर, तुम हो सारे मां जाये
जाओ धर्म उसे समझाओ, क्यों न कृष्ण यह कह पाये ?

( ५०७ )

हो न सका मैं सफल, 'कर्ण का नीतिपक्ष[११४] निकला तगड़ा'
लगता सब कुछ नष्ट करेगा, अब यह दो घर का झगड़ा,
क्यों न कहा केशव ने ऐसा ? उससे मिलने मैं जाता
सभी सहज यह तब बन जाता, मुझे सहोदर मिल पाता.

( ५०८ )

कहाँ अहो ! था कर्ण शत्रु तब ?" यह भी सोचा नहीं गया
कूटनीतिविद् माधव द्वारा," पंथ न शोधा गया नया,
भाई द्वारा भाई मारा जाये, निर्णय यही लिया !
अब तो है आक्षेप कृष्ण पर, हमको भाई नहीं दिया !

( ५०९ )

केशव-मन में, कर्ण-विषय में, हम सा स्नेह नहीं उभरा
कुंती–जाया ज्ञात किये पर भी, वह सही नहीं उतरा,
अपनाना कर्ण को बना था, कार्य अहो ! अनिवार्य नहीं ?
सब कुछ तो थे वही हमारे, किया यही सत्कार्य नहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५१० )

मानव को मान्यता कर्म[११५] से दी जाती, 'जो न्याय यही
आर्य शास्त्र का,' तो भैया का, कर्म एक था हीन[११६] नहीं,
दुर्योधन का मित्र बना, इस कारण ही रिपु मान लिया
बचन बद्ध[११७], थी लाचारी, क्यों नहीं यही अनुमान किया ?

( ५११ )

सोलहवे दिन तो कुछ करते, पर मन[११८]में हो, तब न बने ?
शत्रु भाव जो था दृढ मनमें, क्यों न वज्र दीवार तने ?
निश्चित भाई की हत्या में, केशव का ही हाथ रहा
उसे बचाने में न कृष्ण का, हमको कोई साथ रहा.

( ५१२ )

हम तो थे अज्ञात सभी, था नाता हमको ज्ञात कहाँ ?
क्या केशव ने नहीं किया यह, हमपर वज्राघात यहाँ,
अच्छा होता, साथ हमारे, परामर्श कुछ हो पाता
तो भाई भाई के हाथों, कभी नहीं मारा जाता.

( ५१३ )

मैं कहता—नीति में तुम्हारे, क्या यह प्रश्न नहीं आता ?
कलंक लेकर मरे बुआ, क्या यही तुम्हारे मन-भाता ?
ऐल राज्य शासन, जीवन का, क्यों देखा इतिहास नहीं ?
कहाँ चल रहा क्या ? क्या इसका, अल्प हुआ आभास नहीं ?

( ५१४ )

नारी का क्या मूल्य हुआ ? बतलाओ केशव ! थाम हृदय
तुमसे महापुरुष भी देखे, गये न, उसके लिये सदय,
'गृहिणी गृहमुच्यते' कहावत, का अब सपना बना नहीं
आत्रेयों[११९] के समाज में नारी का जीवन फना नहीं ?

( ५१५ )

नारी में पुरुषार्थ नहीं औ' पुरुषों में वात्सल्य नहीं
केशव जैसे महापुरुष को, चुभा अभीतक शल्य नहीं ?
नारी में भी मिली न आत्मा, आज, आजका दृश्य यही
तो मानव में भी मानवता, कहाँ ? खिला यह दृश्य कहीं ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५१६ )

क्या दोषी संतान कृष्ण ने, मानी, निर्णय लिया यही ?
क्यों ऐलों के समाज का, अध्ययन कृष्ण ने किया नहीं ?
नेता बनकर सुधार का, सत्कार्य हाथ में लिया नहीं
मानव निर्मित समाज को, क्यों मोड़ कृष्ण ने दिया नहीं ?

( ५१७ )

कहो दोष क्या भला कर्ण का, सहोदरों से वंचित क्यों ?
बोलो तो हे तर्क विशारद ! 'मेरा बंधु उपेक्षित क्यों ?–
ममता द्वारा,' क्यों माता ने, पुत्र प्रवाहित आप किया ?
या केवल नारी अपराधी, यही आपने नाप लिया ?

( ५१८ )

ऐल प्रजा में नैतिकता की, जड़े खोखली मिल पाई
आर्य नारी की दशा देखकर आँखें क्यों न छलक आई ?
युग परिवर्तनशील, समय गतिमान, न तुमने भी जाना !
मानव निर्मित बंधन तुमसे, भी तो गया न पहचाना !!

( ५१९ )

जो हम कहते कर्ण चाहिये, तो क्या बनते सदय नहीं ?
निश्चित उत्तर देना पड़ता हाँ में, कहता हृदय यही,
पर यह चाहा नहीं कृष्ण ने, पहले दोषी केशव है
यह भी सोचा नहीं कर्ण भी, पांडु–जनों का वैभव है."

( ५२० )

कहता–'तुम कुछ देने आये, देते आये आजतलक—
पांडु सुतों को,' कृष्ण ! तुम्हारे जीवन का यह चित्र पुलक,
यही नहीं, यह भी सच केशव ! राजनीति में रहकर भी
सत्ता, वैभव, स्वार्थ, लोभ में, फँसे मिले तुम नहीं कभी.

( ५२१ )

ऐसा उज्वल चरित्र पाकर, भी तो तुमने कुछ न किया
हमने तो जीवन में तुमको, था अग्रज का स्थान दिया,
घात किया इस पर भी तुमने, नहीं बंधु से मिला सके
उसके प्रति समता, क्षमता का, अल्प न परिचय दिला सके."

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५२२ )

माता ! कृष्ण-विषय में रह-रह, मन-शंका आ ही जाती
दक्ष नित्य पांडव–हित होकर, "फटी न क्यों उनकी छाती,
कर्ण हृदय पर बाण चलाओ कहते, विचार मन आते—
कृष्ण विषय के पूज्य भाव अब, मन से नष्ट हुये जाते.

( ५२३ )

जब तक कृष्ण न थे जीवन में, पांडव पांडव नहीं मिले
क्या अर्जुन क्या भीम, सभी कह, कृष्ण मिलन पर नहीं खिले ?
हममें आया प्राण वस्तुतः, साथ कृष्ण का ही मिलते
कृष्ण मिलन पर ही तो पांडव, रहे वीरता में खिलते.

( ५२४ )

मात ! बंधु हम में आ मिलता, रंग सुहाना छा जाता
मिलन हमारा समाज हित में, निश्चित सुखकर कहलाता,
नहीं समझ में आया केशव, कैसे यह सब भूल गये
मिल जाता भाई तो निश्चित, खिलते जीवन-दृश्य नये.

( ५२५ )

बात कर्ण की हमसे न्यारी, कर्ण कर्ण था, पार्थ नहीं
कर्ण आप में स्वयं पूर्ण था, क्या यह सत्य यथार्थ नहीं ?
मान्य कृष्ण भी करते है यह, उसे न फिर भी अपनाया !
देश, काल का नहीं विचारा, हन्त सहोदर अलगाया.

( ५२६ )

मैया ! भैया मिल जाता तो, स्वर्ग धरापर आ जाता
विविध मंत्रणा कर्ण–कृष्ण की होती, रंग नया छाता,
परामर्श भी उनसे करने, एक वही तो संभव था
दोनों आते एक, सुधरता निश्चित भारत का भव था.

( ५२७ )

क्या न कर्ण भी पार्थ सखा सा, पुत्र बुआ का, भाई था ?
नहीं समझ में आया उनके, हित कैसे दुखदाई था,
माता भैया के गुण गाते, केशव भी तो थके नहीं
खेद यही, इस पर भी, उस पर, शस्त्र चलाते चुके नहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५२८ )

कृष्ण कूटनीतिज्ञ, कर्ण नीतिज्ञ,[१२१] यही इतिहास रहा
इन दोनों का स्नेह समन्वय, था भारत-हित लाभ महा,
थी भैया में पवित्रता ही, इसे न कोई छिपायगा
पवित्रता लेकर ही, उसके लिये विचारा जायेगा.

( ५२९ )

दाशराज्ञ युद्ध के अनंतर, मेल न[१२२] ऐसा हो पाया
आनेवाला आया, आया, गया, न नूतन दे पाया,
ऐसा ही कुछ हुआ कह रहा, ऐल-वंश इतिहास यही
आत्रेयों की ऐंद्रिक संस्कृति, लिखा गई कुछ अन्य नहीं.

( ५३० )

गत पन्द्रह सौ वर्षो में यों, आत्मायें उतरी न यहाँ
जो कुछ कर दिखलाये, लाये, नई बहारें जहाँ-तहाँ
वह प्रामाणिक, सहकर्मी था, पहचाना कृष्ण ने नहीं
कूटनीतिविद्, कुटिल नीतिविद् ही कहलाये, अंत नहीं ?

( ५३१ )

निश्चित पर्व महा मंगल था, दुखांत होने आया था
ऐलों द्वारा बढ़ा अंधेरा, निश्चित धोने आया था,
कृष्ण कर्ण से युग पुरुषों का, पाया था वास्तव्य जहाँ
विदुर महात्मा पार्थ विवेकी, सबका था मधुमेल अहा !

( ५३२ )

केशव अपनाने भैया को, वातावरण बदल जाता
परिवर्तन कुछ आही जाता, भारत नव जीवन पाता,
वैसे तो यह समय बताता, मेरे बोल असत्य नहीं
इतिहासों में कृष्ण कार्य की, होगी चर्चा, सत्य यही.

( ५३३ )

वामन बलि का मिलन हुआ; पर वामन, 'वामन मिले नहीं
याचक बन कर, पास कर्ण के, जाकर केशव खिले नहीं,
दान न मांगा, बिन मांगे ही, इस दानी को मरवाया
उद्घाटन भी कृष्ण नीति का, नहीं कृष्ण ने करवाया.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५३४ )

कमी न होती कर्ण मिलन पर, कृष्ण-श्रेष्ठता कभी नहीं
बल्कि विचारक मिल जाता तो, कार्य सुधरते सभी नहीं ?
युगांत आता, सद्भावों को लेकर ही, मानव मन में
तो आ जाता नया प्राण ही, इस धरती के कणकण में.

( ५३५ )

क्या घट जाती कर्ण मिलन पर, कृष्ग-श्रेष्ठता लगा यही ?
क्यों केशव मन उसके हित में अपना पन ही जगा नहीं,
क्या मैं मानूं यही, "उठ रही शंकायें मेरे मन में
केशव के भी लिये स्थान अब, शंका का ही जीवन में.

( ५३६ )

नहीं समझ में आई, इतना भी क्या, कर्ण विघातक था ?
वह क्या अपने आप बना था, पार्थ-प्राण का ग्राहक था ?
कूटनीतिविद् केशव ने क्यों, इसपर चिंतन नहीं किया ?
कर्ण सर्वथा निरपराध था, निरपराध का प्राण लिया !

( ५३७ )

निश्चय ही कृष्ण की नीति, उपयुक्त नहीं भारत हित में
मेरा यह आक्षेप सत्य है, प्राण नहीं है इस जित में,
रोगी ही तो यहाँ मरे हैं, रोग सर्वथा जीवित ही
तब कैसे कह भारत हित में, नीति कृष्ण की उचित रही.

( ५३८ )

संभव है पाप के बोझ को, केशव ने कम कर डाला
अपनी भाषा में जीवन में, सार एक यह भर डाला,
नरकासुर, शिशुपाल कंस सा, कौरवदल-संहार किया
नृशंस हत्या कर भारत पर, बोले क्या उपकार किया ?

( ५३९ )

राष्ट्रोन्नति की दी किस किसको, इसमें बतलाओ दीक्षा ?
कौन-कौन सा, कहाँ हुआ है सुधार, की किसकी रक्षा ?
कहो, कर्ण कैसे दुर्जन था, था दुर्योधन[१२३] दुष्ट कहां ?
अपने में थे सभी उचित ही, भला-बुरा तब कौन वहां ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५४० )

सब थे अपने पथ के राही, सत्य चित्र है यही जहाँ
कर्ण रहा अज्ञात सत्य से, तब उसका है दोष कहां ?
वह तो निकला माँ जाया ही, शत्रु कृष्णने क्यों माना ?
क्यों न सूचना दी आकर के मुझे, न चाहा अपनाना ?

( ५४१ )

ज्ञात पार्थं को यदि होता, तो वह भी करता बात यही
नीति सफल होती न कृष्ण की, अर्जुन करता घात नहीं,
किन्तु नहीं होना था यह सब, तब क्यों करना क्षोभ अहो
करूं क्रोध क्यों केशव पर भी, क्यों हो अब यह लोभ कहो.

( ५४२ )

जानेवाला चला गया अब, लौट नहीं आनेवाला
अपने छोटे भैया से वह, बात नहीं करनेवाला,
बोलो मैया ! भैया वापस, अब कैसे आ पायेगा
जीवन भर अब स्मरण उसी का, मुझे रुलाता जायेगा.

( ५४३ )

आनेवाला कब लौटा है, ऐसा नहीं प्रमाण कहीं
वह जाता है कहाँ, वहाँ का, मिला कहीं अनुमान नहीं,
हन्त ! रह गया मन ही मन में, किसको मनका हाल कहूँ ?
कहकर भी क्या लाभ बताओ, अपने में ही क्यों न रहूँ ?

( ५४४ )

आखिर वह था तेरा जाया; क्षत्राणी का था जाया
जिसपर गर्व करे ऐसा यश, जिसका सबने है गाया,
एकमेव वह वीर, महात्मा, उसका है इतिहास यही
हा ! उसके अस्तित्व मात्र का, अंब ! दिया आभास नहीं.

( ५४५ )

अविश्वास क्यों किया रक्तपर अपने ही, आश्चर्य नहीं ?
निश्चय अबला सिद्ध कर गई, एक किया सत्कार्य यही,
रक्त बोलता, नियम रक्त का, किन्तु उसे मिलने जाती
रंग भूमि के पहले उसको, 'माँ कह' दर्शन दे आती.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५४६ )

तो न कुबेला ऐसो आती, पागल मुझे बना जाती
ज्येष्ठ बंधु के पवित्र शोणित में, न मुझे नहला पाती,
भारतीय जननी होकर के, बेटे को मरवा डाला
था उससे भी अधिक कर गई, चरित्र जीवन का काला.

( ५४७ )

नहीं दुखाना तुम्हें चाहता, पर अब रहा नहीं जाता
ज्येष्ठ बंधु की विरह आग से, निजको बचा नहीं पाता,
माता ! अब यह स्नेह उसीका, बोल रहा, मैं आप नहीं
ज्ञात हुआ जब कर्ण बंधु था, जीवन अब अभिशाप नहीं ?

( ५४८ )

मात ! तुम्हारे चार पुत्र थे, यह तो अब जल्पना नहीं
क्या न चार पुरुषार्थं प्रखर थे, क्यों की यह कल्पना नहीं ?
स्वयं सिद्ध जो सुवर्ण था, वह कर्ण, भला क्यों अलगाया
धर्म धर्म था, पार्थं भीम, थे अर्थ, मोक्ष वह बन आया.

( ५४९ )

माद्री के बेटों को जैसे, तुम माद्री सुत रख न सकी
अपितु कहाये कुंती जाये, इसको झुठला भी न सकी,
तो हमने भी कहा सहोदर, यद्यपि नहीं सहोदर थे
किन्तु कर्ण के साथ सभी हम, बोलो क्या न सहोदर थे ?

( ५५० )

यों जननी के हम छह बेटे, षड्‌रस लाते जीवन में
एक कमो थी षष्टम की, अब सभी रह गया है मनमें,
आप स्वयं निर्भर अपने पर, एक वही था, तर्क नहीं
शूरवीर, गुणनिधि, ज्ञानी औ' था प्रतिभा में अर्क नहीं ?

( ५५१ )

कर्ण योग्यता सर्वश्रुत थी, भैया था अज्ञात नहीं
हा ! दुर्भाग्य, किन्तु तुमसे तो, उसके हित कुछ बना नहीं,
जो पहले यह रहस्य खुलता, अंब ! युद्ध यह रुक जाता
कर्ण बिना कौरव क्या करते, यह तो निर्णय आ जाता.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# ५

क्यों न शस्त्र सन्यास लिया
खेद यही इतिहास न बदला
दुर्योधन युवराज कब बना ?
हम लाक्षागृह से बच निकलें
देवव्रत से अर्जुन कितना योग्य अहो निकला
उत्तरदायी कौन युद्ध के लिये
मानव धन का दास रहा
आये कभी हमारे घर ?
यही भीष्म-इतिहास नहीं ?
कौन शुद्ध है कर्ण द्वेष्टा ?
तुम्हीं कहाई चंडी दुर्गा
तुम्हीं बनी कालिका
कर्म भूमि की नारी तू
पंचम वर्ण, कहां से आता है
इतिहास न यह भरतों का
सान थोर स्वच्छंद मिलें
दोषी गृह संचालक है
नारी शील लुटाती है
नारी शील लुटाती है
एक विचारक नेक गया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५५२ )

भीष्म द्रोण के हृदय[१६२] वस्तुतः हुये अंततक स्पष्ट नहीं
उनके मनमें, उनके हित में, भ्रात कर्ण था, इष्ट नहीं,
मन कहता जो कर्ण युद्ध से, आप स्वयं ही हट[१६३] जाता
इन दोनों के अंतर्मन का, सारा भ्रम ही मिट जाता.

( ५५३ )

कौरव दल में थी ईर्ष्या ही, ईर्ष्या ने ही घात किया
दुर्योधन पर ईष्या ने ही लुक छिप कर आघात किया,
थी ईर्ष्या भी बड़ों बड़ों में, सबने परिचय यही दिया
भीष्म द्रोण मन, कर्ण जलन थी, सिद्ध अंततक यही किया.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५५४ )

सच कहती हो तेज कर्ण का, सहा न उनसे कभी गया
रहे खोजते दोनों हरपल, छिद्र कर्ण में नित्य नया,
हम भी कुछ कम नहीं कर्ण से, कारण लेकर एक यही
सदा रही स्पर्धा, ईर्ष्या ही, मिले नीति में नेक नहीं.

( ५५५ )

यह भी सोचा नहीं, आपसी पक्षफूट यह उचित नहीं
इसमें होगा नाश देश का, भूल गये सब सत्य यहीं ?
कर्ण उन्हीं का पक्ष लिये था, और दक्ष उनके हित में
किन्तु किसी ने किया न उससे, समझौता ही जीवन में.

( ५५६ )

नहीं किसी के मन भारत था, दृश्य सर्वथा मिला यही
अपने आगे देश तुच्छ है. आप हृदय था खिला नहीं,
नहीं युद्ध पर रोक लगाई, उलटे रहे प्रतीक्षा में
हम भी कितने बड़े सूरमा, उतरे इसी परीक्षा में.

( ५५७ )

जब था मन में भीष्म, द्रोण के, स्नेह हमारे लिये भरा
मिलते उनके शत्रु पक्ष में, बोलो कब सच्चा उतरा ?
हन्त ! कर्ण ईर्ष्यावश दोनों, युद्ध किये बिन रहे नहीं
क्यों न शस्त्र सन्यास लिया, जब था हमपर ही स्नेह सही.

( ५५८ )

हटते ही कर्ण के, पितामह कभी नहीं आगे बढ़ते
कुछ तो वातावरण बदलता, द्रोण नहीं रथपर चढ़ते,
क्या अच्छा होता कि सत्यता, उनकी सम्मुख आ जाती
अंतर्मानस की दोनों के, स्पष्ट कल्पना हो आती.

( ५५९ )

हमने अधिकार की चाह की, उसके हित ही युद्ध किया
प्रथम न चाहा युद्ध, समन्वय का ही परिचय शुद्ध दिया,
पर स्पर्धा में विपक्षियों में, उतरे रण में भले-भले
भीष्म, द्रोण अति उत्कटता से, रण विचार में नित्य पले.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५६० )

भीष्म[१२४] द्रोण के अन्तंमन में, शस्त्र सजे थे, सिद्ध किया
कहलाये हितचिंतक फिर भी, निर्णय अन्त विरुद्ध लिया,
क्यों न कहूँ दोनों के मन में, कालकूट था भरा नहीं ?
भीष्म द्रोण अन्यथा कहो क्या, लेते रण-सन्यास नहीं ?

( ५६१ )

नित्य हजारों की संख्या में, देवव्रत ने हत्या की
क्यों यह साहस, किस उमंग में, युद्ध प्रतीक्षा थी कह की ?
क्यों मानव जीवन को बोलो, थे तिनके से मान गये
वृद्धवस्था[१२५] में भी दिखला गये, युद्ध अरमान नये.

( ५६२ )

द्रोण विरोधी पांचालों[१२६] के, उन्हें जानता कौन नहीं ?
उसमें वेतन[१२७] भोगी सेवक, किन्तु भीष्म थे द्रोण नही,
उनकी अपनी मर्यादा थी, पर वह दर्शन मिला नही
खेद यही इतिहास न बदला, स्नेह समन्वय खिला नही.

( ५६३ )

कौरव कुलमें त्याग भीष्म सा, किया किसी ने कभी नहीं
वंदनीय थे भीष्म पितामह, इसीलिये भी निश्चय ही,
निभा गये व्रत सब जीवन के, इसमें शंका तनिक नहीं
घुटन भीष्म के मन की अब तक, बन बैठी है रहस्य ही.

( ५१४ )

सभी जानते पूज्य पिताजी, राज्य भार सोपकर गये
स्वास्थ्य हेतु, वन विहार करने, राज्य-दान देकर न गये,
दीर्घकाल[१२८] तक रिक्त सिंहासन, भीष्म सुरक्षक कहलाये
दुर्योधन युवराज[१२९] कब बना ? सतर्क ही सब रह पाये.

( ५६५ )

सच तो यह था राज्य हमारा, भूले यह भीष्म भी नही
बनता मैं युवराज अन्यथा नही, सत्य है अटल यही ?
स्पष्ट हुआ तब, राज्य हमारा, इनके पास धरोहर था
किया गया अभिषिक्त इसलिये, मैं ही, सत्य मनोहर था.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


परंतु लाक्षागृह की घटना, बोलो तो क्या बतलाती
कैसे थे अनभिज्ञ पितामह, नहीं समझ में यह आती,
जहाँ-तहाँ वे गोल-गोल है, मात्र विदुर ही दक्ष मिले
रहा विदुर का स्नेह अतः हम, लाक्षागृह से बच निकले.

( ५६७ )

पूज्य पिता की छाया उठते, पिता पितामह को माना
उनकी मर्यादा को हमने, भली भांति था पहचाना,
यद्यपि हम तो थे अनाथ ही, प्रतिपल अनुभव किया यही
कभी न उनके सम्मुख बोले, कहीं अनादर किया नहीं

( ५६८ )

फँसे रह गये प्रपंच में ही, कहीं अन्य दर्शन न मिला
जीवन त्याग, तपस्यारत पर, वैसा दर्शन नहीं खिला,
नित्य दक्ष थे कौरव हित में, अंत समय तक सिद्ध किया
जो न सत्य यह, युद्ध समय पर, क्यों न शस्त्र सन्यास लिया ?

( ५६९ )

तब तो देवव्रत से अर्जुन, कितना योग्य अहो ! निकला
कितना ज्ञानी, उदार, त्यागी, त्याग शस्त्र रण छोड़ चला,
कैसे मारूँ, क्यों मारूँ; मारूँ तो मारूँ अब किसको ?
चाचा, मामा, भाई, भतिजे, बोलो केशव ! किस किस को ?

( ५७० )

और वीर ये जो सैनिक है, इनमें कोई दुष्ट नहीं
कौरव पांडव के झगड़े में, इनकी हत्या इष्ट नहीं,
ये तो सारे आज्ञा वाहक, आज्ञा सुनकर आये हैं—
अपने-अपने राजा की, यह क्यों न सोच हम पाये हैं ?"

( ५७१ )

विचार यह अर्जुन को आये, नहीं पितामह को आये
यह कैसा आश्चर्य पितामह, ऐसा सोच नहीं पाये
यही प्रश्न भीष्म के हृदय में, क्यों न उठे, है खेद यही
वे तो सब में ज्येष्ठ श्रेष्ठ थे, रखते ऐसा भेद नहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५७२ )

लिपटे रहे सदा से वह तो, क्या न कीर्ति, यश, गौरव से ?
बचा न पाये महायुद्ध से, भरतवर्ष को रौरव से,
उत्तरदाई कौन युद्ध के लिये, पूछ उनसे शंका
किन[१३१] के कारण बजा मात ! इस महा समर का यह डंका.

( ५७३ )

था दायित्व पितामह का भी, बतलाओ कब निभा गये ?
उनके रहते भी आते थे, हम पर संकट नित्य गये,
ऋषियोंने संकेत[१३२] किया था, किन्तु उसे भी भुला दिया
जब ममता थी हमपर ही तो, क्यों न युद्ध सन्यास लिया ?

( ५७४ )

भरी सभा[१३३] में भीष्म कह गये, मानव धन का दास रहा
एक तपोधन ऐसा कह दे ? सभा-बीच ! आश्चर्य महा,
रोटी खाकर ही जीना था, अर्थ यही है इस स्वर का
तो क्या उनके लिये बन्द था, द्वार कभी अपने घरका ?

( ५७५ )

राजसूय[१३४] यज्ञ को छोड़कर, आये कभी हमारे घर ?
इन्द्रप्रस्थ की उन्हें दिखाई दी है बोलो कभी डगर ?
उनके अपने कौरव ही थे, यही लिखा इतिहास दिया
जो न सत्य यह, तो बतलाओ, क्यों न युद्ध सन्यास लिया ?

( ५७६ )

विपदा आई, हमें बचाते, विदुर आजतक आये हैं
विदुर जगाते ही आये हैं, रहे हमें अपनाये हैं,
भीष्म आप हैं एक पहेली, अब होता विश्वास यही
बने रहे दुर्योधन के ही, यही भीष्म-इतिहास नहीं ?

●

( ५७७ )

सुकुल, कुकुल के कारण ही तो, बंधु हाथ से खोया है
महा पाप यह किसका माता ! कह तो तुमने ढोया है ?
तुम इन सभ्य कहानेवालों की ही लाज बचाने में
खो बैठी अपना ही बेटा, प्राप्त किया क्या जीवन में ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५७८ )

कहो आज अकुलीन यहाँ क्या, सिवा कर्ण के मिला नहीं ?
क्या संकर से धरती खाली ? कहाँ-कहाँ वह खिला नहीं ?
भूल पुरुष की मान्य ? नहीं नारी की ? यह तुमने माना
कौन शुद्ध है कर्ण द्वेष्टा, यह तो होता पहचाना ?

( ५७९ )

क्या जाने कितनी कुमारियाँ, यों मातृत्व रुला बैठी
कितने कर्णों को तुम जैसी, नारी आप भुला बैठी,
गर्भधारण[१३५] नहीं कुमारी, कर सकती इसके आगे
नियम बना था ऐल राज्य में, फिर भी भाग नही जागे ?

( ५८० )

क्यों भूली, "तू स्वयं आग है," भड़क उठी क्यों आप नही ?
नराधमों की छातीपर क्यों, खेली बनकर साप नहीं ?
तुम्हीं कहाई चंडी दुर्गा, पावन शिवा दिवानी है
पर्वतीय पार्वती तुम्हीं हो, जिसका नाम भवानी है.

( ५८१ )

तुम्हीं बनी कालिका, और पैरों से रोंदा शंकर को
वहाँ चित्र क्या आज तुम्हारा, बाढ़ आ गई संकर को,
ऐल राज्य शासन की महिमा, कितनी तुमको दबा गई
क्यों न काल बन नराधमों को, एक एक कर चबा गई ?

( ५८२ )

कर्म भूमि की नारी तू, अवतार, स्वयं शक्ति का रही
इसीलिये भी पुरुषों के हित, विषय शुद्ध भक्ति का रही,
भक्ति, भोग की मर्यादा का, ऐल प्रजा को भला नहीं ?
यह नारी क्या भोग भूमि की ? हुआ शक्ति-अवसान नही ?

( ५८३ )

माता कहकर जिस नारी का, तन पवित्र माना जाता
नारी कहते वहीं पलक में, घोर नरक है बन जाता,
नर प्रधान संस्था ऐलों की, भूल गई नारी महता
दिव्य रूप के नारी का, कर सके, इसलिये नहीं पता.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५८४ )

है मातृत्व शिखर संस्कृति का, आर्यों के, सभी सुनाते
वहां उसे संकोच भला क्यों, अपना औरस अपनाते ?
हक भी मातृत्व का मांगने, उसको शब्द न एक मिला
ऐल राज्य में भरत धरा का, यह कैसा संसार खिला ?

●

( ५८५ )

आगत[१३७] गण के साथ पत्नियां न थी, कहे इतिहास यही
खिलें यहीं परिवार, यहाँ की नारी से, है सत्य यही,
उनमें वैध अवैध विभाजन, आवश्यक हो जाता है
चतुवर्ण में निषाद[१३८] पंचम वर्ग, कहाँ से आता है ?

●

( ५८६ )

तुम तो हो आप ही भारती, किन्तु न तेजस्विनी मिली
वीर प्रसूता हो कर भी तो, चंडी बनकर नहीं खिली ?
भारतीय आर्या का तुमने, तनिक न दर्शन अहो ! दिया
शकुंतला का भी तो प्रस्तुत, अहो नहीं आदर्श किया ?

●

( ५८७ )

इन भरतों के रक्त कणों का, ऐलों ने क्या मूल्य किया
देव सभ्यता के प्रभाव में, निज को कितना गिरा लिया,
यह तो आर्य धरा, पावन थी, इसकी समता कहीं नहीं
ऐल राज्य शासन में पर हा ! कहाँ जा रही वहीं मही !

( ५८८ )

ऐल राज्य के विलासिता को, जहाँ-तहाँ मिलती साखी
ऋषि[१३९] मुनियों के कामुकता की, बहार भी देखी, परखी,
विकार आवेश में जहाँ भी, ऋषियों के संयोग बने
श्रुतियों के अनुसार शब्द, वरदानों के वे योग बने.

( ५८९ )

संस्कृति यह मूलतः नहीं थी, भरतों की, ऐलों की थी
ये संस्कार न थे भरतों के, प्रथा यही ऐलों की थी,
इतिहास न यह भरतों[१४०] का, या भारत का अल्पांश नहीं
जगद्गुरु भारत की गुरुता का, इसमें आभास नहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५९० )

सच है, इसमें निज बचाव भी, पुरुष वर्ग ही करता है
ऐलों का इतिहास यही तो, सत्य सामने धरता है,
ऐलों ने इस भरत धरा को, क्या का क्या ही बना दिया !
दाशयज्ञ[१४१] युद्ध के अनंतर, जब था शासन हाथ लिया.

( ५९१ )

लाये संस्कृति ऐल मिश्र, स्वच्छंद बने, इतिहास यही
निश्चय इनसे भरत धरा का, अहो ! हुआ उपहास नहीं ?
ऐल राज्य की कामुकता ने, देव जाति को बढ़ा[१४२] दिया
इसीलिये तो मां कुन्ती ने, अपना सुत बलि चढ़ा दिया

( ५९२ )

कर्ण, लाल मेरा, कहने का साहस तुमसे हुआ नहीं
इसका कारण नर प्रधानता, चंद्रवंश की, क्या न रही ?
मनको मारे, सहन शक्ति की, मात्र कसौटी नहीं चली ?
यह भरतों[१४३] की एक सुकन्या, देव जाति से गई छली.

( ५९३ )

अहो ! पतन ही जहाँ बड़ों का, राजाओं का, ऋषियों का
वहाँ निम्नतर कर सकता है, बचाव कैसे जीवन का ?
खेद यही, अब ऐल आगंतुक न थे, यहाँ के बासी थे
सांठ सांठ[१४४] पीढ़ियाँ हुई, भारत के बने निवासी थे.

( ५९४ )

शासक थे, उत्तरदायी थे, पर कर्तव्य नहीं जाना !
भरत धरा है आर्य-धरा, यह सत्य गया कब पहचाना ?
स्थानांतर[१४५] में सुभावना का अभाव था, क्या कहे यही ?
नहीं, नहीं यह बात नहीं, ये आप पतन में बहे नहीं ?

( ५९५ )

सत्य यही, देवों से टूटा, अबतक भी संपर्क नहीं
जब कि संस्कृति उनकी, भारत के हित में उपयुक्त नहीं,
अब तक भी यह सोच न पाये, सान, थोर स्वच्छंद मिलें
क्यों न उदर में तब कुन्ती के, देव-पुरुष का गर्भ खिलें ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ५९६ )

इसमें दोष न कन्याओं का, दोषी गृह संचालक है
भरा उसी में जब प्रमाद तो, मिले कौन तब तारक है ?
कन्याओं के जनक कहाना, भारत में आसान नहीं
अबतक भी इस महत् सत्य की, हुई इन्हें पहचान नहीं.

( ५९७ )

विलासिता में पटरानी तक, राजा पहुँच नहीं पाया
प्रतिदिन करती रही प्रतीक्षा रानी, बन उसकी छाया,
इर्दगिर्द कलियों के भँवरा, बन वह मंडराता आया
हन्त ! बना पुरुषार्थ हीन तो, उसे न संतति दे पाया.

( ५९८ )

तब नियोग[१४६] की बलि वेदी पर, नारी शील लुटाती है
चंद्र वंश में नारी निजको, ऐसी आप मिटाती है,
नृपति वेन[१४७] से यही चला है, कहता है इतिहास यही
यह विवाह के शपथ सूक्त[१४८] का, स्पष्ट हुआ उपहास नहीं ?

( ५९९ )

देव जाति की मैत्री कितनी, पडो महँगी, 'होश नहीं—
अबतक आया चंद्रवंश को,' नारीका कुछ दोष नहीं,
इस धरती की पावनता को, ऐल नहीं पहचान सके
पवित्रता कहते है किसको, नहीं अभीतक जान सके.

( ६०० )

इस धरती का रहन-सहन, आचार संहिता, भिन्न रही
भरत जनों की श्रेष्ठ सभ्यता, प्रायः जग में धन्य रही,
मिटाया न इतिहास जायगा, इस धरती का कभी कहीं
ऐल प्रजा से निश्चित उसको, हन्त ! सँवारा गया नहीं.

( ६०१ )

नैतिकता का शिरोमणि यह देश, यही इसकी पूंजी
नित्य प्रगति पंथ की रही है, एक यही तो वह कूंजी,
ऐल यहाँ की संस्कृति में तो, कभी भूलकर नहीं ढलें
क्यों न यहाँपर तब दिन में भी अहो ! कृष्ण व्यापर[१४९] चले ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६०२ )

इस भारत में कन्याओं को, 'कन्यारत्न' कहा जाता
रत्न मानकर ही जीवन में, उनको स्थान दिया जाता,
आंकी जाती कीमत उनकी, अहो ! रत्न के समान ही
उस कीमत का नाम 'शील' है, ऐलों को यह भान नहीं.

( ६०३ )

पुत्रों को भी 'पुत्र रत्न' की, यहाँ उपाधि दी जाती
उसकी कीमत भी रत्नों से, कम न कहीं आंकी जाती,
मतलब भारत संतानों का, मूल्य आंकता आया है
सत्य यही इस ऐल प्रजा, शासन ने, यह बिसराया है.

( ६०४ )

भरत प्रजा में[१५०] संतानों की, अभिलाषा की जाती थी
वह पैदा ही की जाती थी, सहज नहीं हो पाती थीं,
पत्नी पति की, पति पत्नी का, रहता था बन, जीवन भर
इसीलिये भी नहीं घटा था, भरतों के जीवन का स्तर.

( ६०५ )

मात-पिता के 'मन, भावों' की, प्रतिकृतियाँ संतानें थीं
औरस[१५१] थी, आत्मज थी, क्षेत्रज न थी, यही पहचानें थीं,
षोडस[१५२] संस्कारों में गर्भाधान, एक संस्कार रहा
उन भरतों के संस्कारों का, है ऐलों को भान कहाँ ?

( ६०६ )

साथ प्यार के, संस्कारों की, शिक्षा बच्चों को मिलती
पाकर 'जीवन-शिक्षा' मन में, राष्ट्र भावना थी खिलती
जीवन आर्यों का कौटुंबिक, निज कर्तव्य निभाता था
नारी का था स्थान सुरक्षित, नाम उसी का माता था.

●

( ६०७ )

मैं तो इतना ही कहता हूं, सुधार का सोचा न गया
संस्कारों का सींचन-कर्ता[१५३], सम्मानित रक्खा न गया,
खोया भाई, सहोदरों से, मिला नहीं इस जीवन में
नारी का हित चिंतक जनमा, नहीं अभीतक भारत में.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६०८ )

सच तो यह है नारी में ही, अंब ! जागरण आना था
नारी को ही पुरुषों को, पुरुषार्थ आप दिखलाना था,
शक्ति मानसिक नारी की भी, कब पुरुषों से कम मिलती ?
क्यों कहती निज को अबला, बन सबला क्यों न अहो ! खिलती ?

( ६०९ )

चंडी, दुर्गा का प्रतीक तू, कैसे अवसर यह खोया ?
क्यों न जगाया ऐलों के शासन को, जब था वह सोया ?
कैसा उत्तम अवसर था यह, तुमको आगे आने का
विलास प्रिय नर प्रधान संस्था को, कुछ सबक सिखाने का.

( ६१० )

आते ही मातृत्व नारियाँ, निज को निर्बल बतलाती
आते ही संतान बीच में, कैसे अबला बन जाती ?
राष्ट्र-घटक को पालन-पोषण देनेवाली, निर्बल है ?
यह कैसी व्याख्या पुरुषों की, यह तो नारी का छल है.

( ६११ )

संस्कृति का उच्चतम् शिखर तो, मातृत्व ही कहाता है
पर वह शोभा तब पाता, जब, मर्यादित रह पाता है,
नारी नहीं, यहाँपर पत्नी ही, माता बन सकती है
नारी का, मां बनने की तो, संस्कृति देव जगत् की है.

( ६१२ )

अस्तु, नहीं उपदेशक बनना, यही मानकर मत चलना
भैया के हित हा ! हा ! विधिने की मेरी पूरी छलना,
तुम भी मां की ममता, क्षमता, भूल गई, ना मत कहना
ज्येष्ठ सहोदर की हत्या का, घाव हरा ही है रहना.

( ६१३ )

खेद यही होता है उसका, केशव ने भी घात किया
अपितु मृत्यु में उसके पूरा, केशव ने ही साथ दिया,
जब कि उन्हें यह पूर्ण ज्ञात था, कर्ण तुम्हारा है जाया
फिर भी उसकी हत्या चाही, कहो क्यों नहीं अपनाया ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६१४ )

यह तो सच है, भूल कृष्ण की, भाई का अपराध नहीं
कह हम सा कृष्ण ने उसे क्यों. अपना भाई कहा नहीं ?
क्यों उसके प्राण ही लिये, केशव ने. मैं समझा न यही !
राज कुशल हो, कैसे भूले ? क्यों होगा आश्चर्य नहीं ?

( ६१५ )

प्रश्न कर्ण का सामाजिक था, उसे हाथ क्यों नहीं लिया ?
नारी शुचिता, रक्षा का क्यों, प्रश्न उपस्थित नहीं किया ?
दोषी है संतान कह गये, जैसे भी हो, सत्य यही
जो न सत्य यह, कर्ण प्राप्ति में, थी कोई आपत्ति नहीं.

( ६१६ )

भैया को मरवाकर बोलो, उचित कार्य कौन सा किया ?
भार कौन सा कहो कम हुआ ? परिचय कैसा अहो ! दिया ?
क्या न देश का हुआ अहित ही, एक विचारक नेक गया
विरह व्यथा में उसके रोती, आज यहाँ कुन्ती-तनया.

( ६१७ )

महापुरुष केशव में कैसे अहो ! मिला औदार्य नहीं ?
मरवाया भाई से भाई, निंदनीय यह कार्य नहीं ?
समाज ही है दोषी, 'मां के बदले बेटा फल पाया !—
केशव द्वारा,' केशव ने, सत्कार्य यही कर दिखलाया.

( ६१८ )

'कर्ण-मृत्यु' सत्कर्म[१५४] कौनसा ? कह केशव ने माना था ?
अपने ही भाई की हत्या, कौन धर्म यह जाना था ?
हा ! उदारमतवादी बनकर, क्यों कर माधव खिलें नहीं ?
जाकर कौंतय से कृष्ण क्यों, भाई बनकर मिलें नहीं ?

( ६१९ )

क्यों न समन्वय साध सके, हम लोगों में श्री कृष्ण कभी !
क्यों न कहो. हो स्वय उपस्थित, किया कर्ण का प्रश्न कभी ?
उसे मारकर देश कार्य, सम्पन्न कौन सा अहो ! किया ?
एक विचारक ने यह कैसा, विचित्र परिचय कहो दिया ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# ६

सेनापति क्यों द्रोण बने ?
बंधु के साथ धरा का धर्म गया
हूँ भाई का हत्यारा
बेटा उसका रहा नहीं
कर्ण कर्ण था, कृष्ण नहीं
प्रथम पुत्र था वह उसका ही
लाल उसीने खोया है
राधा के घर पुष्प खिला
तुम्हारा कर्ण स्नेह मुझको ठगता
बंधु बिना का हमें बनाया
अनजाने में हुआ सभी यह
आर्य देश में ऐल आ गये
बंधु खोया मैंने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६२० )

हन्त ! सभी ने ताप बढ़ाया, तुम को दुखा नहीं सकता
बहुत कह गया अबतक, आगे, और नहीं कुछ कह सकता,
यह तो निश्चित कर्ण महात्मा, एक महामानव हो था
अंदर-बाहर था समान ही, गुणादि का उपवन ही था.

( ६२१ )

मिला पूर्ण निःश्वार्थी जीवन, इसमें अब दो राय नहीं
दुर्योधन को बचन दिया था, बाधक बनकर रहा नहीं,
लोभ 'राज्य, यश' का न उसे था, मिला आचरण शुद्ध नहीं ?
कैसे अब स्वीकार न हो यह, कीर्ति पुरुष था निश्चय ही.

( ६२२ )

नीति भ्रष्ट यदि वह होता तो, केवल द्वेष्टा ही मिलता
भीष्म पतन पर कुरु क्षेत्र पर, आकर आप स्वयं खिलता,
'युद्धनीति ही यदि अवसर से, लाभ उठाने को कहती—
केशव[१५६] सी,' तो कर्ण-बुद्धि क्या, वैसा किये बिना रहती ?

( ६२३ )

भीष्म पतन पर युद्ध करूंगा, कर्ण प्रतिज्ञा यही रही
तब क्यों सेनापति न बना वह, यह चर्चा का विषय नहीं ?
सेनापत्ति पद दिया द्रोण को, स्वयं कर्ण ने, ज्ञात किया
क्यों आर्योचित मर्यादा का, परिचय उसने आप दिया ?

( ६२४ )

क्यों न कहा दुर्योधन' 'लो अब अपने मन की कर लूंगा,
दूंगा परिचय अब मैत्री का, शांति तभी मैं वर लूंगा,
मैंने वचन दिया था तुमको, भीष्म पतन पर लड़ना है
और अकेले जन्मजात अरि, अर्जुन से ही, भिड़ता है.'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६२५ )

क्यों न हुआ यह उसके द्वारा, सेनापति क्यों द्रोण बने ?
क्यों यह अवसर खोया उसने, सोचा है इसपर किसने ?
क्यों न कर्ण नें की अगवानी, ग्यारहवें[१५८] दिन आकर के ?
क्यों न दिखाया दुर्योधन को, अपना बचन निभाकर के ?

( ६२६ )

बोलो मां ! क्यों भीष्म पतन पर, वह सेनापति बना नहीं ?
क्यों पद का भूखा न मिला वह, होता है आश्चर्य यही,
उसके निर्भय उदारता की, यह भी कैसी महानता ?
किसने दिखलाई बतलाओ, रण में इतनी सज्जनता ?

●

( ६२७ )

वह तो निश्चित बचन बद्ध था, दुर्योधन हित, सत्य यही
कहां उसे था ज्ञात, बंधु है पांडव, क्या यह सत्य नहीं ?
रंग भूमि के अवसर पर था, विरोध हम सबमें आया ?
किसे ज्ञात था तब, कि कर्ण है, माता ! तेरा ही जाया ?

( २२८ )

कह उसका भी भला दोष क्या ? विरोध बढ़ता चला गया
वैसे-वैसे देता आया, वैर नित्य संकेत नया,
यह सब ज्ञात हुये पर भी क्यों, मौन मिली ? फल भी पाया
अपने हाथों मार मिटाया, तुमने अपना ही जाया.

●

( ६२९ )

उसके मरवाने में दोनों ही, सम दोषी मिलते हैं
किन्तु समस्या-फल[१५९] दोनों के, भिन्न-भिन्न ही खिलते हैं,
दोनों अपने पथ के राही, अपनी-अपनी राह चलें
इसीलिये भी मां कुन्ती की, कैसे कोई चाह फलें ?

( ६३० )

अस्तु, हुआ अब यही, बंधु के साथ, धरा का धर्म गया
अंब ! गया मांगल्य, उसी के साथ, धर्म का वर्म गया,
साथ भक्ति भी गई उसी के, सत्य ले गया साथ वही
शब्द नहीं यह मेरे, बानी[१६०], वासुदेव की, सुनी यही.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६३१ )

किसी मृत्यु या हत्या का परिणाम, कृष्ण पर हुआ नहीं
कर्ण मृत्यु आघात कृष्ण के, अंतर्मन को, छुआ नहीं ?
कर्ण मृत्यु पर कृष्ण-आंख में, आंसू, मैंने सुना यही
तब बचाव में उसके कोई, कैसे जाला बुना नहीं ?

( ६३२ )

मां ! जीवन भर छल कपटादिक, केशव करते आये हैं
किन्तु हृदय सद्भाव रहे हैं, अनुचित नहीं कहाये हैं,
तब केशव-मन, कर्णादर होकर भी, पलटा क्यों आया ?
कर्ण मृत्यु पर, क्यों यह पश्चाताप, प्रकट कह हो पाया ?

( ६३३ )

क्यों न कहूँ तब, किया प्रभावित उन्हें कर्ण-अपनेपन ने ?
इतने पर भी हत्या उसकी, क्यों चाही कह केशव ने ?
इसका उत्तर मिला न अबतक, और मिलेगा नहीं कभी
कृष्ण नीति की चंचलता से, है परिचित अब यहाँ सभी.

( ६३४ )

करते मन का कहा, आजतक, यही देखते हम आये
किन्तु उचित है सभी, भला यह, कैसे माना भी जाये ?
कर्ण मृत्यु निश्चित अनुचित है, यही मुझे अब कहना है
किसी तर्क पर अब केशव के, मुझे नहीं चुप रहना है.

( ६३५ )

सत्य निष्ठ था कर्ण, जोड इतिहासों में उसको न कहीं,
वह जो आया नहीं इधर, दुख मुझको उसका तनिक नहीं,
उदर तुम्हारा नहीं लजाया उसने, तुमको धन्य किया
सुपुत्र को ऐसे, जननी ने, सिवा मृत्यु के कुछ न दिया !

●

( ६३६ )

माता ! मैं तो ज्येष्ठ पुत्र था, कर साहस सब कह जाती
सकुचाने की बात नहीं थी, कुछ तो मन वांछित पाती,
खेद यही है केशव ने भी, अपने पास रहस्य रखा
अबतक भी अनजान बना है, यह अर्जुन का प्राण सखा.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६३७ )

तुम तो आई, कह डाला, पर दिया कृष्ण ने भेद नहीं !
एक शब्द तक कहा न अबतक, कर्ण विषय में, खेद यही !!
जो हो, भाई दिया न मुझको मैं इतना ही बोलूंगा
विरह आग में जला करूंगा, कहीं न मन को खोलूंगा.

( ६३८ )

तुम भी कुछ कर नहीं सकी, हमको भी अवसर दिया नहीं
तुमने भी तो अपने मन का, कहा सुना, औ' किया वही,
कुरुक्षेत्र के समर धरा की, क्या बननी थी कथा यही ?
अंतिम क्षण तक पीड़ा देगी, यह साधारण व्यथा नहीं.

( ६३९ )

यह भी कैसी विजय, शांति का, हृदय कर सका वरण नहीं
कौन करेगा मुझे क्षमा कह, है आशा की किरण कहीं ?
हूं भाई का मैं हत्यारा, बने नहीं यह ना कहते
कैसे घाव भरेगा अब यह, मरना है पीड़ा सहते

●

( ६४० )

भाभी[१६१] के सम्मुख जाने का, धैर्य कहाँ से अब लाऊँ ?
बतलाओ भतिजे[१६२] को अपने, किन शब्दों में समझाऊँ ?
प्रश्न करेंगे तो उत्तर का, कैसे मेल बिठाऊँगा ?
क्या उनके आसूं पोछूंगा, वह साहस कर पाऊँगा ?

●

( ६४१ )

कैसे ऊपर दृष्टि करूंगा, जाकर सम्मुख राधा के ?
क्या क्या नहीं कहेंगे, पूछे बिना, घाव उस वृद्धा के,
जिसने पुत्र तुम्हारा पाला, उसकी जाया बन कर के
ऐसी नारी रत्न कब मिलो, इतिहासों में अबतक के ?

( ६४२ )

प्रथम पुत्र वह था उसका ही, वीर प्रसूता सिद्ध हुई
वह पालक मां यह चर्चा तो, तुम से अभी प्रसिद्ध हुई ?
खोया पुत्र उसी ने, निश्चित अपना, तुमने नहीं, नहीं
तुम्हें मिल गये पुत्र तुम्हारे, बेटा उसका रहा नहीं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६४३ )

सत्य यही, क्षत-विक्षत होगी, हुई उसी मां की छाती
सर्वश्रुत है, पूछो जाकर, कर्ण उसी की था थाती,
नहीं आजतक ज्ञात किसी को, वह कुन्ती का जाया है
कहीं सुनोगो नहीं कर्ण को, राधा का अपनाया है.

( ६४४ )

पुत्र विहीन अभागन माता, एक वही अब कहलाती
कर्ण-विरह के घावों को तो, वहीं मिलेगी सहलाती,
जननी ! पीड़ा कर्ण मृत्यु की, उतनी होगो तुम्हें नहीं
सत्य यही माँ ! बुरा न मानो, स्पष्ट कहूँगा तुम्हें यही.

( ६४५ )

अंब ! यशोदा औ' राधा की, होगी समता नहीं कहीं
कर्ण कृष्ण में महदंतर है, कर्ण कर्ण था, कृष्ण नहीं,
पीड़ा राधा के मनकी तो, अहो ! कर्ण हो जान गया
कुन्ती की तुलना में राधा को ही, अपना मान गया.

( ६४६ )

इसमें उसका भला दोष क्या, यह आत्मा का बन्धन है
सुना यशोदा की ममता का, कब केशव ने क्रंदन है, ?
यह केशव का जीवन दर्शन, नहीं कर्ण में दिख आया
बना रहा राधेय सदाका, उचित वही तो कर पाया.

( ६४७ )

तुम्हीं बताओ क्या तुम ममता, राधा की, दे सकती थी ?
क्या वह आत्मीयता तुम्हारे, पास अभी मिल सकती थी ?
उस माता की वत्सलता का, क्या तुम दर्शन दे पाती ?
कैसे संभव था यह ? वह तो, है राधा की ही छाती.

( ६४८ )

देखो जाकर तडपन उसकी, लाल उसी ने है खोया
था आंचल–धन वह उसका ही, गोद उसी की था सोया,
जन्म दिवस से अंग अंश वह, था राधा की ममता का
निश्चय ही निर्माण कर्ण का, फल राधा की क्षमता का.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६४९ )

भले कर्ण तेरा जाया था, पर राधा का कहलाया,
राधा ने ही दे वत्सलता, जीवन उसका सहलाया,
कैसे हो वह पालक माता, सम्मुख जननी बन आई
होगी तू जननी, पर जननी, सच्ची राधा बन छाई.

( ६५० )

देख अवस्था उसकी जाकर, पुनः कहूंगा तुम्हें यही
व्यथा देवकी में न यशोदा की होगी, है सत्य यही,
कर्ण उसीका प्राण, व्यथा कर्ण की, उसे ही हो सकती
अकुलहट राधा की बोलो, कैसे तुममें आ सकती ?

( ६५१ )

पालक माता का न मूल्य मैं, तनिक घटाना चाहूँगा
इतना अन्यायी न बनूंगा, क्यों यह पाप कमाऊँगा ?
राधा आर्या सिद्ध हो गई, राधात्मज ही कर्ण मिला
भले लगी हो कली कहीं, पर राधा के घर, पुष्प खिला.

( ६५२ )

कैसे पालक माता उसको, कहूँ आज, समझा न यही
पालक माता का तो उसमें, एक मिला व्यवहार नहीं,
वीर प्रसूता वही कर्ण की, कुंती कैसे हो सकती ?
ऐसी माता बिरली, बिरला, अधिरथ जैसा महीपती.

( ६५३ )

यह भी महदाश्चर्य, भयंकर, तीनों[१६३] जीव समान मिलें
पालक माताओं के घरपर, सबके जीवन-पुष्प खिलें,
फिर भी पालक माँ के मन की, तुमने की कल्पना नहीं
जननी ही माँ, इसका भी तो, दर्श दिया अल्प ना कहीं.

( ६५४ )

जननी बनकर दिखला सकती, जगती को पालक माता
कैसे कह दे सच्चा होता, अहो ? खून का ही नाता,
राधा ने यह सब झुठलाया, बदल सको इतिहास नहीं
छोद्र देखने वाले को भी. नहीं दिया आभास कहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तबतक थी संतान उसे कब ? कर्ण मिला, मां कहलाई
कैसे उर-वात्सल्य जगा ? यह हृदय कहाँ से वह लाई ?
क्यों न कहूँ यह अब गत भवका, पुत्र-भाव-संबंध रहा
कर्ण प्राप्ति पर अतः स्तनों से, दोनों, दुग्ध प्रवाह बहा.

( ६५६ )

पुत्र बनाना कब होता है, पुत्र आप बन जाता है
उसमें वह वात्सल्य भाव तो, आप सहज जग जाता है,
तनिक मान्यता पूर्व जन्म की यहाँ, काम कर जाती है
जो हो, अब राधा ही उसकी 'मां, जननी' कहलाती है.

( ६५७ )

साधुवाद के पात्र कर्ण है, कृतघ्न वह कब कहलाया ?
ज्ञात हुयेपर भी राधाका, मूल्य घटा वह कब पाया ?
प्रामाणिकता तनिक न कम की, राधा को न रुला पाया
तेरा भी सम्मान किया औ', राधा को न भुला पाया.

( ६५८ )

रक्त पराया अपना कहना, पवित्र मन की बात रही
राधा के इस वत्सलता को, भूलेगा इतिहास नहीं,
जितना है प्रिय पार्थ तुम्हें, था उतना ही प्रिय कर्ण उसे
यह उत्तर क्या तुम्हें माँगना, होगा जाकर कहीं किसे ?

( ६५९ )

यह तो सभी सहज है, वह कर्तव्य परायण कहलाई
दया, त्याग, ममता, क्षमता की, सरिता बनकर बह पाई,
इसीलिये खून ही खून का, रंग सुवर्ण दिखाता है
कैसे कह दूँ ? असत्य लगता, राधा सच्ची माता है.

( ६६० )

पालक पिता जनक बन सकता, यह भी तो अब देख लिया
अधिरथ ने भी इतिहासों को, एक अमर अभिलेख दिया,
अहो ! अन्त कर्ण भी कहाया, आत्मज ही तो अधिरथ का
भाग्य शिखर चढ़ गया और यह, अवैध राही, जल-पथ का.[१६४]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६६१ )

पुरुष हुआ तो भला क्या हुआ, क्या उसमें वात्सल्य नहीं ?
पुरुषों में वात्सल्य नहीं हो सकता, चुभता शल्य यही,
सच तो यह वात्सल्य उसी का, राधा का पुरुषार्थ रहा
दोनों मिलकर एक बने, भैया का जीवन साथ रहा.

( ६६२ )

हन्त ! अंब ! राधा के मन की, नहीं कल्पना की तुमने
एक शब्द तक कहा न अबतक, देख लिया यह भी हमने,
जिसने तेरा जाया आत्मज माना, जीवन-दान दिया
की न याद भी उसकी, उसका यह कैसा अपमान किया.

( ६६३ )

जिसने अपने औरस[१६५] भी तो साथ कर्ण के खोये हैं
तुम्हें न आई आँच अंश तक, भाग उसी के सोये हैं,
सम्भव है यदि कृष्ण न होते, पांडव देख नहीं पाती
नहीं छोड़ता कर्ण, मिटा यह, विधि का लेख नहीं पाती.

( ६६४ )

अब जाकर दोनों के सम्मुख, कृतज्ञता तो प्रकट करो
जाकर उनका दुख कम कर दो, प्रयत्न वैसा अथक करो,
निश्चित उनके सम्मुख, तेरा दुःख, मुझे फीका लगता
सच कहता हूँ मात ! तुम्हारा, कर्ण स्नेह मुझको ठगता."

( ६६५ )

बोली कुन्ती-"बस बेटे ! आगे न बढ़ो, इतना तुम भी
बहुत हुआ, मैं माँ हूँ, जो हूँ, सो यह हूँ, भूलो न कभी,
जिस समाज में पली बढ़ी मैं, ध्यान रखो उसका केवल
मैं तो बोल गई पहले ही, दोषी माता है केवल.

( ६६६ )

पर सच क्या है, क्या न ज्ञात है, फिर मां को क्यों दोष भला
तुम्हें सोचना है इसपर ही, जन-प्रवाह किस ओर चला,"
कहा धर्म ने—"अंब ! क्षमा, सामने आज तुम एक नहीं
नारी है, नारी जीवन है, ऐल राज्य का, सत्य यही.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

( ६६७ )

नारी नारी है, नारी का, मूल्य घटाना मुझे नहीं
भारतीय मातृत्व-भावना घटी, कहूंगा तुझे नहीं,
उस पावन नारी का तुझको, किन्तु अभी तक स्मरण नहीं
मैं भी मां हूं भारतीय, यह हुआ तुझे विस्मरण नहीं ?

( ६६८ )

वारंवार यही कहने को, कर्ण स्नेह उकसाता है
मैं भी हूँ लाचार, बंधुका, मुझको विरह सताता है,
कैसे ? कह बतलाऊँ वह अब, बतलाने की बात नहीं
पीड़ा मेरी ज्ञात मुझे ही, कैसे भूलूँ, घात नहीं ?

●

( ६६९ )

पूज्या भाभी, प्रिय भातृज की, ममता अब हट सके नहीं,
उपकारों की राधा अधिरथ के, विस्मृति हो सके नहीं,
वृषकेतु[१६६] सौभद्र दुजा, क्यों समझ यही अब चले नहीं ?
तुम्हें मिलेगा कर्ण, मुझे अभिमन्यु, भाव मन पले यही.

●

( ६७० )

तुम्हीं कहो मां ! और कहूं क्या, कैसे भार उतारूंगा ?
बिगड़ गया भव मेरा सारा, कैसे अहो ! सुधारूगा ?
क्या करने से शांति मिलेगी मनको, कौन बतायेगा ?
इस पातक से कौन देवता, मुझको अहो ! बचायेगा ?

( ६७१ )

कौन करेगा क्षमा बताओ, कितना पाप कमाया है ?
निर्दय बनकर अपने हाथों, मारा निज मां जाया है,
मां ! मैंने ही कर्ण मृत्यु हित, अर्जुन को उकसाया था
हन्त ! मुझे क्या पता कि वह तो, मेरा ही मां जाया था.

( ६७२ )

दुःख यही यह राज्य बंधुके, चरणों में मैं रख न सका
उसका अनुचर बनकर उसकी, सेवा का रस चख न सका,
ज्येष्ठ बंधु की आज्ञा कैसे, होती, अनुभव कर न सका
अग्रज का कर्तव्य पूर्ण कर, सहर्ष मैं दिखला न सका.

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६७३ )

अंत समय तक हम अनजाने, दोष हमारा अल्प नहीं
कर्ण शत्रु था, यही ज्ञात था, घटी भावना स्वल्प नहीं,
किन्तु हुआ सो हुआ, नियतिके द्वारा, सत्य चराचर है
या तो हुआ तुम्हारे कारण, यह भी सत्य सरासर है.

( ६७४ )

यह कहने में माता के प्रति, घटी न आदर की मात्रा
खेद यही है किन्तु सफल यह, हुयी न जीवन की यात्रा,
याद बंधु की हिला गई 'मन, जीवन' भाई मिला नहीं
साथ बंधु के दो दिन भी तो, मेरा जीवन खिला नहीं !

( ६७५ )

सब में ज्येष्ठ वही था, घर का संचालक था योग्य वहीं ?
करता संचालन हम सबका, बनकर वही सुयोग्य नहीं ?
जीवन नन्दन वन बन खिलता, निश्चित मोड़ नया आता
कुछ तो नव सर्जन ही होता, कुछ नवीनता वह लाता.

( ६७६ )

हम कनिष्ठ वह ज्येष्ठ, ज्येष्ठ का, हम करते सम्मान सदा
ज्येष्ठ बंधु के स्निग्ध स्नेह का, मैं 'करता रसपान सदा,
उसकी आज्ञा में हम रहते, क्या होता आनन्द नहीं—
एक अनोखा', 'उससे वंचित, रखा तुम्हीं ने हमें नहीं ?

( ६७७ )

हा ! हा ! अंब ! तुम्हारे कारण दिन न देखने मिलें वहीं
पुष्प छहों तेरे आंगन में, विविध रूप ले खिले नहीं,
मौन तुम्हारा घात कर गया, मन मेरा भरमाया है
बंधु बिना का हमें बनाया, आप रची यह माया है.

( ६७८ )

अस्तु स्मरण कर एक एक अब, होगा कोई लाभ नहीं
शक्ति न ऐसी कोई जिससे, शांति लाभ की आस नहीं,
अब तो आगे क्या करना है, विचार इसपर करना है
भाग्य रखे वैसा रहना है, मरण एक दिन वरना है.

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किन्तु स्थान उसका न रिक्त हो, मां राधा को बचन यहो
धर्म, कर्ण बन नहीं सकेगा, कर्ण-कर्ण था, धर्म नहीं,
अतः कहूँगा राधा मां से, करो क्षमा अपराध सभी
अनजाने में हुआ सभी यह, सत्य न भूलो यही कभी.

( ६८० )

पार्थ कर्ण के बदले में लो, कर्ण उसी को अब मानो
कहो नहीं वह हत्यारा है, बल्कि सत्य को पहचानो,
निश्चय वह था शत्रु भयंकर, इसमें शंका तनिक नहीं
पर वह था कौंतेय, यही तो, था हमको भी ज्ञात नहीं.

( ६८१ )

ज्ञात हमें पहले हो जाता, ऐसा समय नहीं आता
भले शत्रु था, सम्मुख आते, अग्नि शिथिल ही बन जाता,
अंत खून का रिश्ता था यह, निश्चित जाता पहचाना
कभी न उठता शस्त्र किसीपर, था अर्जुन भी अनजाना.

( ६८२ )

खेल भाग्य का समझ न पाये, हन्त ! दैव ने घात किया
क्रूर नियति ने मानो हम पर, निश्चित वज्राघात किया,
खूब नचाया मुझ को, 'मैं ही कर्ण-मृत्यु की चाह लिये
कर्ण मृत्यु तक जीता आया,' उसका ही डर हृदय लिये.

( ६८३ )

वर्ष त्रयोदश निद्रा आई, नहीं, कर्ण के कारण ही
सोते या जागते सामने, रहता आया एक वही,
'कर्ण मरा' कब सुनू, रहा मैं माता ! इसी प्रतीक्षा में
हन्त ! बन सका नहीं सफल मैं, जीवन कठिन परीक्षा में.

( ६८४ )

मात ! कर्ण मृत्यु की प्रतीक्षा, बहुत महँगी मुझे पड़ी
कैसा यह दुर्भाग्य, भाग्य ने, नहीं जुडाई कहीं कड़ी,
कर्ण न था राधेय, रहा कौंतेय, 'यही था ज्ञात नहीं—
अंत समय तक' तुम्हीं बताओ, हम भी थे अज्ञात नहीं ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६८५ )

युद्ध पूर्व खुलता रहस्य यदि, नक्शा सभी बदल देता
राज्य सुयोधन को दे देता, बदले में भाई को लेता,
कहता—मुझको भाई दे दो, सविनय बिनती है तुमसे
जो है मेरी मां का जाया, छिनो न निर्दय बन हमसे.

( ६८६ )

मूल्य राज्य का गौण, कर्ण के आगे, क्या यह सत्य नहीं ?
कर्ण सहोदर था, भाई था ज्येष्ठ, रहा अज्ञात नहीं ?
बिना भाग्य के कहीं सहोदर, मिला किसी को आज तलक
किन्तु अंत तक पता न चलना, यह भी है दुर्भाग्य-झलक.

( ६८७ )

अस्तु विनय, लो पार्थ, कर्ण रूप में, बताओ उदारता,
निश्चय तुम में है जगती की, ममता, क्षमता औ' समता,
पुत्र अन्यथा किसी अन्य का, बना नहीं सकती अपना
मान अतः पार्थ को कर्ण ही, पूर्ण करो मेरा सपना.

( ६८८ )

यद्यपि कार्य कठिन है, फिर भी, इतनी दया दिखा जाओ
मान पार्थ को कर्ण, मृदुल इतिहास पृष्ठ यह, लिखवावो
अमर बनोगी तुम्हीं, न कुन्ती, यही कह रहा मन मेरा
युग-युग गायेगा, लायेगा, मुख में नाम अमर तेरा.

( ६८९ )

पुनः विनय, मां राधा ! तुमसे, 'दो आंचल पार्थ को वही
एक दिवस जो दिया कर्ण को, पूर्ण करो अभिलाष यही,'
तुम हो वत्सलता का सागर, हो भारत की सन्नारी
अद्भुत त्याग, तपस्या, करनी की महिमा विस्तृत न्यारी.

( ६९० )

खेल नियति का नियति जाने, उसने नाच नचाया है
यही मानकर करो क्षमा, मां ! कहो पार्थ अपनाया है,
करो प्रवाहित वत्सल धारा, सरल बनाओ अब मन को
यही कहूँगा मैं राधा से, गले लगाओ अर्जुन को.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बन अपराधी अर्जुन से भी, यही कहूँगा हे भ्राता !
मिटकर कुन्ती का बन बेटा, अब तू जाकर राधा का,
स्पष्ट कहूँगा वीर पार्थ से, अब है प्रायश्चित् यही
भ्राता को हत्या का भैया, दूजा अन्य सुपंथ नहीं.

●

( ६९२ )

दाशराज्ञ[१६७] युद्ध के अनंतर, भाग्य धराका[१६८] रोया है
'सुरा, सुन्दरी, देव, ऐल' मिल, भारत-वैभव खोया है,
हुई बाढ संकर[१६९] की, सत्तापर भी संकर ही आया
मूल सभ्यता, संस्कृति बिगड़ी, विलास ऐलों को भाया.

( ६९३ )

बिगड़ गया इतिहास यहाँ का, ऐल जनों के ही कारण
शोध खोज पर इस विकृति का, अन्य नहीं है उदाहरण,
ऐल आगमन[१७०] शाप रूप ही सिद्ध हुआ, है सत्य यही
अस्तव्यस्त था समाज सारा, मांग रही थी रक्त मही.

( ६९४ )

विधान टूटा चतुवर्ण का, विवाह[१७१] मर्यादा न रही
उसने अपनी महानता की, कोई बात कहीं न कही,
विवाह संस्था विधि विधान का, रहस्य जाना गया नहीं-
ऐसी बात नहीं, पर उसका, मूल्य चुकाया गया नहीं.

( ६९५ )

सत्य यही, उपलब्धि मिली, परिवार सृष्टि की किसे नहीं
पारिवारिक बंधन में बांधा गया, न मानव हुआ यहीं,
जहाँ प्राकृतिक लगाव की भावना, काम करते आई
मूल्य उसी का ऐल प्रजा ने, किया न कुमति घनी छाई.

●

( ६९६ )

जगती की यह पावन धरती, इतिहासों का मूल यही
संस्कारों की आद्य धरा यह, नहीं मिली प्रतिकूल कहीं,
परंतु इसकी महानता को हा ! हा ! नापा गया नहीं
मूल्य विलासी ऐल प्रजा से, इसका आंका गया नहीं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

( ६९७ )

आर्य देश में ऐल आ गये, नित्य पतन की राह चलें
भाग्य बिगाड़ा भरत धरा का, दोषी इसमें भले-भले,
क्या थी, क्या हो गई धरा यह, तम ही बढ़ने वाला था
एक दिवस भाई भाई से, अवश्य लड़ने वाला था.

( ६९८ )

इसीलिये इस महा युद्ध का, कारण कौरव मात्र नहीं
वे तो सारे निमित मात्र है, दोषी एक न पात्र कहीं,
भीषण रण यह होना ही था, इसमें शंका तनिक नहीं
किन्तु बने हम इसका कारण, व्यथा सताती एक यही.

( ६९९ )

मात ! यही होना था, इसके, सिवा न कोई चारा था
ऐलों द्वारा देश बना यह, विपदाओं का मारा था,
नहीं हुई पहचान सत्य की, जहाँ-तहाँ छल, कपट चला
नारी शक्ति पर आघातों से, एक नहीं संस्कार खिला.

( ७०० )

उदार आत्मा नहीं तुम्हारी मिली, बंधु खोया मैंने
उदार आत्मा नहीं कृष्ण की मिली, भाग्य खोया मैंने,
उदार आत्मा नहीं भीष्म की मिली, स्वजन खोये मैंने
नहीं द्रोण को मिली, रक्त से, हन्त ! हाथ धोये मैंने.

( ७०१ )

अस्तु, यहां वृषकेतु चाहिये, एक अधारी आज वही
है पहला अधिकार उसी को, जलांजलि का सही-सही,
हम सब तो श्रद्धांजलि देंगे, अंतर्मन से, श्रद्धा से
जाकर लाना होगा सादर मात ! बुला कर राधा से.

( ७०२ )

सिवा न उसके जलांजलि का, मूल्य अहो ! हो पायेगा
अधिरथ, राधा, भाभी के बिन, सार्थक नहीं कहायेगा,
प्रायश्चित्[१७२] पापका हमारे, पूर्ण तभी हो जायेगा
हम सब मिलकर श्राद्ध करेंगे, भैया सद्गति पायेगा.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## और अंत में

सुनने वाले सुना करेंगे, महायुद्ध की अमर कथा
इतिवृत्तों में अंकित होगी, कर्ण मृत्यु की अमर व्यथा,
किन्तु अंत में यही बनेगा, गुण विजयी के गायेंगे
तथा कर्ण से पात्र उपेक्षित, निश्चय ही रह जायेंगे.

●

अस्तु, कर्ण के माध्यम से यह, मंथन प्रस्तुत किया गया,
पूर्व सृजित गाथाओं से यह, होगा निश्चित ज्ञात नया,
वैदिक इतिहास के साथ है, महाकाव्य काल भी लिया
शुद्धि मांगता भारत का इतिहास, नम्र संकेत किया.

●

सुविज्ञ पाठक, विद्वज्जन, जो इतिहासों के चिंतक है
पुराविदों का भी मत-निर्णय, साधिकार आवश्यक है,
जगद्गुरु कहलाया भारत, जब विधान है सत्य यही
तो दे हम भी अब जगती को, परिचय उसका सही-सही.

● ●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# मन्थन

## जलांजलि

( पूर्वार्ध )

## टिप्पणी विभाग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

**जगज्जननी**—यह संबोधन जैसे भारतीय नारी के लिये किया गया है वैसे ही भारत की धरती को भी किया है । हम धरती को माता कहते है । मां के जैसी ही उसके प्रति पूज्य भावना रखते हैं । हम धरती का पूजन भी करते हैं । यह प्रथा, यह भावनायें, शायद ही दुनिया के व्यवहार में भारत को छोड़कर किसी अन्य देश में हो । हमारे साहित्य में इस प्रकार नारी और धरती को पूज्य माना है । यही नहीं विदेशी विद्वानों ने भी हमारे धरती के लिये जगत् माता, जगज्जननी, माता, आद्यजननी इसी प्रकार का संबोधन किया है । विदेशी विद्वान एम० लुई० जेकोलाईट कहता है—"मानव जाति की माता, तथा मनुष्य की आद्य जननी ।" ह्वि० काउझन इस धरती को मनुष्य जाति का आद्यस्थान, उच्चातिउच्च तत्वज्ञान की जननी आदि नामों से स्मरण करता है ।

इस प्रकार भारत माता के लिये दुनिया के अनेक विद्वान पूज्य भावनायें प्रकट करते हैं । उसे आद्य मानते हैं । निश्चय ही यह धरती भौगोलिक दृष्टि से प्राचीन है, आदि सभ्यता का मूल स्थान है । इसमें अतिशयोक्ति नहीं है ।

२. दुनिया का विद्वान इस धरती से अपना रिस्ता मानता है, जोड़ता है। वह कहता है यह हमारी माता है। देखिये मंथन प्रथम भाग कर्ण कृष्ण पृ० १६०, १६६ ।

३. निश्चय ही दुनिया का विद्वान इस धरती को घूटने टेक कर प्रणाम करता है । यह सच है दुनिया को इस धरती के प्रति बहुत ममता है । इसके अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं ।

४. **प्राचीन**—यह धरती सभ्यता, संस्कृति, ज्ञान, विज्ञान आदि में ही प्राचीन नहीं है, अपितु, जहाँ सर्वस्व जल ही, जल था तब उसमें से जो धरती निकली, जिसे चतुर्द्वीपा वसुंधरा कहा गया उसमें इस धरती का समावेश है । यही नहीं उस चतुर्द्वीपा वसुंधरा का मध्य बिंदु यानी नाभि केन्द्र कहलाने का सौभाग्य इसी धरती को प्राप्त हुआ है । देखिये, मंथन प्रथम भाग 'आद्यधारित्री' पर दी हुई टिप्पणी ।

५. **मोहक संगम**—धी के मानी बुद्धि, ज्ञान । श्री के मानी लक्ष्मी कीर्ति, ऐश्वर्य और यश के मानी ख्याति, प्रशंसा इन तीनों का मोहक संगम दुनिया के प्राप्त इतिहास में अगर कहीं मिलता है तो वह भारतीय सभ्यता और संस्कृति में, भारतीय ज्ञान भंडार में, उसके प्राचीन इतिहास में ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

**६. युग पुरुषों की तू जननी**—इसमें कहीं कोई असत्य नहीं है कि यह धरती युग पुरुषों की जननी है, युग निर्माताओं की जननी हैं। दुनिया के इतिहास में जितने भी युग पुरुष हुये, हैं, युग निर्माता हुये हैं, वे सबके सब एशिया खंड के ही मिलते हैं। जितने भी धर्म प्रवर्तक हुये हैं वे एशिया खंड में ही उत्पन्न हुये हैं। ईरानी धर्म का प्रवर्तक महात्मा जरश्रोस्त, जैन धर्म का उद्बोधक भगवान महावीर, बौद्ध धर्म का उपदेशक तथागत गौतम, इसाई धर्म का प्रेरक येशु ख्रिस्त, इसलाम् धर्म का संदेश वाहक महम्मद साहब, उसी तरह उसके पूर्व के अर्थात् येशु के पूर्व के हजरत मूसा, चीन के कन्फूसियस, ताओ आदि सभी एशिया खंड के ही हैं। इस एशिया खण्ड में सर्वश्रेष्ठ कहा जाने वाला, ज्ञान के प्रकाश का, धर्म, संस्कृति और सभ्यता का मूल भरत वर्ष ही है। हम अपने को आज भी भरत वर्ष के नहीं अपितु एशिया खंड के निवासी मानते हैं। हम प्रथम एशिया खण्ड के ही निवासी हैं। हम आज तक उसे भुला नहीं सके हैं। हमारे मंत्र में 'जंबुद्वीपे भरत खण्डे', ऐसा उच्चार हमारे पंडित लोग आज भी करते हैं। करते चले आ रहे हैं। एशिया का प्राचीन नाम जंबुद्वीप ही है।

**७. भरतों**—भरत एक वचन और भरतों अनेक वचन। भारत की प्राचीन प्रजा। जिनके नाम पर इस देश का नाम करण हुआ वह प्रजा। इस प्रजा का मूल पुरुष भरत था। यह भरत आज से कम से कम नौ, दस हजार वर्ष पूर्व हो गया है। भरत के पूर्व इस देश का नाम भरत के पितामह नाभि के नामपर नाभि खंड था। उसके पूर्व हिमवर्ष और उसके भी पूर्व अजनाभ खंड मिलता है। प्राप्त इतिहास का भारत का प्रसिद्ध ऐतिहासिक पात्र यही ही है। इसके पिता का नाम ऋषभ था। यह ऋषभ जंबुद्वीप ( वर्तमान एशिया खंड ) के महराजा स्वायंभुव के ज्येष्ट पुत्र प्रियव्रत के पीढी का चौथा व्यक्ति है। इन भरतों के विषय में हम मंथन के प्रथम भाग कर्ण-कृष्ण में बहुत कुछ कह गये हैं।

भरतों को आजतक के सभी इतिहासकारों ने भुला दिया है। भारतीय आर्यों की चंद्र और सूर्य इस प्रकार दो ही शाखायें ये महानुभाव बताते हैं और भारत का इतिहास आरम्भ करते हैं। प्रायः सभी यही कहते हैं कि "भारत का इतिहास काल आर्य जाति के ऋग्वेद से आरम्भ होता है।" दूसरे एक विद्वान कहते हैं। आर्य जाति के इस देश में पदार्पण करने के पहले भी यहाँ ऐसे लोग रहते थे जो किसी हद तक सभ्य थे।"[१]

---

१. प्राचीन भारत ले० गंगा प्रसाद मेहता, बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय सं० १९९०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अर्थात् पहले विचार विदेशी विद्वानों का अनुकरण मात्र है। सच बात तो यह हैं कि आर्य शब्द जाति वाचक नहीं है। दूसरी बात यहाँ जब आर्य शब्द संस्कार वाचक है तो ऐसी कोई संस्कारी की जाति इस देश में आई नहीं। तीसरी बात उपरोक्त उद्धरण का वाक्य कि "आर्य जाति के इस देश में पदार्पण करने के पहले भी यहाँ ऐसे लोग रहते थे जो किसी हदतक सभ्य थे।" इसमें 'ऐसे लोग' और 'किसी हदतक सभ्य' यह दो शब्द हमें अच्छे नहीं लगे। हम मानते हैं कि इस पुस्तक का प्रकाशन इ०स० १९३३ मे हुआ है, अतः शोध की प्रवृत्ति ने जोर नहीं पकड़ा है। अभी हम गुलाम ही हैं, और राष्ट्रीय आन्दोलन चल रहा है। जहाँ-तहाँ अशान्ति है। अंग्रेजों के विरोध का वातावरण बना हुआ है। ऐसे समय में यह पुस्तक लिखी गई है। अतः हम लेखक को दोषी नहीं मानते। लेकिन इसके पश्चात् स्वतन्त्र भारत में भी प्राचीन[1] भारत के इतिहास पर लिखा गया है उसमें भी कोई नवीनता नहीं आई। नवीनता से मेरा मतलब इतिहास के प्रति प्रामाणिकता अथवा सत्यता से है। वह कोसों दूर है आज भी। प्रायः सभी ने वही परम्परा चलाई है। विदेशियों के ग्रंथों का आधार लेकर उन्हें ही प्रामाणिक मानकर चलने की प्रथा आजतक इस भारत में चल रही है। फलतः भारत का यानी भारतों का इतिहास आजतक भी घने अंधःकार में दबा पड़ा है।

भारत का इतिहास ऋग्वेद से नहीं ऋग्वेद से भी पूर्व से आरंभ होता है। वंशावली के आधार पर जहाँ ऋग्वेद का इतिहास चन्द्रवंश की पन्द्रहवीं या सोलहवीं पीढी से चालू होता है वहाँ भरतों का इतिहास इससे भी ५९ पीढी पूर्व से चालूं होता है।[2] क्या वह भारत का इतिहास नहीं है ? यहाँ हमें कोई विस्तार करना नहीं है। कृपया पाठक हमारे मंथन ग्रंथमाला का प्रथम भाग और द्वितीय भाग खंड का टिप्पणी विभाग देखे यही हमारी विनय है। हम चन्द्र और सूर्य वंशियों के साथ ही भरत वंशी आर्यों का इतिहास चाहते हैं। भरतों के इतिहास के लिये न्याय की मांग करते हैं। ऋग्वेद के पश्चात् भरत

---

१. देखिये हमारा मंथम प्रथम भाग टिप्पणी विभाग तथा द्वितीय भाग खंड २ का वंशावली पट्ट।

२. स्वतन्त्र भारत में भी कई विद्वानों ने प्राचीन भारत पर लिखा है। १९५६ में प्रकाशित प्राचीन भारत का इतिहास ले० डा० रमाशंकर त्रिपाठी की पुस्तक देखी। सिवा निराशा के कुछ हाथ न आया। इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि प्रस्तुत पुस्तक विदेशी विद्वानों के विचारों की नकल मात्र है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
लुप्त हो गये हैं। बाद का इतिहास चन्द्रवंशी शासित भारत का इतिहास है। वह भरतों का अथवा भारत का इतिहास कैसे हो सकेगा ?

८. मरुस्थल—मरुस्थल से यहाँ हमारा मतलब रेगिस्थान से है। और वह रेगिस्थान यहाँ मर्यादित है सिंधु, सरस्वती आदि राजस्थान वाहिनी प्रवाह तक ही सीमित। सिंधु तट पर हरप्पा, मोहनजोदरो आदि भी प्राचीन सभ्यतायें निकली है। पुराविदों ने उसे हरप्पन सभ्यता अथवा सिंधु सभ्यता के नाम से सम्बोधित किया है। उसीका दूसरा नाम सैंधव सभ्यता है। यह सभ्यता ऋग्वैदिक सभ्यता के पूर्व की तथा अत्यन्त विकसित सभ्यता थी। यह नगर सभ्यता थी। इसकी साक्षी ऋग्वेद स्वयं देता है। क्योंकि इसका विनाश ऋग्वैदिक जनता के द्वारा इन्द्र के हाथों हुआ है।

सरस्वती, सिंधु और उसकी सहायक नदियां हिमालय से निकालती है। यह हिमालय एक दिन टेथिस सागर के उदर से बाहर आया है अतः कुछ रेगिस्थान के चिह्न बना ही गया है। सिंधु का मैदान भारतीय महामरुथल कहलाता है। इस मरुथल ने राजस्थान को व्याप लिया है। सरस्वती यद्यपि हिमालय से निकली हैं, तथापि वह बहती है राजस्थान में ही किन्तु मिलती है सिंधु को। यह नदी और उसकी घाटी अत्यन्त पवित्र मानी जाती है। डॉ० शिकारीपुर कर रंगनाथ राव अपने 'संसार की सबसे पहली लिपि का रहस्य' नामक लेख[1] में लिखते हैं—"सरस्वती घाटी का नाम भद्रम्द्वप (भद्रद्वीप ?) था।" भद्र शब्द आज भी बंगाल में, असम में प्रयुक्त होता है। यह शब्द संस्कारी, सज्जन, आचार में श्रेष्ठ आदि के लिये प्रयोग में लाया जाता है। भद्र का अर्थ आर्य यानी संस्कारी होता है। उस अर्थ में सरस्वती घाटी संस्कारी थी। डा० राव उसी लेख में लिखते हैं—"भद्रम् द्वप भूमि क्षेत्र (राज्य) के शासक की मोहर कालिबंगन (कालीबंगा, राजस्थान) में मिली हैं। उसमें प भद्रम् अंकित है। जिसका अर्थ यह है सर्वाधिक पवित्र, सर्वाधिक मांगलिक रक्षक।"

आज सरस्वती का प्रवाह खंडित हुआ है। उसका जल कभी किसी भूकंप के कारण गंगा में समा गया है। इलाहाबाद में सरस्वती को गुप्त रूप में गंगा और यमुना के संगम स्थल पर मिलाकर इस प्रकार त्रिवेणी संगम का नामकरण कराया गया है।

---

१. कादंबिनी अक्टूबर १९८३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जो ही सरस्वती का सूखा पाट आज भी दर्शनीय है। वर्षा ऋतु में राजस्थान के रेगिस्थान में आज भी उसके दर्शन होते हैं। कालीबंगा में जो उत्खनन हुआ है वह सरस्वती तटपर ही हुआ है। और भी अनेक टीलें वहाँ संशोधन की प्रतिक्षा कर रहे हैं। पुरातत्व विभाग द्वारा इस सभ्यता का काल ई० पू० ३५०० से १५०० तक माना गया है। हमारी राय में इस काल को और भी बहुत पीछे ले जाना होगा। यह सभ्यता ऋग्वेदिक जनता के पूर्व की है। ऋग्वैदिक जनता का भारत आगमन हमारी राय में आज से ७००० से ६५०० वर्ष पूर्व का है। उस अर्थ में सरस्वती, सिंधु अर्थात् मोहनजोदरो, हरप्पा, चह्नुदरो, आदि की सभी सभ्यतायें इसके पूर्व की है।

सरस्वती का सूखा पाट आज भी चूरू जिला, राजस्थान में, चूरु के उत्तर में नोहर भादरा के प्रांगण में दिखाई देता है।[1] वहाँ सौती और करौती नामक दो टीलें हैं, उनपर मिली पोटरी हरप्पा पूर्व की है। तात्पर्य मरुथल की इन सरिताओं के तटों पर भरतों की अर्थात् मूल भारतीय आर्यों की सभ्यताओं का विकास हुआ है। ध्यान रहे—ऋग्वैदिक आर्य[2] इनके बाद के और इनसे भिन्न हैं। यही नहीं, गोदावरी, तापी, नर्मदा आदि के तटों की प्राचीन सभ्यताओं के भी चिह्न मिलें हैं। हमें लगता है गोदावरी के ऊपर का समस्त उत्तरी भारत का भाग सागर के बाहर निकला हुआ है। उसमें सिंध, राजस्थान से लेकर पूर्व दिशातक, कम से कम २२½ अक्षांश का भाग समा जाता है। दक्षिण भारत की धरती उत्तरी भारत से निश्चय ही बहुत ही प्राचीन है।

**९. बीहड़**—ऋषि मुनियों के आश्रम जंगलों में ही रहे हैं। वहों उनकी ज्ञान-साधना हुई है। इसमें दो राय नहीं हो सकती।

**१०. कर्मभूमि**—यह भारत का एक विशेष नाम है। दुनिया के इतिहास में भारत को छोड़कर अन्य सभी भूमियां भोग-भूमि कहलाई हैं। कर्मभूमि कहलाने का भाग्य केवल इसी भूमि को मिला है। यह विचारणीय है।

---

१. नोहर भादरा के उत्तर में सिरसा तथा सूरतगढ़ में सरस्वती का दृश्य स्पष्ट रूप में दिखाई देता है। यह दोनों दृश्य हमने वर्षाऋतु में देखें हैं।

२. ऋग्वैदिक आर्य अर्थात् ऋग्वेदिक जनता का आचरण आर्यों का सा नहीं है। ऋग्वेद कालीन जनता के भारत आगमन पश्चात् जो इतिहास शुरू होता है वह मूल भारतीयों का अर्थात् भरतों का न होकर चन्द्रवंशियों का अधिक प्रमाण में शासक के रूप में दिखाई पड़ता है। साथ ही सूर्यवंशियों का भी निवास और शासन भारत में रहा है लेकिन वह चन्द्रवंशियों जैसा विशाल और व्यापक नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

**११. आद्य धरा**—भारत ही आद्यधरा है यह विदेशी विद्वान भी मुक्त कण्ठ से मान्य कर रहे हैं, अतः विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं है।

**१२. भव्य भूत**—प्राचीन भारत का भूतकाल निश्चय ही भव्य-दिव्य है इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं हैं। भारत के पास इतना विशाल साहित्य है कि उसमें से वह अपने ही नहीं दुनिया के मानव के इतिहास के मूल पृष्ठ खोलकर स्पष्ट कर दिखा सकता है। आवश्यकता है विदेशी विद्वानों के बदले अपना साहित्य स्वयं देखने की। मेक्समूलर ने दिये वेदों के व्याख्यानों पर पूर्ण विश्वास न करके स्वयं हमें वेद को पढ़ने की जरूरत है। विदेशियों द्वारा लिये गये निर्णयों के बदले अब हमें स्वयं निर्णय लेना होगा।

क्या थे हम ? क्या हैं हम ? कल क्या थे, आज क्या है ? यह सब हमें स्वयं आज देखना आवश्यक हो गया है। हमारे पास क्या नहीं है ? लेकिन हमें आज भी वही पुरानी आदत है आज स्वतंत्र हुये हमें तीन दशक बीत गये हैं। पाठशाला में वहीं अंग्रेजों द्वारा रूढ़ किया हुआ इतिहास पढ़ाया जा रहा है। और वही सिद्ध हो रहा है कि हम अनार्यों की संतान हैं। हम में दासों का खून है। हम सदा ही गुलाम रहते आये हैं।

**१३-१४**—संस्कारों की उपासना और उसका मूल्य इसकी कल्पना निश्चय ही भारतीय जनता को ही अधिक थी। उन्हीं संस्कारों के आधार पर भारतीय सभ्यता और संस्कृति की इमारत बनी थी ( है ), जिसे आजतक कोई नहीं गिरा सका। दुनिया के इतिहास में कितनी ही सभ्यतायें जनमी और मुरझा गईं। उनकी मुरझाई हुई निशानियां तक आज दिखाई नहीं देती। वहा भारतीय संस्कृति आज भी जीवित है। भारत का एक लंगोटी पहननेवाला, काला कलूटा, दुबला पतला, हवा में उड जायगा ऐसा हल्का पुल्का आदमी भी दुनिया को हिला सकता है, दुनिया को झुका सकता है, एक धागे में पीरो सकता है, एक झंडे के नीचे लाकर खड़ा कर सकता है। आखीर क्यों ? उत्तर एक ही, यहां के संस्कारों में वह शक्ति आज भी जीवित है। यहां की संस्कृति आज भी पूर्णतया युवा है। आवश्यकता है प्राचीन भारत के गौरवशाली इतिहास के पृष्ठों को उजागर करने की। आवश्यकता हैं स्वयं अपने साहित्य भण्डार का अनुशीलनात्मक अध्ययन करने की। मैं कौन हूँ—यह जानने की, पहचानने की। केवल कहने की नहीं।

**१५. तुमने सब को अपनाया**— ज्ञात इतिहास का प्रथम व्यक्ति हमें स्वायंभुव मनु मिलता है। उसका परिवार तथा तत्कालीन ऋषियों के अतिरिक्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
अन्य किसी का इतिहास हमें नहीं मिलता। इसी स्वायंभुव के बेटों के दो राज्य स्थापित होते हैं। उनमें स्वायंभुव मनु के पश्चात् जंबुद्वीप का राजा प्रियव्रत बना। उसी के वंश का पांचवा वंशधर भरत इस धरती का शासक बना। इस धरती का नामकरण उसी के नाम पर हुआ है। इस स्वायभुव को मनु नाम से संबोधित किया गया है, और समाज रचना मन्वतरों के आधार पर मनु, मनुपुत्र, सप्तर्षि, देवता और इन्द्र इस प्रकार की गई हैं। यह स्वायंभुव मनु सुमेरू का निवासी था। सुमेरू की आज की पहचान पामीर पठार है। समरकंद शब्द आज भी सुमेरू खण्ड की याद दिलाता है। उस अर्थ में प्राप्त इतिहास के मूल में सुमेरू का वंश पाया जाता है। सुमेरू का रक्त पाया जाता है।

डा० राव अपने संसार की सबसे पहली लिपि का रहस्य लेखांक[1] एक में लिखते हैं—"अभीतक संसार में यह विश्वास गहराई से बैठा हुआ था कि वर्णमाला का आविष्कार सेमेटिक जाति के फोनोशियन लोगों ने किया था। कहा यह जाता है कि ग्रीक लोगों ने फोनेसियन वर्णमाला में स्वर जोड़कर उसे परिपूर्ण कर दिया। सिंधु सभ्यता का रहस्य खुलते ही इस भ्रामक सिद्धान्त को सुधारना पड़ेगा। सिंधु घाटी के निर्माता हरप्पन नाम से जाने जाते हैं। हरप्पनोंने[2] ही आरक्षिक चिन्ह से लेकर प्राचीनतम वर्णात्मक लिपि का आविष्कार किया था।"

आप आगे लिखते हैं—सिंधु लिपि न द्रविड[3] है और नहीं सेमेटिक भी[४]। हरप्पा लिपि का संबंध सुमेर लिपि से कदापि नहीं है। प्राचीन आर्य भाषा

---

१. कादंबिनी सितम्बर १९८२

२. लेकिन यह हरप्पन कौन ? यह तो शेष ही रह जाता है। आवश्यकता है पौराणिक साहित्य के सूक्ष्म अध्ययन की। और वंशावली के अनुशीलनात्मक अभ्यास की।

३-४. द्रविड़ द्रविडियन, सुमेर, सुमेरियन, सेमेटिक आदि शब्दों के मूल में यहाँ जाने की आवश्यकता है। यह शब्द प्रयोग करते समय शब्द प्रयोग कर्ता को जान लेना चाहिये कि हम ये शब्द फैशन या रूढ़ी के नाम पर न लें। अब इसका उत्तर मांगनेवाले पैदा हो रहे हैं। वे उत्तर मांगेगे और हमें उत्तर देना होगा। जब तक हम पौराणिक साहित्य के ऐतिहासिक अंश नहीं पहचान सकते तब तक विदेशियों के उधार दिये हुये माल का कोई मूल्य नहीं होगा। हम अधिकाधिक उलझते ही जायेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अर्थात ऋग्वैदिक[1] भाषा से हरप्पा लिपि की शब्दावली, उसके अर्थ तथा व्युत्पत्ति की तुलना के आधार पर उसका प्राचीन आर्य भाषा[2] से अर्थात ऋग्वैदिक भाषा से घनिष्ट संबंध ज्ञात होता है।

आगे इसका प्रमाण देते हुये आप कहते हैं—जैसे आ, ए, ह, स सहायक, संप्रदानक तथा उत्पत्ति मूलक दशा का संकेत देते हैं और इनका अभिव्यक्त इस प्रकार है—"बक से बका, बकै, बकः। कभी कभी ह के स्थान पर स का प्रयोग किया गया है। यह अंतसर्ग वैदिक[3] तथा ईरान की प्राचीन भाषा 'अवस्ता' के अनुकूल है। सिंधु की मोहरों में 'बक' एक साधारण आदमी का नाम है। और रक्षक के लिये भी बक शब्द का प्रयोग किया गया है।' बक दाल्भ्य' नामक एक ऋषिका उल्लेख ऋग्वेद में है। सिंधु भाषा विभक्ति प्रधान है। और इस कारण से सुमेर भाषा की तरह अभिश्लेषी है"।

हमने श्री राव के उद्धरण केवल 'सेमेटिक और सुमेर' इन दो शब्दों के लिये दिये हैं। राव का विषय लिपि–शोध' का है। हमारा अभी इस विषय

---

१-२. श्री राव ने प्राचीन आर्य भाषा को ऋग्वैदिक भाषा कहा है। उस भाषा से हरप्पा लिपि की शब्दावली, अर्थ और व्युत्पत्ति की तुलना की है। लेकिन वह ऋग्वैदिक भाषा किन लोगों की, उस भाषा के बोलनेवाले कौन इसका उत्तर वे नहीं दे सके। हरप्पा का उत्खनन या सभ्यता का आधार समस्त भारत वर्ष की सभ्यता और संस्कृति पर कैसे लादा जा सकता है। हरप्पा का अर्थ भारत वर्ष नहीं है। दक्षिण भारत की धरती सबसे प्राचीन है। हिमालय जब टेथिस सागर में था तब भी वह धरती बाहर थी। वहां करोड़ों वर्षों के अवशेष प्राप्त हो सकते हैं। आवश्यकता है इस दिशा में कार्यक्रम बनाने की।

३. वैदिक तथा "ईरानी" यह शब्द–प्रयोग विचार माँगता है। मूल में वैदिक लोग यानी ऋग्वेद में दिखाई देनेवाली जनता ईरानी ही है। वह एलाम से आ रही है। भारत में आनेवाला प्रथम व्यक्ति दिवोदास एलाम से ही आया है। यही समझना आवश्यक है। और एलाम ही आज का ईरान है। वैदिक शब्द का भी स्पष्टिकरण आवश्यक है। यहाँ वैदिक शब्द ऋग्वैदिक है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से कोई सम्बन्ध नहीं है। श्री राव का अंतिम विधान "कि, सिंधु भाषा विभक्ति प्रधान है और इस कारण सुमेर भाषा की अभिश्लेषी है।" यह बताता है कि सिंधु ( हरप्पन ) भाषा में सुमेर भाषा की निकटता आप ने महसूस की।

श्री राव ने लिपि रहस्य पर अपने विचार प्रकट करके मानो इतिहास संशोधकों के लिये अनेक स्थान पर कुछ कहने के लिये कल्पनायें भी दी, और वे कल्पनायें बहुश्रुत विद्वान के लिये प्रकाश का द्वार खोलनेवाली है। बशर्तें कि पश्चिमी विद्वानों को अपयश न देकर भी हम अपने विचार शुद्ध ऐतिहासिक ढंग से पाठकों एवं प्राचीन इतिहास के संशोधकों के सम्मुख रखकर उनकों भी विचार करने पर बाध्य कर सकते हैं। श्री राव हरप्पन लोगों का ऋग्वेद से घनिष्ठ सम्बन्ध बताते हैं[२] और ऋग्वेद के लोगों को आर्य बताते हैं। लेकिन वह आर्य कौन ? उनका नाम, वंश, गोत्र क्या ? यह नहीं बता सके। दूसरी बात हरप्पन कौन, यह भी आप बता नहीं सके। लेकिन ऋग्वेद के आर्य और हरप्पन दोनों भिन्न भिन्न है यह तो उनके कहने के अनुसार सिद्ध ही होता है। एक बात और आप कहते हैं "सुमेर देश के बट्टे तथा दीवार सजावट के लिये पाये गये शंकुफल के आधार पर हरप्पन को लिंग[3] उपासक कहना सरासर गलत है।" यह लेखक का एक विधान बहुत ही अच्छा लगा है। इस पर आगे कुछ कहा जायेगा।

---

१. भाषा, रंग खोपड़ी आदि को लेकर आर्यों की खोज अभीतक कोई रंग नहीं ला सकी। उसी प्रकार लिपि भी सफल नहीं हो सकी। आर्य शब्द संस्कार वाचक होने से संस्कारी लोगों की कोई एक भाषा लिपि अवश्य होनी चाहिये।

२. कादंविनी १९८२ अक्टुबर पृ० ४५।

३. श्री राव का यह विचार प्रशंसनीय है। लेकिन उस पर प्रकाश पड़ना आवश्यक है। क्या हरप्पन लोग लिंग पूजक थे ? लिंग का अर्थ क्या होता है ? यह सब देखना और सयुक्तिक उत्तर देना आवश्यक है। ऋग्वैदिक जनता ने दास, दस्यु आदि को लिंग पूजक बताया है। लेकिन दास और दस्यु दोनों शब्द जाति वाचक न होकर गाली वाचक है। ऋग्वेदिक जनता के जिनके साथ युद्ध हुये उनके लिये उनका यह शब्द प्रयोग संबोधन रूप में हुआ है। उन्हें ऋग्वैदिक जनता ने शिश्न पूजक कहा है। तो क्या यह सम्बन्ध हरप्पन लोगों से हम जोड़ें ? जोड भी सकते है क्यों कि वह शिव पूजा से संबंध रखते हैं। फ़िर भी हरप्पन लोग कौन ! यह प्रश्न शेष रह ही जाता है। ध्यान रहे ऋग्वेद के दास और दस्यु दैत्य और दानव है। देखिये मंथन प्रथम और द्वितीय भाग।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हम संक्षेप में अब यही बताना चाहते हैं कि हरप्पा, मोहनजोदरो जैसी और भी जितनी सभ्यतायें प्रकाश में आई हैं वह मूल भरतों की है, सुमेरियनों की है। यहां सुमेरियन शब्द पढ़कर चौंक जाने की बात नहीं है। प्राचीन इतिहास लिखना है तो यह कहना ही होगा। स्वायंभुव मनु सुमेरियन है। भरत उसके पांचवे पीढ़ी का वंशधर है। अतः हम यदि भरत को सुमेरियन न भी कहें तो सुमेरियन रक्त का तो कह ही सकते हैं। हमें यों भी स्वायंभुव के पूर्व का कोई इतिहास मिलता नहीं। स्वायंभुव के दो पुत्रों में भारतीय और ईरानी दोनों शाखायें साथ साथ चली है।[1] अतः दुनिया की मूल सभ्यताओं में सुमेरियन ही है यह कहना आवश्यक हो जाता है। उत्खनन में प्राप्त वस्तुओं में विदेशीय तत्व हो सकते हैं आ सकते है। वह विचारणीय है।

ध्यान रहे ऋग्वेद का वर्णन स्वायंभुव से ६३ पीढ़ी पश्चात् का है। भारत स्वायंभुव से ५वी पीढ़ी में होने वाले भरत का प्रदेश है। उस भरत की ३१ पीढ़ियाँ राज सिंहासन पर मिलती हैं। इसके बाद दक्ष तक १७ पीढ़ियाँ अज्ञात हैं। और जब भारत में दिवोदास प्रवेश करता है तो दिवोदास १५।१६वीं पीढ़ी का व्यक्ति[2] है। मतलब १७ + १५ = ३२ + ३१ = ६३। इस प्रकार स्वायंभुव से लेकर ६३ पीढ़ी तक ऋग्वैदिक जनता का भारत के ऐतिहासिक जीवन से कोई संबंध नहीं दिखाई देता। यहां हम यह भी कहना चाहते है कि ऋग्वेद में वर्णित जनता भारतीय नहीं है। अतः अब इतिहास के विद्वान उनको मूल भारतीय मानने का कष्ट न करें। और केवल आर्य शब्द प्रयोग करके व्यर्थ का कुछ लिखने का भी प्रयत्न न करे।

कहने का तात्पर्य, भारत के प्राप्त इतिहास का प्रथम राजा भरत सुमेरियन रक्त का है। उसने भारत को सभ्यता दी, संस्कृति दी। विद्या दी, विद्वान दिये। ऋग्वेद का प्रथम ऋषि कहलाने का भाग्य भी भरत के वंशधर परमेष्ठि को ही मिलता है। परमेष्ठि भरत के ९ वीं पीढ़ी का व्यक्ति है। मतलब ६३ − ९ = ५४ पीढ़ियों में अवश्य ही और भी विद्वान मिलने चाहिए वह शोध आवश्यक है। अवश्य ही और भी वैदिक ऋषि भरतों में मिलेंगे। मिलने चाहिए। हम वैसा प्रयत्न करेंगे और मिलते हैं तो अवश्य पाठकों के सम्मुख रखेंगे।

मतलब हम जिस संस्कृति के गुण गाते हैं, जिनकी भारतीय सभ्यता और संस्कृति है वह इन भरतों की है। यही प्राप्त इतिहास के प्रथम आर्य हैं,

---

१. देखिये मंथन भाग २ खण्ड २ वंशावली परिशिष्ट।

२. देखिये मंथन भाग २ खण्ड २ वंशावली परिशिष्ट।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
भारतीय आर्य हैं। चन्द्र और सूर्य वंशी आर्य तो बहुत बाद के हैं और भारत में आये हैं। समा गये हैं, आज उन्हें हम अलग नहीं कर सकते।

इस पावन धरती ने भरतों को अपनाया। भरतों ने इस धरती को अपनी माना। यश और कीर्ति संपादन की। उसका नाम सर्वत्र प्रकाशित किया। इसके बहुत समय बाद[१] अर्थात् दक्ष (४८) से लगभग ४।५ पीढ़ी बाद यानी वंशावली के आधार पर ५२/५३वीं पीढ़ी में देवासुर संग्राम से तंग आकर शंबरादि दानव तथा दैत्य बसने की दृष्टि से भारत आये। इन्हीं के समकालीन कहो या बाद में बलि अपना साम्राज्य बढ़ाता हुआ भारत के पश्चिम किनारे पर भरूच में आया। दैत्य और दानवों के साथ नाग भी आये। लेकिन इनमें कोई भारतीय प्रजा से टकराया या भारतीय प्रजा के इनके साथ कोई युद्ध हुए, कोई अराजकता का वातावरण पैदा हुआ ऐसा नहीं दिखाई देता। इस धरती ने इन सबको अपनाया। इन सबके लिए आंचल फैलाया।

इसके बाद आता है दिवोदास सर्व प्रथम। सीमापर शंबर उसे आगे जाने से रोकता है। फलतः कटुता का वातावरण बन जाता है। बहुत समय पश्चात् दिवोदास की विजय होती है। उसी के समकालीन और भी चन्द्रवंशी प्रजा भारत में आती है, भारतीयों पर विजय भी प्राप्त करती है तथा एक दिन शासक भी बन जाती है, और यहीं से भारत की मूल सभ्यता और संस्कृति का ह्रास होना आरम्भ हो जाता है। क्यों कि आने वाले लोगों की संस्कृति भारत के लिए अनुकूल नहीं थी।[२] अतः ऋग्वैदिक आर्यों के पूर्व यहाँ अनार्य सभ्यता थी यह कहना अनुचित है। इसके लिए कोई ऐतिहासिक आधार नहीं हैं। इन अटकलों से अब दूर रहना चाहिये। मूल में अपना साहित्य पढ़ने से यह आदत छूट जायेगी। भ्रम का वातावरण नष्ट हो जायेगा, ऐसा हमारा विश्वास है।

१६-१७. दुख के साथ कहना पड़ता है कि दैत्य, दानवों, नागों तथा सूर्यवंशी प्रजा के समान चन्द्रवंशियों ने यहाँ की संस्कृति नहीं अपनाई। यहाँ के आचार-विचार नहीं अपनाये। भारत का इतिहास बदल दिया। भारतीय संस्कृति का मूलाधार नैतिकता है। उसमें कर्म की प्रधानता है।

१८. ऐल—इला के नाम पर पुरुरवा ऐल कहलाया। पुरुरवा के पश्चात् चंद्र वंश का एक संबोधन ऐल मिलता है। वैसे यह वंश मूल में आत्रेय है।[3]

---

१. देखिये मंथन भाग २ खण्ड २ वंशावली परिशिष्ट।

२. देखिए मंथन प्रथम और दूसरा भाग दूसरा खण्ड।

३. देखिये मंथन प्रथम भाग।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१९. सुरधाम—भरतों के देश में सर्व प्रथम दिवोदास आया। सीमापर उसे शंबर दानव[1] ने रोका। दोनों का युद्ध लगातार चालीस वर्ष तक चला। अन्त में दिवोदास ने अपने मूल भूमि से[2] देवताओं के राजा देवेन्द्र को मदद के लिए बुलाया। उसने आकर शंबर की हत्या की। इन्द्र के साथ सेना थी और दिवोदास को भारत प्रवेश चाहिए था। अतः इन्द्र यहीं पर रुक गया। इन्द्र का यहाँ पर रुकना मानो उसके साथ देव सेना और अप्सराओं भी रुके। इन्द्र को इस प्रदेश का आकर्षण हुआ। इस प्रकार देव जाति तथा उनकी संस्कृति का भारत में प्रवेश हुआ। देव संस्कृति निकृष्ट थी। इन्हीं देवताओं का इसके पूर्व का नाम सुर था। सुर के पूर्व का आदित्य था। यह सब मनुष्य जाति के थे। यह कश्यप प्रजापति और अदिति की संतान हैं। यों तो इनके तैंतीस समूह यानी गण हैं, लेकिन उनमें आदित्यों की संस्कृति निकृष्ट ही रही है।

यह देवताओं की निंदा नहीं है। देव नामधारी मनुष्य जाति के इतिहास के पृष्ठ बोलते हैं।[3] इन देवताओं से चन्द्रवंशियों की पुरानी घनिष्टता है। वह चन्द्रवंश के मूल पुरुष चंद्रात्रेय से मिलती है। चन्द्रात्रेय ने बृहस्पति की पत्नी तारा का अपहरण किया था। फलतः बुध का जन्म हुआ। बुध का बेटा पुरुरवा विलासी निकला। आगे ययाति भी विलासी निकला। इस प्रकार चन्द्रवंशी विलासी होने से और भारत में देवों के साथ रहने से पुरानी आदतें बनी रहीं। फलतः नारी का मूल्य घट गया। सतान संस्कारों से वंचित रही। वर्ण संकर की बाढ आई। यह सब हुआ देवों के कारण। चन्द्रवशियों के कारण ही देव जाति के चरण इस धरती पर आये इसकी साक्षी ऋग्वेद देता है।[4]

२०-२१. दिवोदास—दिवोदास के विषय में हम मंथम प्रथम भाग तथा द्वितीय भाग के द्वितीय खण्ड में बहुत कुछ कह गये हैं, यहाँ पर भी कुछ कहने

---

१. आज तक सभी शंबर के लिए असुर लगाकर उसे शंबरासुर कहते हैं। लेकिन शंबर दानव है। वैसे असुर शब्द तो श्रेष्टता वाचक है। उस दृष्टि से देवताओं तथा चन्द्रवंशियों से दैत्य और दानवों की संस्कृति ऊँची थी। लेकिन असुर शब्द की ऋग्वेद में एक मर्यादा है और वहां वह श्रेष्ठतावाचक है। असुर शब्द पौराणिकों द्वारा सरेआम दुष्टता वाचक अर्थ में प्रयोग में लाया गया है। यह भूल है।

२. चन्द्रवंश और देव जाति दोनों पड़ोसी हैं।

३. देखिये पं० सातवलेकर की महाभारत की समालोचना।

४. देखिये मंथन प्रथन भाग तथा मंथन भाग २ खंड २

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जा रहे हैं। यह दिवोदास चन्द्रवंशी आयु के पुत्र क्षत्रवृद्ध का वंशधर ( १५।१६वी पीढी ) है। सर्व प्रथम यही भारत में आया है। ऋग्वेद में वर्णित दिवोदास और शंब्रर का युद्ध इसी दिवोदास के साथ हुआ है।[1] ऋग्वेद में दिवोदास और शंबर तथा 'दाशराज्ञ' युद्ध के नाम से दो महायुद्धों का वर्णन आता हैं। यह दोनों युद्ध ऐतिहासिक दृष्टि से अति महत्व के हैं। इनका ऐतिहासिक दृष्टि से सूक्ष्म रूप से चिंतनात्मक अध्ययन आवश्यक हो जाता है।

हमें प्राचीन भारत का इतिहास उचित रूप में समझने के लिये सर्व प्रथम समस्त पौराणिक ग्रंथों का सूक्ष्म अध्ययन करना चाहिये। उसके पश्चात् ऋग्वेद के अनेक भाष्य तथा उन भाष्यों पर और अन्य विद्वानों द्वारा लिखे गये लेख आदि का चिंतनात्मक अध्ययन करना चाहिये। चंद्र और सूर्यवंशी आर्यो का इतिहास तो सातवें मन्वतर से आरम्भ होता है, हमें इसके पूर्व के छः मन्वतरों का भी इतिहास चाहिये। पौराणिक साहित्य में अनेक प्रजापति मिलते हैं। उनमें सातवें मन्वहार में कश्यप और अत्रि इन दो प्रजापतियों के परिवार विस्तृत प्रमाण में मिलते हैं। दोनों एक दूसरे के पडोसी हैं और कश्यप सागर प्रांत तथा वर्तमान ईरान, इराक का प्रदेश इनके परिवार की क्रीडा स्थली रहा है। सातवें मन्वतर में अत्रि की संतान का नामकरण चन्द्र-वंश और उसके पश्चात् चंद्र के पौत्र पुरुरवा के काल में ऐल वंश में बदल जाता है।

चन्द्र और सूर्य वंश दोनों साथ-साथ चलते हैं। सूर्य वंश कश्यप और अदिति की संतान आदित्यों में से निकला है।, एक आदित्य का माम विवस्वान था। उसकी जो शाखा चली वह सूर्यवंशी आर्यों की शाखा कहलाई। कश्यप प्रजापति की तेरह पत्नियां थीं उनमें दिति सब में ज्येष्ठ थी। सभी सहोदरा बहनें थीं और दक्ष प्रजापति की कन्यायें थीं। उनमें दिति, अदिति, दनु, कद्रु और विनता की संतान ऐतिहासिक दृष्टि से रंग मंचपर आई। दिति और दनु की संतान तथा अदिति की संतानों में कभी मेल नहीं हुआ। उधर कद्रु और विनता की संतानों में आपस में कटुता बनी रही। लेकिन जो महा कटुता का दृश्य अदिति, दिति और दनुकी संतानों द्वारा खड़ा किया गया उसकी तुलना में कद्रु[2] और विनता

---

१. दिवोदास अनेक मिलते हैं। हम इसके लिये एक स्वतंत्र लेख ही लिखने का सोच रहे हैं।

२. कद्रुकी संतान नाग नाम से पहचानी गई और विनताकी गरुड नाम से। इनमें नाग पशु नहीं और गरुड भी पक्षी नहीं बल्कि सभी मनुष्य जाति की सन्तान हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
की संतानों का दृश्य नहीं दिखाई देता। अदिति के बेटे अपनी माता के नाम पर आदित्य, दिति के दैत्य और दनु के दानव कहलाये। पुराणों में वर्णित देवासुर[1] संग्राम इन्हीं भाइयों में हुये हैं। इन युद्धों से तंग आकर कश्यप की अन्य संतानें आदित्यों को छोड़कर अन्य स्थान पर बसने की खोज में निकल पड़ी। दैत्य दानव, नाग, सभी ने स्थानांतर किया। जब दैत्य वंश की ५वीं और चन्द्रवंश की ७वीं पीढ़ी चल रही थी तब भारतवर्ष में बलि ने पदार्पण किया। बलि[2] के साथ ही प्रायः बहुत सी दैत्य और दानव प्रजा भी भारत में आई। और पश्चिम तथा पश्चिमोत्तर दिशा में अपनी वसाहतें बनाकर सुख से रहने लगी। बलि से लगभग ८।९ पीढ़ी पश्चात् दिवोदास भारत में आता है। इसके आने के पूर्व दैत्य और दानवों की संस्कृति विकसित हो चुकी थी। शंबर १०० नगरों का ( किलेबंद ) स्वामी था। शरद की सात पुरियां थी। भेद का भी वैभव कम नहीं था। यह सभी वसाहतें सिंधु, सतलज, परुष्णी, झेलम, सरस्वती आदि के तटों पर थी। इन्द्र द्वारा शरद की जिन सात पुरियों का विध्वंस किया गया वें सरस्वती के प्रदेश में थी। शंबर के सौ किलेबंद नगरों का जो नाश इन्द्र द्वारा किया गया वे सभी नगर वायव्य सरहद प्रांत में थे। और भी अनेक नगरों का नाश इन्द्र तथा चंद्रवन्शी राजाओं और उनके पुरोहितों द्वारा किया गया। ऋग्वेद इसकी साक्षी देता है।

और इसके पश्चात एक विशेष ऐतिहासिक घटना यह होती है कि किसी अन्य की भूमि में आकर दोनों चन्द्रवंशी दाशराज्ञ युद्ध में लड़ते हैं। सुदास के विरोध में ययाति के वंशधर युद्ध करते हैं। जब कि दोनों भारत के लिये आगंतुक हैं, विदेशी है। यह धरती उनकी नहीं है। इन दोनों युद्धों के समकालीन गाधि पुत्र विश्वामित्र और मैत्रावरुणि वशिष्ठ का पुरोहितों के रूप में उल्लेख मिलता है। यह भी ज्ञात होता है कि इसी समय में इन दोनों में कट्टर शत्रुता आई है। जिसकी परंपरा आगे पुराणों ने दीर्घकाल पर्यन्त चलाई है।

इसी समय यह भी ज्ञात होता है कि सुदास तृत्सु नामक प्रजाका राजा है जब कि तृत्सु नामकी कोई प्रजा शायद ही प्राचीन भारत के इतिहास को वंशावली में मिल सकेगी। लगता है यह प्रजा भी अभारतीय ही है। क्योंकि सुदास और दिवोदास दोनों अभारतीय है।

---

१. देखिये मंथन भाग प्रथम।

२. बलि को भारत में आकर देवों ने कपट से वश किया और उसका राज्य छीन लिया। इसके लिये देखिये 'बलि भूमिदान' प्रसंग की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि। मंथन भाग २ खंड २.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तात्पर्य दाशराज्ञ युद्ध के पश्चात् चंद्रवंशियों का भारत प्रवेश हुआ है। आगे चलकर पुरुवंश की शाखा भारत की शासक बनी। ययाति के पांचों बेटों के वंशधर भारत में आये हैं, जिन्हें 'पंचजन' नाम से संबोधा गया है। इसी के पश्चात् भरतों का ( भारत का ) इतिहास विकृत हो गया है। भरतों को दबाया गया है। भुलाया गया है। संभव है आंगंतुक या ऋग्वेद के ऋषि भरतों को पहचानते न हो अतः वे सब को दास और दस्यु ही कहते चले गये। क्यों कि आज उनकी मनः स्थितियां अच्छी नहीं थीं। आरम्भ में उनके युद्ध दैत्य और दानवों से हुये हैं। लेकिन भारतीय इतिहासकारों को तो उनका स्मरण रखना चाहिये था। करना चाहिये था। काश हमारा अपना स्वतंत्र अध्ययन होता।

इस दिवोदास का एक नाम पिजवन और दूसरा अतिथिग्व मिलता है। दिवोदास अनेक हो गये हैं इसका उल्लेख हम पीछे कर आये हैं। हम दिवोदास पर स्वतंत्र रूप से लिखनेवाले भी है लेकिन वस्तुस्थिति का निखार हमारे 'दाशराज्ञ' वाले प्रयास में ही आयेगा। हम चाहते हैं हमारे प्राचीन इतिहास के विकृत और धूमिल पृष्ठ हम उचित रूप में पाठकों के सम्मुख रखें। दिवोदास के पश्चात् ही भारत का इतिहास विकृत हो गया हैं। अंग्रेजों द्वारा प्रस्तुत किये गये इतिहास ने तो और ही उसे उलझा दिया है। उसे सुलझाना अब आवश्यक हो जाता है।

**२२. नैतिकता का अभाव**—चंद्रवंशियों में चंद्र के समय से ही नैतिकता में कमी आ गई थी।[1] चंद्र ने विवेक छोड़कर वृद्ध बृहस्पति की युवा[2] पत्नी का अपहरण किया था। फलतः जो गर्भ रह गया उससे बुध नाम के पुत्र का जन्म हुआ। चंद्रवंशियों का निवास देवों के पडोस में ही था। दोनों के संबंध निकट के थे। यहां यह भी ध्यान में लेना आवश्यक है कि जहां आदित्यों की संस्कृति पनप रही थी वहीं उसी के समकालीन सूर्यवंशी प्रजा के परिवार भी निवास करते थे। क्यों कि दोनों एक ही परिवार के थे। सूर्यवंशी विवस्वान की संतान थे और शेष आदित्य अपनी भिन्न संस्कृति को लेकर जीवन व्यतीत कर रहे थे। आदित्य अब देव संबोधन पाने लगे थे। बुद्धिमान थे। अप्सराओं के लालच में चंद्रवंशियों को वश किये हुये थे। यह क्रम बुध पुत्र पुरुरवा से शुरुं हो गया था।

---

१. इसके पूर्व इसी वंश में अर्थात् तब चंद्रवंश नहीं बल्कि इस वंश का आत्रेय नाम करण था, वेन राजा भी विलासी था।

२. इसका नाम तारा। तारा के साथ अनेक देवताओं की स्त्रियों का चंद्र ने उपभोग किया था। अंत में उसने तारा का अपहरण किया। विस्तृत जानकारी के लिये देखिये-मन्थन, प्रथम भाग-कर्ण कृष्ण।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
चंद्रवंशी शूरवीरता के बावजूद पक्के विलासी थे और यही कारण था कि देवों से उनकी घनिष्टता बनी रही।

चन्द्रवंश के मूल पुरुष अत्रि (आत्रेय तृ० पु०) और देवताओं (आदित्यों) के पिता कश्यप दोनों पड़ोसी थे इसका उल्लेख इसके पूर्व हो चुका है। कश्यप की दिति और दनु नाम की पत्नी से उत्पन्न दैत्य और दानव प्रबल पुरुषार्थी थे। पुरुषार्थी होने के अतिरिक्त पराक्रमी, परिश्रमी, उदार और नीतिमान भी थे। उन्होंने अपने बलपर अपने राज्य स्थापन कर लिये थे। अदिति के बेटें केवल बुद्धिमान थे। दोनों में हमेशा से अनबन चली आ रही थीं। आगे चलकर उसका रूप युद्ध ने ले लिया। पौराणिक साहित्य में इन युद्धों को देवासुर संग्राम के नाम से पहचाना (संबोधा) गया है।

इन युद्धों में देवों ने चन्द्रवशियों से भी कभी-कभी मदद ली है। चन्द्र-वंशियों का देवों को सदा से सहकार मिलता आ रहा था। और उसे बनाये रखने में देव सदा सतर्क रहे। बल्कि बुध के पुत्र तेजस्वी वीर पुरुरवा की सेवा में उर्वशी को सौंप दिया। उसकी रक्षा में हमेशा से हर प्रकार से तैयार रहे। इसकी साक्षी संस्मरण रूप में उर्वशी ऋग्वेद में देती है।[1]

देवराष्ट्र पर चन्द्रवशियों का भी कुछ समय के लिये शासन रहा है। चन्द्र-वंशी नहुष, रजि इन्द्र पद प्राप्त करते हैं।[2] रजि के समय में तो देवता देवलोक छोड़कर भाग गये थे। इन्द्र भूख के मारे छटपटा रहा था। बेर जितना भी अन्न मिल जाय तो अच्छा हो ऐसा एक समय उसने बृहस्पति से कहा था। देवों के राज्य की इस प्रकार हीन दीन स्थिति देखकर बृहस्पति ने अभिसार[3]

१. देखिये ऋग्वेद १०-९५-७।

२. देवलोक पर दैत्यों का भी शासन रहा है। बलि और बल दोनों को इन्द्र पद की प्राप्ति हुई थी। बलि के समय प्रह्लाद जीवित था।

३. मंत्र तंत्र की विद्या श्यात् अभारतीय है। पहले पहले यह अभिसार शब्द वृहस्पति के लिये आया है। अथर्व वेद में जो मंत्रतंत्र दिखाई देते हैं वह भी इरानी करण ही लगता है। अथर्व वेद उच्च कोटि का वेद है। सुसभ्य और सुसंकृत समाज का दर्शन हमें उसोमें होता है। अथर्ववेद ऋग्वेद से प्राचीन है। पूर्व का है यह विश्वास होने लगता है। वेदत्रयी में अथर्व वेद का प्रथम स्थान होना चाहिये। लेकिन चन्द्रवंशी शासन की प्रमुखता के कारण ऋग्वेद ही को प्रथम स्थान दिया गया। ऋग्वेद चन्द्रवंशियों का ही वेद है। उसमें चंद्रवंशियों की गतिविधियाँ आई हैं। यह विचार हम इतिहास के संशोधक एवं विवेकी विद्वानों के लिये दे रहे हैं। इसपर चिंतन हो, यही विनय।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

द्वारा रजि का पतन कराया । और इन्द्र को पुनः [illegible] स्थापित किया । इसो रजि के समय अन्तिम देवासुर संग्राम हुआ था । इसके बाद सर्वत्र शान्ति छा गई थी ।

जव देवासुर संग्राम चालू थे, उनसे तंग आकर अनेक लोगों ने अर्थात, कश्यप प्रांत निवासी प्रजाओं ने जैसे दैत्य, नाग, दानव आदि ने स्थानांतर किया । उनमें वरुण और मित्र जैसे आदित्यों ने भी स्थानांतर किया । विवस्वान का तो नाम ही देवासुर संग्राम में नहीं आता । यह संग्राम भयानक रूप में हुये । रक्त की नदियां बह निकली थीं । इनकी संख्या बारह बताई जाती है ।[1] अंतिम देवासुर संग्राम के समय चन्द्रवंश की सातवी पीढ़ी चल रही थी और उसके समकालीन देवासुर संग्राम से संबंधित नेतृत्व करने वाला व्यक्ति रजि था जो नहुष का छोटा भाई था । इपके पश्चात् सर्वत्र शांति दिखाई देने लगी । लेकिन प्रजा स्थानांतर करती रही । जिसे जहाँ स्थान मिला वहाँ जाकर निवास करती रही । इसका उल्लेख हम पीछे कर चुके हैं । बारबार पुनरावृत्ति हो रही है । इसका मुझे घ्यान है लेकिन आवश्यक है इसलिये हो रही है ।

जब दिवोदास ने[2] स्थानांतर किया तब चन्द्रवंश की १५।१६ वीं पीढ़ी चल रही थी । और देवासुर संग्राम की समाप्ति हुये ८।९ पीढियां बीत चुकी थीं । अर्थात् यह काल लगभग २००।२५० वर्ष का मानना चाहिये । यों चंद्रवशियों में स्थानांतर करने वाला और भारत की दिशा में आने वाला दिवोदास प्रथम व्यक्ति है । सीमापर इसका अवरोघ शंबर दानव ने किया । लगभग ४० वर्ष तक उसे रोके रखा । भारत प्रबेश नहीं करने दिया फलतः दिवोदास ने देवराज से सहायता मांगी । देवराज स्वयं आये और उनके द्वारा शंबर की हत्या हुयी ।

इसका अर्थ यह हुआ कि तब देवराष्ट्र चंद्रवंश के अधीन था । क्योंकि देवराज स्वयं चंद्रवंशी कुशिक गोत्री गाधि था । जब देवलोक का शासक गाधि चन्द्रवंशी है तो दिवोदास के लिये वह सहायक सिद्ध होता है तो आश्चर्य की कोई बात नहीं । अब तो गाधि को भी भारत का आकर्षण हुआ । उसका बेटा विश्वामित्र भी इसके पश्चात् भारत आया । यों धीरे धीरे देवराष्ट्र की प्रजा भी भारत की ओर आकृष्ट हुयी, यहाँ आने लगी । निवास करने लगी । उनमें अप्सरायें भी थी । चंद्रवंश विलासी था ही । यह गुण उन्हें विरासत में

---

१. देखिये मंथन भाग १ कर्ण कृष्ण टिप्पणी विभाग पृ० ।
२. मैंने दिवोदास का यह स्थानांतर माना है । देखिये मंथन भाग २ खण्ड २ कर्ण कुंती मिलन । टिप्पणी विभाग ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
में मिला था। अपने पूर्वज चद्रात्रेय का यह गुण उनमें कायम था। इसलिये भी भारत के शासक बनने के पश्चात् उनके अप्सराओं से घनिष्ट सम्बन्ध बने रहे। देव प्रजा भी धीरे धीरे भारत निवास करने लगी। त्रिविष्टप में उन्होंने अपनी वसाहत कायम की। त्रिविष्टप देवराष्ट्र बन गया। स्वर्ग[1] कहलाया।

भारत के शासक बनने के पश्चात् चन्द्रवंश के कारण भारतीय धरती पर चन्द्रवंश ने वर्ण संकरों की बाढ लाई! नारी का मूल्य घट गया। वह केवल भोग्या कहलाई! भोग्या बनकर रह गई। चार वर्ण की मर्यादा टूट गई। यों तो ऋग्वेद में[2] चातुवर्ण टूटने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। नारी के साथ स्वच्छंद वर्तन केवल चंद्रवशी शासकों तक ही सीमित नहीं रह गया। चंद्रवशी शासन के कर्मचारी या श्रेष्ठीजन किसी पर कोई बंधन नहीं था। पराशर सत्यवतो के समान ज्ञात नहीं कितनी ही घटनायें घटी होंगी।

अप्सराओं के कारण चन्द्रवंश में नैतिकता का अभाव रहा। यहाँ हमारे टिप्पणी का आशय पूर्ण हो जाता है। इस विषय को हम बढ़ाना नहीं चाहते। मंथन के इसके पूर्व के भागों में हम इस विषय को लेकर बहुत कुछ कह गये हैं। लेकिन भारत के प्राचीन इतिहास के लिये जो अन्याय हुआ है, वह जो विकृत हुआ है, उसके अनेक पृष्ट धूमिल हो गये हैं उसकी ओर मैं विद्वान पाठकों का ध्यान खींचना चाहता हूँ।

अंग्रेजों ने भारत पर आर्यों का आक्रमण दिखाकर प्राचीन भारत के इतिहास को ऐसा मोड़ दिया है कि उस उलझन को अभीतक कोई सुलझा ही नहीं पाया है, अपितु अधिकाधिक नई उलझनें पैदा होती चली गईं, सारे के सारे उलझ गये हैं एक ही बात पर कि "आर्यों का मूल निवास कौन सा?" इस प्रश्न का हल अभीतक नहीं आ सका। और वह तबतक नहीं आयेगा, जबतक आर्य शब्द जातिवाचक न होकर संस्कार वाचक है यह मान्य न किया जाय। मेरी समझ में नहीं आता "आर्य नाम की जाति" यह शब्द इन्हें कहाँ मिला? किस ग्रंथ में है? कहाँ से लिया गया?

हम इस प्रश्न का उत्तर मंथन में दे चुके हैं। स्पष्ट कह गये हैं कि भारत में अनेक प्रजायें आती गईं। यहां की होकर रह गईं। इस सभ्यता और संस्कृति में अपने को विलीन कर गई। उसी प्रकार चंद्र और सूर्यवंशी यह दो समूह भी

---

१. देव भूमि के लिए देखिये मंथन भाग २ खण्ड २

२. देखिये मंथन भाग २ खण्ड २।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आये हैं, उनमें प्रथम चन्द्रवंश आया है। और वह देवासुर संग्राम समाप्ति पश्चात् बहुत बाद आया है। वही इन इतिहासकारों के आर्य हैं। वहाँ हमने स्पष्ट कह दिया है कि भारत में आये नहीं अपितु ऐल आर्य हैं। हमारे इस विधान पर विद्वान विचार करें।

तात्पर्य भारत में सर्वप्रथम चन्द्रवंश का दिवोदास नामक व्यक्ति आया। उसने इन्द्र को आमंत्रित किया। इन्द्र भी चन्द्रवंशी है। विश्वामित्र का पिता गाधि है। इसी समय ययाति के पाँचो पुत्रों के परिवार भी भारत में प्रवेश करते हैं। यह दिवोदास के विरोधी जान पड़ते हैं।[1] विश्वामित्र का भारत आगमन शंबर हत्या के पश्चात् जान पड़ता है। उसने सिंधु पार की, वह सुदास के समय।[2] शंबर हत्या के पश्चात् थोड़े समय में ही दाशराज्ञ युद्ध होता है। इस युद्ध में आरम्भ में विश्वामित्र सुदास के पक्ष में दिखाई देता है। सुदास के पिता दिवोदास पर विश्वामित्र के पिता गाधि के अर्थात तत्कालीन देवराष्ट्र के शासक के उपकार थे, इसलिये भी शायद सुदास और विश्वामित्र में स्नेह सम्बन्ध आये हों। लेकिन विश्वामित्र स्वयं तेजस्वी था। वीर था, ज्ञानी था कुछ कर गुजरने की उसमें शक्ति थी। अतः मैत्रावरुणी वशिष्ठ के पश्चात् सुदास के और उसके सम्बन्ध बिगड़ गये हों। फलतः सुदास के बदले वशिष्ठ और विश्वामित्र में कटुता आई।[3]

अस्तु शंबर की हत्या के पश्चात् दिवोदास का भारत प्रवेश सुलभ हुआ। सप्त सिंधु में उसका प्रवेश हुआ। यहीं से भारत के इसके पूर्व के इतिहास के पृष्ठ दब गये। क्यों? कैसे? यही शोध आवश्यक है, इसपर किसी का ध्यान ही नहीं गया। सभी दास, दस्यु, अनार्य, द्रविड़ आदि में उलझ गये। हम इस विकृत इतिहास को सुधारने की विद्वानों से सविनय प्रार्थना करते हैं, हमने मंथन में जो विचार प्रकट किये हैं उसपर सोचने की विनंति करते हैं।

२३-२४. भारतीय धर्म ग्रंथ के लेखक यही लोग हैं। भाट, चारण यह शब्द बहुत बाद में प्रचलित हुये हैं। इसके पूर्व सूत, मागध यह शब्द प्रचलित थे। पुराणों के समस्त लेखक प्रायः सूत ही हैं।

---

१. इसकी साक्षी ऋग्वेद स्वयं देता है। और वह प्रमाण स्पष्ट रूप में हमें दाशराज्ञ युद्ध के समय मिलता है।
२. देखिये मंथन भाग १.
३. वशिष्ठ ईरान से भारत आया है। यह मैत्रावरुणि नाम से पहचाना जाता है। देखिये मन्थन प्रथम भाग।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"भारतीय लोग इतिहास लिखना नहीं जानते। उनके पास उनका कोई इतिहास नहीं। वे इतने पुराने भी नहीं है। ऐसा विदेशी विद्वानों का हमारे लिये कहना है, वे यह भी मुक्त कंठ से कह गये हैं कि भारतीयों की अपनी कोई संस्कृति नहीं थी, सभ्यता नहीं थी। यहाँ आर्यो के आने के पूर्व जंगली लोगों की बस्तियाँ थीं। दास, दस्यु आदि का निवास था। आर्य यहाँ आये और उन्होंने भारतीयों को संस्कार दिये, सभ्यता दी, संस्कृति दी।" इसका उत्तर अब हमें देना चाहिये। वह समय अब आ गया है। हमारे पास क्या नहीं है ? अन्त में विदेशियों ने भी लिया कहाँ से ? उनमें हमपर यह आक्षेप करने की शक्ति आई कैसे ? सब विचारणीय है।.

आज हम आजाद है, तीन दशक बीत गये हैं। खेद के साथ कहना पड़ता है इस दिशा में हमने अबतक कुछ नहीं किया। बल्कि वही इतिहास आजतक पाठ्यक्रम में चल रहा है। शिक्षा विभाग की गतिविधियों में कोई परिवर्तन नहीं आया। वही लोग, वही शैली, वही क्षेत्र, वहीं दायरा, यही सब चल रहा है। अब हमें इसमें परिवर्तन लाना आवश्यक हो गया है। हम कौन है ? क्या थे ? क्या हो गये यह सब देखना आवश्यक हो गया है। "हम ही पहले साधक, शिक्षक, शासक यही शाश्वत सत्य है।" इसकी हमें कैसे भूल पड़ी ?[२] हमारे पास केवल हमारा ही नहीं बल्कि यह आक्षेप करनेवाले विदेशी विद्वानों के भी पूर्वजों के मूलका इतिहास मौजूद है। हमने मंथन के प्रथम भाग में कहा भी है—

पुत्रधरा का निज उद्गम की करे शोध अन्यत्र नहीं
है जगका इतिहास सुरक्षित पास हमारे, सत्य यही.

पद्य ७ पृ० ८

किस बलपर हम में यह कहने का साहस आया ? निश्चय ही दुनिया के इतिहास का स्रोत हमारे पास है ! यह समस्त इतिहास हमारे धार्मिक कहे जाने वाले वेद, ब्राह्मण, उपनिषद, पुराण आदि ग्रंथों में ज्यों का त्यों सुरक्षित है। प्राचीन इतिहास के सभी पात्र इन ग्रंथों में है। उनकी गतिविधियाँ हैं। उनमें दुनिया की प्राचीन प्रजा के सामाजिक राजनीतिक उतार चढ़ाव हैं। तब हमारे पास अपना इतिहास नहीं, हम इतिहास रखना जानते ही नहीं यह विदेशी विद्वानों का आक्षेप हम कबतक सहन करते रहेंगे ?

---

१. हमने इसका उत्तर सप्रमाण अबतक के ग्रंथमाला में दिया है.

२. मंथन पद्य विभाग पद्य ९ चरण ४ था

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुराणों द्वारा[1] इतिहास की जो सुरक्षा की गई है उसकी सराहना कहाँतक करे ? यह कार्य सूत, मागधों द्वारा सम्पन्न किया गया है। इसके पश्चात् यह कार्य करनेवाले भाट, चारण मिलते हैं। यह सच है कि प्रायः सभी ने उगते सूर्य के पुजारियों का ही का कार्य किया है। विजयी वीरों के ही गुण गाये हैं। फलतः इतिहास को न्याय नहीं मिल सका। विजयी वीर उतने न्यायी, गुणी, धर्मी हैं इतना ही स्वर उसमें से निकला। उन्हें जो व्यक्ति प्रिय लगा उसको उन्होंने उठाया। उसे अलौकिकताका जामा पहनाया उससे उसका मानुषी करण गिरता गया और वहां अतिमानवीकरण खिलता गया। महामानवी करण तो उचित था लेकिन उन्हें ऐसी जगह ले जाकर बिठा दिया गया, उनका ऐसा नामकरण कर दिया गया कि अब उन्हें साधारण मानव भी नहीं बनाया जाता, नहीं बताया जाता और नहीं उनके नामकरण में कोई परिवर्तन किया जाता। परिणाम यह हुआ कि समाज़ के सामने 'नर से नारायण' अथवा साधारण से असाधारण बनने का जो एक आदर्श रखना चाहिये था वही समाप्त हो गया। सच तो यह है कि पुराणों का अवतारवाद समाज को निर्बल बना गया। परावलंबी बना गया। ईश्वर आयेगा, वह अवतार लेगा, तभी हमारा भला होगा। वह आयेगा तबतक हम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहेंगे। उसकी प्रतीक्षा करेंगे। यही आज हमारे जीवन का चित्र है। यह सब हुआ भाट चरणों, सूत मागधों द्वारा। यह मेरा आक्षेप नहीं है लेकिन इसमें बहुत कुछ सत्यांश है।

वीर गाथा काल को देखिये। "क्षुद्रराजा अपनी क्षुद्र अभिलाषाओं की पूर्ति के लिये सदा तलवार की मूठ पर हाथ रखते थे। रखे रहते थे। उनके युद्धोन्माद की आग को प्रज्वलित करने का भार उनके आश्रित चारणों पर अधिक था। वे चारण अपने आश्रयदाता के ऐश्वर्य, युद्ध-कौशल, पराक्रम, दानशीलता एवं वीरता का वर्णन अत्यन्त ओजस्वी भाषा में किया करते थे। चारणों की इन रचनाओं में ऐतिहासिक सत्य और तथ्यों की रक्षा का आग्रह कम है। चारणों का ध्यान काव्य-निर्माण की ओर अधिक था। उन्होंने विवरण-संग्रह को कम और कल्पना विलास को अधिक मान दिया। उन्होंने तथ्य निरूपण की कम परवाह की, सम्भावना की ओर इनका ध्यान अधिक था। डॉ० हजारी प्रसाद के शब्दों में "इस युग के साहित्य में इतिहास को कल्पना के हाथों परास्त होना पड़ा। ऐतिहासिक तथ्य इन काव्यों में कल्पना को उकसा देने के साधन

---

१. देखिये पुराणों के विषय में हमारे विचार मंथन भाग १ तथा भाग २ खंड २।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
मान लिये गये हैं। इसीलिए तथ्यावली की उपेक्षा कर इस युग के कलाकारों ने उल्लसित आनन्द पर अपनी दृष्टि जमाई है। राजा का विवाह, शत्रुविजय, जलक्रीड़ा, शैलवन विहार, नृत्य-गान-प्रीति ये सब बातें ही इनके काव्य में प्रमुख हो उठी हैं।''

इस युग का कवि सम्भावनाओं को देखता है, सत्य को नहीं। राजा के शत्रु होते हैं, युद्ध होते हैं, विवाह होते हैं, रानियां होती हैं। इतिहास की दृष्टि से एक युद्ध होता है तो कल्पना में और भी अधिक हो सकते हैं। यदि राजा तीन विवाह करता है तो तीस क्यों नहीं करता ? क्या इतने विवाह नहीं हो सकते ? इतिहास का जो मनुष्य की विकास की कला है, जो परिस्थितियों के बीच से मनुष्य की विजय यात्रा का चित्र उपस्थित करता है उसका इन काव्यों में पता नहीं लगता। रूढ़ परम्पराओं का कड़ाई से पालन करने के कारण चारण कवियों ने बहुत अधिक मात्रा में अनावश्यक और व्यर्थ वस्तुओं से अपने काव्य-को भर दिया है। कथानक को अभिलषित ढंग से मोड़ देने के लिए पौराणिक कथाओं में प्रचलित कथानक रूढ़ियों का प्रयोग भी इन काव्यों में किया गया है। इस प्रयोग से काव्य में यद्यपि लोच और सरसता को अवकाश मिला है पर ऐतिहासिक विद्वानों के लिये इनसे बहुत बड़ा भ्रम जाल तैयार हो गया है।

धार्मिक दृष्टि से यह युग बौद्ध धर्म के उच्छेद और हिंदू धर्म[1] की पुनः प्राण-प्रतिष्ठा का युग है। राजपूत राजाओं के अभ्युदय के साथ ब्राह्मण धर्म पुनः अपना प्रभाव स्थापित करने के लिये परिकर बद्ध हो गया है। किन्तु यह हिन्दू धर्म बौद्ध महायान धर्म की संपूर्ण विशेषताओं को स्वीकृत करके सामने आया था। फिर भी धार्मिक दृष्टि से भी यह युग-ह्रास कालीन अवस्था का ही द्योतक था। धर्म और पांडित्य का सरल और प्रत्यक्ष जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं था। धर्म के नाम पर भयंकर रूढ़ियों, अंधपरम्पराओं और अंध विश्वासों का ही बोलबाला था। समाज की व्यवस्था भी शोचनीय थी। सामंतवादी समाज व्यवस्था में प्रजा-रंजन की चिंता किसे थी ? वहां तो सामंत-हित की रक्षा ही प्रधान थी।''

---

१. यह उद्धरण हमने 'उच्चतर निबन्ध भारती' से सिंहासन राय तथा महेन्द्रनाथ मिश्र द्वारा लिखित पुस्तक से लिया है। यहां हिंदूधर्म के स्थान पर ब्राह्मण धर्म कहना चाहिये। यह हमारा आग्रह है। क्योंकि लेखक स्वयं ब्राह्मण धर्म शब्द का प्रयोग बाद में करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इस इतिहास का अनुशीलनात्मक अध्ययन करना अब आवश्यक हो गया है। सभी दृष्टि से अर्थात् सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक। पौराणिक देवता आदिति मानवी के बेटे आदित्य सर्व साधारण मानव हैं। हम तुम जैसे ! उनकी संस्कृति निकृष्ट थी। उनके कारण चन्द्रवंश ऊँचा नहीं आ सका। संस्कारों की उपासना नहीं कर सका। भारत जैसी संस्कारी, पवित्र कर्मभूमि का आश्रय पाकर, शासक बन कर भी कुछ न कर सका। बल्कि उसके शासन में संकर प्रजा की बाढ आ गयी। नारी की महानता घटती गई। उसकी आवश्यकता भोग तक ही सीमित रह गई। गृह संचालिका, गृहलक्ष्मी, सहधर्मचारिणी वही है, जीवन का सही मित्र, सखा, हितचिंतक, सुखदुख को समझने वाली वही है यह भुलाया गया, तब बच्चों पर संस्कार हो तो कैसे ? विषय सुखा-नंद का उपभोग तो ले सके लेकिन उसके द्वारा प्राप्त फल की अवहेलना की गई, जब कि यह कार्य पुरुषों का नहीं था। बच्चों का निर्माण राष्ट्र का निर्माण है, यह एक जवाबदारी का कार्य है उसमें नारी का पुरुषार्थ ही काम करता है। पुरुषों का वात्सल्य काम करता है, यह सब भुलाया गया। चन्द्रवंशी शासित समाज की नर प्रधान संस्था ने नारी को केवल नारी ही रखा। फलतः भारत का इतिहास चन्द्रवंशी शासन काल में बिगड़ गया।

२५. पुरोहित—पुर यानी नगर का हित करने वाला, सोचने वाला। उसके लिये योजना बनानेवाला नियम बनानेवाला, इतना ही अर्थ मैं इस शब्द का मानता हूँ। उसमें प्रामाणिकता बरती न गई ऐसा एक समय भारतीय इतिहास में आया। ब्राह्मणों की पुरोहित, उपाध्याय, जोशी, कुलकर्णी आदि उपाधियां अपना अपना अर्थ लिये हुये हैं। सब भुलाया गया। अतः पुरोहित केवल नाम का पुरोहित रह गया। नाम करण का भी एक इतिहास है फिर यह तो एक उपाधि है।

२६-२७—हमारे प्राचीन साहित्य में मुख्य रूप में दो ही पक्ष काम कर रहे हैं। वही सामने आते हैं। एक धार्मिक और दूसरा राजनीति का। वही आज तक समाज पर शासन कर रहे है।

धार्मिक क्षेत्र के सर्वेसर्वा प्राचीन इतिहास में ऋषि लोग रहे हैं। राजनीति के क्षेत्र के राजा लोग। लेकिन इनकी चाबियां थी ऋषियों के हाथों में। एक क्रांतिकारी विश्वामित्र निकला अवश्य, यह कहने वाला, कि राजा को राजा और ब्राह्मण दोनों के कार्य करने चाहिये। लेकिन उसका आन्दोलन जोर पकड़ न सका। धार्मिक क्षेत्र के प्राचीन साहित्य के ऋषि आगे चलकर ब्राह्मण कहलाने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
लगे। समाज की बागडोर आरम्भ से ही बुद्धि और शक्ति के हाथ में रही है उसी बुद्धि और शक्ति का प्रतीक है ब्राह्मण और क्षत्रिय।

२८-२९-३०-३१—समाज सुधारक नहीं जनमें ऐसा कहना तो उचित नहीं है। विश्वमित्र श्वेतकेतु आदि समाज सुधारक प्राचीन इतिहास में मिलते अवश्य हैं, लेकिन वे अकेले पड़ गये। उनके विचार जड़ें नहीं जमा सके, यह दुःख से कहना पड़ता है। यह सब चन्द्रवंशी शासित भारत की बातें हैं। इसकी नोंध इतिहास के संशोधक लेंगे यही हमारी विनय है।

३२-३३. श्रुति का अर्थ श्रुत पर से श्रुत यानी सुनी हुई बात है। श्रुत यानी सुनना और सुनने के पश्चात् स्मृति यानी याद करना। स्मरण रखना। हमारे प्राचीन इतिहास में एक श्रुति-स्मृति का युग आता है। इस पर से हम यह अनुमान लगाते हैं कि भारत वर्ष में स्यात् तबतक वर्णमाला का आविष्कार नहीं हो सका था। हमारे विद्वानों का यह भी कहना है कि वेद के साथ प्रायः सभी साहित्य स्रौत साहित्य ही है। उचित ही है, लेखन कला का आविष्कार न हो, साधन संपन्नता न प्राप्त हो, तब तक श्रौत बाङमय लेखनी से कैसे उतर सकता है?

३४. हमारी धर्म संपदा का क्या कहना ? हमारी सभ्यता, संस्कृति की एकमेव साक्षी तो वहीं है। दुनिया के इतिहास में ऐसा कौन सा देश है, उस देश का धर्म है उस धर्म को माननेवाला समाज है, जिसके पास हम जैसा ग्रंथ भंडार हो ? यह तो कुबेर का भंडार है। इसमें मानवोपयोगी, समाजोपयोगी; राष्ट्रोपयोगी एवं किस उपयोग की कौन सी वस्तु नहीं हैं ? कौन सी बात नहीं है ? इस्लाम के पास केवल एक कुरान[1] है। ईसाइयों के पास एक बाईबिल। इस्लाम

१. इस्लाम धर्म की सारी इमारत कुरान पर खड़ी है। उसमें लिखा वही सही है शेष सब झूठा, उसमें बोलने वाली स्वयं नहीं बोलता। अल्लाह उसके द्वारा बोलता है। कुरान के तमाम वाक्य अल्लाह के है। उनमें परिवर्तन करने का किसी को अधिकार नहीं है। यह मान्यता मानव प्रगति में निश्चय ही बाधक है। मानव को बुद्धि है, उसमें सोचने की कला है तर्क है, वह स्वतंत्र रूप से अपने बुद्धि का उपयोग कर सकता है, प्रयोग कर सकता है। बुद्धि का विकास ही समाज का, मानव का राष्ट्र का विकास है। सृष्टि रहस्य का निर्णय है। उसे यों बांधकर रखना, गुलाम बनाकर रखना, कहाँ तक उपयुक्त है। यही स्थिति बाईबिल वाले की है। कोई तर्क नहीं कर सकता फलतः उनके साहित्य में बाढ़ नहीं आई।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कहता है यह परम आप्त है। खुदा का कथन है, इसमें कोई बदल नहीं करता। बाईबिल की भी वही स्थिति है। वहाँ हमारे पास चार वेद उनके भाषा रूप में अनेक ब्राह्मण ग्रंथ[१], इसके बाद आरण्यक, उपनिषद[२] और पुराणों[3] के अतिरिक्त षड्दर्शन और मानव धर्म शास्त्र के, स्मृति नाम से, एक सौ के ऊपर ग्रंथ हैं। उपनिषदों में तो शंका और उत्तर का क्रम चालू है। शका पर प्रतिबंध नहीं। इतनी उदारता है किसी धर्म में ? है इस्लाम में ? क्रिश्चनों में ? नहीं। हमपर बंधन नहीं होने से ही हम इतने आगे बढ़ सके हैं। हम प्रतिदिन इस संपत्ति में बाढ ही लाते गये हैं। आज वही संपदा दुनिया के मानव को, विद्वानों, विचारकों को चकाचौंध किये हुये हैं। इन ग्रंथों का, इन ग्रंथों में प्रतिपादित विषयों का, विदेशों में आदर के साथ स्वागत हो रहा है। हमारे अनेक संस्कृत ग्रंथ, ब्राह्मण, उपनिषदादि वहाँ के पाठ्यक्रम में रखे गये हैं। अनेक ग्रंथों का जैसे वेद, उपनिषद् रामायण, महाभारत आदि का अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ हैं। हो रहा है। वहाँ, हमारे यहाँ एक और एक वर्ग संस्कृत पढ़ता जरूर है, वेद कंठस्थ करता जरूर है, विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान, जरूर देता है लेकिन उसमें कोई भी नवीनता नहीं होती। समय के साथ चलने की भावना नहीं होती। होकर भी दबाये हुये हैं। तो दूसरी और युवक वर्ग इन सबको भुलाये हुये है। तब भारत का भविष्य क्या ? क्या इसपर सोचना हमारा कार्य नहीं है ?

भूल यहाँ हो रही है कि हमने हमारे इन ग्रन्थ पर केवल 'धार्मिक' शब्द का लेबुल लगा रखा है। और सच यह है कि उसको मानने वाला वर्ग अपने को बदलना नहीं चाहता। समय को पहचानने में लाचारी दिखाता है। यदि कोई प्रकाशमय विचार देता है, सुधार की बात करता है, तो उसके लिये नास्तिकता का नारा

---

१. शतपथ, ऐतरेय, पंचविंश, गोपथ आदि वेदों के ब्राह्मण ग्रंथ है.

२. उपनिषदों की संख्या २५० के ऊपर है। ये ग्रंथ सभी ज्ञान के ग्रंथ हैं। मनुष्य प्रगति की ओर जा सका वह केवल विचार करने के कारण ही। तर्क करने के कारण ही। उपनिषदों में मनुष्य के हृदय में उठने वाले विचारों का चित्रण है। आज दुनिया के विद्वान जो विद्वान कहलाते हैं वह उन्ही के आधार पर। बौद्ध और जैन धर्म की इमारतें इसीपर खड़ी है। ज्ञान का प्रचार प्रसार करने वाला श्रमण नाम का एक वर्ग प्राचीन इतिहास में मिलता है। यही श्रमण आज के जैन हैं, और उन्हें जैन नाम महावीर के पश्चात् मिला है। इसके पूर्व यह लोग जैन न होकर श्रमण धर्मी थे और उनके तीर्थंकर श्रमणाचार्य।

३. पुराण तो शुद्ध रूप में ज्ञान के अगाध भंडार है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
लगाता है। समय बदल गया है। जागरण आ गया है। समय के साथ बदलना होगा। चलना होगा। यह मानने के लिये अभी वह भी तैयार नहीं है। उसे तैयार हो जाना चाहिये। भारत का धर्म, व्यक्ति के लिये नहीं है, वह दुनियां के लिये है, समस्त मानव समाज के लिये है, केवल भारत के लिये ही नहीं है। इसके मूल में ऐसी संकुचित भावना नहीं है। अन्यथा सर्वत्र सुखिनः सन्तु आदि मंत्र उसमें नहीं दिखाई देते ! 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' की भावना का उसमें अभाव होता। 'वसुधैव कुटुंबकम्' के भाव वह प्रकट ही नहीं करता। भारत का धर्म मानव धर्म है। वैदिक जैन, बौद्ध, शैव, वैष्णव यह शब्द अब निरर्थक लगते हैं। अनावश्यक लगते हैं। भारत का ग्रंथ भंडार भी केवल किसी वर्ग विशेष की बपौती नहीं है। है भी तो केवल विद्वानों की है। किसी जाति की नहीं है। अथवा किसी श्रेष्ठ जाति में केवल जन्म होने से ही उसपर अधिकार जताने का लाइसन्स उन्हें नहीं मिला है। ऐसी भी बात नहीं है। आज वह समय नहीं है। वह ज्ञान भंडार अखिल मानव जाति के लिये हैं। उसमें उतनी ही व्यापकता है, विशालता है। अतः हमें अब जाग जाना चाहिये। अन्यथा भावी जगायेगी ही।

विदेशी विद्वान निश्चय ही वन्दन करने योग्य हैं। उनके हम पर अनंत उपकार हैं। अंग्रेजों की गुलामी इस अर्थ में वरदान रूप ही सिद्ध हुई है। उनके द्वारा ही हम संशोधन की दिशा में बढ़ रहे हैं। सुधार इतना ही आवश्यक है कि केवल उन्हीं के साहित्य पर निर्भर रहना छोड़ दें, और हमारे साहित्य का हम स्वयं अध्ययन करें। मैक्समूलर के वैदिक व्याख्यान पढ़ें लेकिन साथ-साथ अपने ऋग्वेद का भी अध्ययन करें। वास्तविकता तभी खिल सकती है।

तात्पर्य हमारे धार्मिक ग्रंथ केवल धार्मिक न होकर ऐतिहासिक भी है। उनका अध्ययन अवलोकन, चिंतनात्मक ढंग से करना आवश्यक है। अत्यावश्यक है। वह ऐतिहासिक दृष्टि से किया जाय। इन ग्रंथों में आये हुये विषय, नियम, सब मानव निर्मित है, उनपर ईश्वर निर्मित का लेबुल अज्ञानी जनता के लिये लगाया हुआ है, लेकिन ईश्वर निर्मित का लेबुल लगाकर भी कौन सा लाभ प्राप्त किया हमने ? वेद ईश्वर निर्मित है तो उसके अनुसार चलें। गीता ईश्वर द्वारा कही हुई है तो उसके अनुसार चलें। लेकित क्या हम चलते हैं ? क्या, हम ईश्वर को भी ठगते नहीं ? धोखा देते नहीं ? उसका भी कहा हम मानते नहीं ऐसा हमारा आचरण नहीं है ? वस्तुतः ये तमाम ग्रंथ मानव निर्मित है। पौरुषय है।[1] उनमें देश, काल तथा परिस्थितिनुसार तत् तत् कालीन सामाजिक,

---

१. पौरुषेय और अपौरुषेय के लिये देखिये मंथन भाग २ खण्ड २।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

राजनीतिक, धार्मिक गतिविधियों का क्रमबद्ध विवरण है। विवेचन है। परिस्थितिनुसार उसमें परिवर्तन लाना है, यह धारणा बना लेना आज आवश्यक है अन्यथा उनमें आई विकृति, भ्रांतियां निकलना असम्भव है। इस बात का इतिहास संशोधक ध्यान रखें। और उस दृष्टि से कार्य करें यही हमारी विनय है।

३५. **धर्म ग्रन्थ**—हमारे धर्म ग्रंथ साहित्य रत्न-भण्डार है। उनमें इतिहास भी है। प्रत्येक ग्रंथ का अपना विषय है। वह मात्र धार्मिक ही नहीं है। सामाजिक भी है, राजनीतिक भी है। उनमें भाषा है, व्याकरण है, भूगोल है, खगोल है, ज्ञान है विज्ञान है। वेद चार हैं। उनमें ऋग्वेद और सामवेद प्रायः एक ही है। दोनों में बहुत ही थोड़ा अन्तर है, विवेचन एक है। लेकिन हमें वेदत्रयी यानी तीन वेदों के विषय में भी उल्लेख मिलता है। वेदत्रयी शब्द प्रयोग वेद तीन है यहीं संकेत करता है। और सच भी वही लगता है। प्रत्येक वेद की अपनी सीमा है। मर्यादा है, विषय है। ऋग्वेद मुख्य रूप में प्रार्थनाओं से भरा पड़ा है। उसमें चन्द्रवंशी प्रजा की गतिविधियों का वर्णन है। दिवोदास से लेकर शान्तनु तक के चन्द्रवंशी राजाओं के नाम उसमें अंकित है। उसमें उनके समाज की गतिविधियों का सामाजिक, राजनीतिक वर्णन है। महायुद्धों का भी वर्णन है। यह तमाम विषय इतिहास के हैं। ऐतिहासिक घटनाओं के हैं। उसमें कुछके पात्र सूर्यवंशियों के भी है। तात्पर्य यह वेद इतिहास शोध के लिए बहुत ही सहायक सिद्ध होता है। अथर्ववेद में औषधि, जादू टोना, विज्ञान आदि अनेक विषय हैं। अतिरिक्त अथर्ववेद की अनेक ऋचायें, सूक्त, उच्चकोटि के सामाजिक दर्शन का आभास देते हैं। सभ्य, संस्कारी समाज की रचना, राज्य की, समाज की उत्तम व्यवस्था, नीति अनीति की व्याख्या, आदि कितने ही उत्तम सूक्त इस वेद में मिलते हैं, ऐसे प्रभावशाली सूक्त ऋग्वेद में नहीं मिलते। ऋग्वेद की अपेक्षा अथर्ववेदीय समाज को मैं पूर्ण रूपेण सभ्य, संस्कारी मानता हूँ। तीसरा वेद केवल कर्मकांड का ग्रन्थ है।

ब्राह्मण ग्रथ, ऋग्वेद तथा अथर्ववेद के विस्तारक है। उपनिषद आत्मा, ईश्वर आदि के लिये सोचते हैं। आत्मा पर आकर रुक जाते है। अंत में परम आत्मा यानी परमात्मा कहकर आगे नहीं बढ़ते। लेकिन उसका कोई दृश्य रूप नहीं दिखा पाते। फलतः परमात्मा, ईश्वर या सृष्टिकर्ता आजतक भी कल्पना में ही है। विश्व का संचालन किसी शक्ति द्वारा हो रहा है बस इतना ही मानकर चलना पड़ता है। मतलब उपनिषद भी इस विषय में निर्णय नहीं ले सके। स्मृति ग्रंथ मानव समाज शास्त्र के ग्रन्थ है। जो अनेक लेखकों द्वारा लिखे गये हैं, समय-समय पर लिखे गये है। वे समाज संचालन-नियम कोश है। रहे पुराण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
ग्रन्थ तो पुराण[1] तो सबका निचोड़ है। उसके पंच लक्षण अति उपयुक्त है। उन्हें छोड़ देते हैं तो हमारा समस्त ज्ञान भंडार लुप्त हो जाता है।

३६-३७. आगत गण:-अभिलेख—आगत गण[2] यानी आने वाले गण-समूह अर्थात् टोलियां। अभिलेख यानी साक्षियां। आगत गण की गतिविधियां यानी चन्द्रवंश की गतिविधियाँ। हमारा विषय अभी सातवे मन्वतर की प्रजा का चल रहा है। वह प्रजा है चन्द्रवंशी, जो देवासुर संग्राम समाप्ति पश्चात् भारत की ओर आती है। उनकी गतिविधियों का सूक्ष्मातिसूक्ष्म वर्णन ऋग्वेद करता है। हमारा लक्ष्य यहाँ उसी प्रजा की गतिविधियों के निरीक्षण का रहा है। मंथन के प्रथम भाग में हमने इसपर अच्छा प्रकाश डाला है।[3] आजतक हमने अनेक इतिहास संशोधकों को पढ़ा, शिक्षा विभाग में जो उच्चातिउच्च पद पर हैं, इतिहास, पुरातत्व आदि विभागों के, सब एक ही स्वर में बोल गये हैं—कह गये हैं। एक ही पगडंडी से चलने वाले, एक ही दायरे से चिपक कर रहने वाले मिले। किसा ने कहीं भी अपनी स्वतंत्र बुद्धि या तर्क द्वारा भारतीय सभ्यता और संस्कृति को लक्ष्य कर कुछ नया नहीं दिया। विदेशी विद्वानों के ही विचार इनकी आधारशिला रही है। अर्थ को लेकर थोड़ा घुमा फिरा कर दिखाने की शब्दचातुरी अवश्य देखी। फलतः प्राचीन भारत का वास्तविक इतिहास अभी तक स्पष्ट नहीं हो सका। आज भारत को स्वतंत्र हुये ३६ वर्ष बीत गये हैं, ३७ वां चल रहा है, मतलब चौथा दशक चल रहा है। तीन पीढियां बात बात में निकल गई हैं। शिक्षा में कोई परिवर्तन नहीं आया। साहित्य में कोई वास्तविकता नहीं आई। इतिहास वहीं पढाया जा रहा है जो अंग्रेजों द्वारा रूढ किया हुआ है।" जैसे "आर्य विदेशी हैं, भारत में आये हैं, उनका भारत पर आक्रमण हुआ है, उनके आने के पूर्व यहाँ पर दास, दस्यु, अनार्य, द्रविड़ आदि की ही बस्तियाँ थी। उनपर आर्यों ने विजय पाई, उनका संघर्ष सैंकड़ों वर्ष तक चला" यही इतिहास आज तक भी स्वतंत्र भारत का विद्यार्थी—कलका भारत का आधारस्तंभ पढ रहा है। साथ में उस इतिहास में यह भी लिखा हुआ है —"भारत में आर्यों का प्रवेश बिना विरोध नहीं हुआ। यहाँ के मूल निवासी

---

१. देखिये पुराण क्या है ? इसके लिये मंथन भाग २ खण्ड २।

२. आगत गण यानी आनेवाले गण, समूह आदि। प्राचीन साहित्य में जाति शब्द नहीं मिलता। और देश शब्द भी नहीं मिलता। उसके बदले गण, समूह तथा देश के लिये 'लोक' शब्द प्रयोग मिलता है।

३. देखिये मंथन प्रथम भाग।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

द्रविड़ों ने[1] उनका डटकर मुकाबला किया। संभवतः आर्यों, अनार्यों में[2] सैकड़ों वर्षों तक संघर्ष चलता रहा। अंत में अनार्यों की हार हुई। उनमें से कुछ ने विजेताओं की अधीनता स्वीकार कर ली। उनकी सेवा[3] करने लगे। वहीं लोग आगे चलकर शूद्र[4] कहलाने लगे। अधिकतर दक्षिण के पर्वतों और वनों में चले गये वहाँ उन्होंने अपने शक्तिशाली राज्य स्थापित किये तथा शताब्दियों तक आर्यों को दक्षिण[5]

---

१. यहाँ के मूल निवासी द्रविड़ थे यह कदापि सिद्ध नहीं किया जा सकता। यह विदेशी विद्वानों के व्यर्थ तर्क हमारे इतिहास को उलझाये हुये हैं। भारतीय विद्वानों को आँखें मूंदकर उनका अनुकरण करना कम से कम अब तो छोड़ देना चाहिये। अब तो हमारी स्वतंत्रता प्रौढ़ हो चुकी है। उस स्थिति में भी हमारी ऐसी वाणी, कलम, ? यही आश्चर्य है।

२. यहाँ द्रविडों के साथ ही द्रविड़ों के लिये अनार्यों का प्रयोग हुआ है। वस्तुतः यह केवल तर्क है। निराधार हैं। व्यर्थ है। इसमें कोई सत्यांश नहीं है। क्या अनार्य–कोई जाति है ? यह तो एक संबोधन है। आर्य नहीं वह अनार्य इस प्रकार यह शब्द प्रयोग है। और द्रविड़ ? द्रविड़ कौन हैं ? कोई विद्वान इसे स्पष्ट कर सका है आज तक ? शब्द प्रयोग करने वाले तो बहुत मिले। हम इन इतिहास के विद्वानों से पूछना चाहते है कि कौन हैं द्रविड़ ? कौन हैं अनार्य ? किसे पूछें ? किसका नाम दिखायें ? प्रायः सभी यही लिखते आ रहे हैं। ध्यान रहे आर्य अनार्य ज्ञातिवाचक मानकर चलने से ही हम और भी उलझ जाते हैं। द्रविड़ों के लिये देखिये मंथन भाग २ खण्ड २।

३-४. यह विचार इन लेखकों के मस्तिष्क की उपज मात्र कही जायेगी। इसे अंग्रेजों के शासन काल में भले ही अच्छा माना गया हो। आज यह सब विचार मांगता है। आज समय की मांग है वस्तु स्थिति के दर्शन करो-कराओ।

५. प्रायः सभी इतिहासकार एक सी ही बात करते हैं तब हम प्रमाण रूप में किसका नाम दे ? यह अमुक लेखक कहता है यह कैसे कहें ? उसका क्या कोई मूल्य होगा ? ये सभी लोग द्रविड़ों को, अनार्यों को दक्षिण के पर्वतों और वनों में भेज देते है क्या यह उनके मस्तिष्क की उपज नहीं है ? क्या ऐसा कहीं कोई प्रमाण है ? कुछ तर्क करना चाहिये इसलिये तर्कों की एक परंपरा सी चल पड़ी है। इसमें किसी ने दक्षिण की स्थति नहीं दिखलाई। उस भू भाग के दर्शन नहीं कराये। दक्षिण तो ठेठ सागर तक गया है। किस दक्षिण के पर्वतों और वनों में ये लोग चले गये ? उन्होंने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
की ओर बढ़ने से रोका। अनार्यों को परास्त कर आर्य पंजाब में जिसे उस समय सप्तसिंधु कहा जाता था—बस गये। यहीं उन्होंने अपनी सभ्यता विकसित की जिसको आर्य सभ्यता या वैदिक सभ्यता कहते हैं।"

---

कौन से साम्राज्य की स्थापना की, उनका नाम क्या रखा? इस विषय में कोई यह कुछ नहीं कहते।

आज हम वनवासी जनों को आदिवासी कहकर बुलाते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि बगैर बनवासी जितने भी है वे सब के सब विदेशी हैं। यानी हम सारे विदेशी हैं। तो हमें हम जहाँ से आये वहीं चले जाना चाहिये। वनवासी जनों के लिये हम स्पष्ट रूप में आदिवासी यानी आद्य-निवासी, मूल निवासी शब्द प्रयोग करते हैं। जब वे मूल निवासी हैं तो हम कौन हैं? क्या यह विचार किसी दिन किसी के मस्तिष्क में आ नहीं सकता? यह शब्द प्रयोग अनुचित है। अनैतिहासिक है ऐसा हमारा मत है। विद्वान इसपर अवश्य विचार करें। आदिवासी, अनुसूचित जातियां यह शब्द भारत के प्राचीन इतिहास को और भी उलझा कर रखते हैं। अन्याय करते हैं। अभ्यास क्रम में आज भी यह शब्द पढ़ाये जाते हैं। आज के स्वतंत्र भारत में सामाजिक कल्याण की दृष्टि से इन शब्दों का प्रयोग सरे आम किया गया है। कम से कम एक इतिहास संशोधक के लिये यह सब विचारणीय हो जाता है।

दक्षिण में केवल द्रविड़ यही शब्द प्रयोग रूढ़ हो गया है। ये सारी स्थितियाँ राजनीतिक नेताओं के लिये तो नहीं इतिहास सशोधकों के लिये सिर दर्द का काम करती हैं।

ध्यान रहे द्रविड़ एक प्राचीन इतिहास का प्रभावशाली, सभ्य, सुसंस्कृत गण हैं। उसके इन इतिहासकारों के कहें अनुसार आर्यों से कोई युद्ध नहीं हुये हैं। सच तो यहीं है कि यह इतिहासकार न उन आर्यो को पहचान सके न द्रविडों की उन्हें पहचान है। इस गलत इतिहास को अब एकदम नष्ट कर देना चाहिये। आनेवाले आर्य आर्य न होकर ऐल है। और उनके युद्ध द्रविड़ों, अनार्यों दस्यु दासों आदि से न होकर दैत्य और दानव गणों से हुये हैं (देखिये मंथन भाग १. टिप्पणी विभाग, तथा मंथन भाग २ खंड २)।

दूसरी बात विदेशियोंने जो इतिहास लिखा वही ब्रह्मवाक्य मानकर चलना कम से कम भारतीय विद्वानों के लिये खेद का विषय है। ऋग्वेद में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह उद्धरण हमने पश्चिम बंगाल में नवीनतम शिक्षण क्रमानुसार निर्धारित सातवी कक्षा के लिये चलनेवाले एक पाठ्यक्रमीय पुस्तक से लिया है। कहने में कोई आपत्ति नहीं है कि प्रायः समस्त भारत वर्ष के पाठ्य क्रमीय पुस्तकों में ऐसा ही विवरण थोड़े बहुत 'हेर फेर से घुमा फिराकर लिया गया है। यह एक अटकल मात्र हैं। यह विवरण किस ग्रंथ से लिया गया, इसके लिये क्या आधार है, इसका कोई प्रमाण इनके पास नहीं है। आश्चर्य तो इसी बात का है कि हम अभीतक लकीर के फकीर[1] ही बने हुये हैं। इस पुस्तक का प्रकाशन १९७५ में हुआ है आर लेखक है, डॉ० दिनानाथ वर्मा।

आज का विद्यार्थी कल के भारत का संचालक है। उसके ऐतिहासिक ज्ञान में बढ़ावा करना है तो आवश्यक हो जाता है कि विद्यार्थी को चालना मिले। ऐसा ही विवेचन विद्यार्थी के सम्मुख रखना चाहिये। पाठ्यक्रमीय पुस्तकों का यह विवरण प्रमाणाधारित नहीं है। इतनाही यहां आग्रह पूर्वक कहना चाहूँगा। अटकलों पर अटकलें लगाने से प्राचीन भारत का इतिहास और भी उलझ गया है, उलझ रहा है। वैसे देखा जाय तो विदेशियों की दलीलें अपनी ओर से यद्यपि एक पक्षीय रूप में हैं लेकिन है प्रेरणा देनेवाली, इसे मैं तो नहीं भूल सकता। हमें उनसे प्रेरणा मिलनी चाहिये। मिलती है। उनके विचारों को थोड़ा मोड़ देकर हम अपनी ओर से उन्हीं के विचारों को पुष्ट करनेवाला विचार प्रकट कर सकते हैं। आवश्यकता है हमें अपने ग्रंथों के स्वतंत्र रूप से अध्ययन

---

केवल दस्यु, दास आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है। ऋग्वेद की तत्कालीन परिस्थिति के समय में यहाँ द्रविडों का आगमन हुआ है यह संभव नहीं लगता। नागों का अवश्य हुआ है। द्रविड़ों के लिये बिना शोध के कुछ भी नहीं कहा जायेगा। जब भारत में ऐल आये तब यहां दैत्य दानव और नागों का निवास था। यह देवासुर संग्राम समाप्ति पश्चात् की गतिविधियाँ है। स्थानांतर सभी गणों ने किया है। आदित्य, रुद्र आदि ने भी अर्थात वसुओं ने भी। क्यों कि रुद्र वसुगोत्र के दिखाई देते हैं। तो रुद्रों के साथ द्रविड़ों के पितृकुल में भी वसु ही मिलते हैं लेकिन ऐलों के भारत आगमन के समय उनका भारत निवास संभव नहीं है।

१. यहाँ वैदिक के स्थान पर स्पष्ट रूप में ऋग्वैदिक शब्द प्रयोग करना उपयुक्त लगता है। प्रायः सभी लेखक वैदिक शब्द का प्रयोग करते हैं वह इतिहास के पृष्ठ खोलने में बाधक सिद्ध होता हैं। वहाँ आप किस वेद को लक्ष्य करके कह रहे हैं या लिख रहे हैं यह स्पष्ट करना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
की। तभी हम विदेशियों की दलीलें को तुलनात्मक दृष्टि से नाप सकते हैं। और यदि ऐसा होता है तो निश्चय ही इस मंथन से किसी न किसी सत्य को पकड़ सकते हैं।

हमने भी मंथन के प्रथम भाग में विधान किया है कि भारत के मूल निवासियों ने आगंतुकों को[1] विना विरोध प्रवेश नहीं दिया। स्थिर होने नहीं दिया। जो पुरु वंश आगे चलकर भारत के सबसे अधिक प्रदेश का स्वामी बन गया और कौरव नाम से पहचाना गया उसको १४।१५ पीढ़ी तक भारत के मूल निवासी वीरों ने चैन से नहीं बैठने दिया। उनमें लगातार युद्ध होते रहे। इसके पश्चात् इनके पांच जनपद स्थापित हुये। जो पंचाल नाम से पहचाने गये। इसके पूर्व भी तुर्वसु और आनवों के जनपद स्थापित हुये हैं।[2] मतलब हमने अपने प्रयास में ऋग्वेद के आधार पर ही भारत में आर्यों का नहीं अपितु ऐलों का आगमन बताया है। अतः भारत में आर्यों के बजाय ऐलों[3] का आगमन हुआ यही बात सर्व प्रथम ध्यान में आनी आवश्यक है।

अन्त में उसी पुस्तक के लेखक की एक ओर दलील पर विचार करना चाहता हूँ। लेखकका कहना है—"लंबे कद, स्वस्थ, सुंदर और गोरे रंग के आर्यों का भारत में आना इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है।"

क्या यह दलील कोई गौरव भरी है? इसमें कोई विशेषता है? यह क्या दीनानाथ जी के शब्द है? यह विवरण विदेशी विद्वानों द्वारा लिखे गये इतिहास के आधारपर दिया गया है। जो अब संशोधन माँगता है। यहाँ आने वाले आर्य लोग लम्बे कदवाले हैं, स्वस्थ शरीर वाले हैं, देखने में सुन्दर है और गौर

---

१. हमने आगंतुक शब्द प्रयोग किया है। यह प्रयोग आर्यों के लिये किया गया है। लेकिन हमने उन्हें ऐल करार दिया है।
२. देखिये मंथन प्रथम भाग। टिप्पणी विभाग पृष्ठ।
३. आनेवाले लोग चन्द्रवंशी है। इतिहासकार उन्हे आर्य कहते हैं अवश्य, लेकिन वे चन्द्रवंशी है यह नहीं कह पाते। चन्द्र और सूर्य दोनों आर्य हैं इस नाते ही इन प्रजाओं का उल्लेख किया गया है। मैं भी सहमत हूँ। लेकिन लाचारी से कहना पड़ता है कि चन्द्रवंशियों में आर्यत्व नहीं था। आनेवाले लोगों ने यहां की मूल प्रजा से बहुत कुछ सीखा यह दलील भी ये इतिहासकार करते हैं लेकिन वह प्रजा कौन? यह भी यह लोग नहीं बता सके। क्यों कि आने वाले लोगों को न ये पहचान सके और न यहाँ की मूल प्रजा को भी। वह तो केवल शब्द लेकर चलते हैं। चले हैं आजतक।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वर्ण के है। क्या इसी के आधारपर आर्यों की व्याख्या होती है? करनी है ? यदि यही अकाट्य निर्णय है तो वह सरासर गलत है। आनेवाले लोग ईरान से आये हैं तो गौर वर्ण के होंगे ही, शरीर भी उनका अच्छा हो सकता है इसमें भी दो राय नहीं है। दिखने में वे सुन्दर होंगे ही इसमें भी शंका नहीं है लेकिन इन्हीं चिह्नों पर आर्यों की पहचान करना, कराना तो उचित नहीं है ? आर्य शब्द जाति वाचक नहीं है यह हम १९७२ से कहते आ रहे हैं।[1] यह शब्द संस्कार वाचक है, गुणवाचक है। और समय समय पर इसका अर्थ बदलता आया है लेकिन रहा है गुणवाचक ही।

तात्पर्य इन आगंतुकों का यानी ऐलों का विस्तृत और स्पष्ट वर्णन प्रामाणिक रूप में हमें ऋग्वेद में मिलता है। ऋग्वेद का स्वतन्त्र रूप से ऐतिहासिक चिंतनात्मक अध्ययन आवश्यक हो गया है। यह परिश्रम अब हमें करना ही होगा। विदेशियों के निर्णयों पर हमें तुलनात्मक दृष्टि से अपने विचार विद्वद्वर्ग के सम्मुख रखने ही होंगे।

३८. प्राचीन भारत का इतिहास विकृत होने की शुरुआत दियोदास और शंबर के युद्ध से ही होती है। इसके पश्चात् दाशराज्ञ युद्ध होता है और धीरे-धीरे चन्द्रवंशी प्रजा अपनी वसाहतें कायम करने के प्रयत्न में लगती हैं। साथ में देव सभ्यता और देव संस्कृति है। चन्द्रवंशियों पर उनके मूल स्थान एलाम[2] में ही देव सभ्यता हावी होगई थी। शंबर की हत्या करने वाला इन्द्र अकेले ही यहाँ नहीं आया होगा। अन्त में वह भी एक राजा है। अपनी सेना लेकर आया होगा। साथ ही अन्य प्रजा, जैसे गंधर्व, किन्नर, अप्सरायें इनका भी आगमन हुआ ही होगा। नृत्यगान और विलास यह इन्द्र की प्रिय बातें हैं। सिंधु तथा सरस्वती तटों की नगर सभ्यताओं का नाश करते हुए अपनी वसाहतें स्थिर करने का इन सबका उपक्रम चालू रहा होगा। अंत में भी चलकर वसाहत ने यह दिशा बदल दी और चन्द्रवंशी शासक बन गये।

आगे चलकर देवताओं ने भी अपना निवास भारत में ही बनाया। देवलोक यानी देवराष्ट्र के नाम से त्रिविष्टप ( तिब्बत ) में हो गया। इसके पूर्व इनका

---

१. मंथन का प्रथम भाग संक्षिप्त रूप में १९७२ में ही प्रकाशित किया गया था। १९८२ का प्रकाशन परिमार्जित और परिवर्धित रूप में पाठकों के हाथों में दिया गया है।

२. एलाम का इसके पूर्व का नाम इलावृत्त वर्ष था। वही एलाम आज ईरान के नाम से पहचाना जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

देवलोक [illegible] था। इसकी राजधानी अमरावती थी। अब अप्सराओं का आवागमन देवलोक से मानव लोक में होने लगा। इन्द्र के दरबार में नृत्य गान चलता था। मानव लोक ( भारत ) से वहाँ चन्द्रवंशी नरेशों का आवागमन था। अप्सराओं का आगमन भारत में इन नरेशों की ओर होता था। शासक ऐलों के जीवन में अप्सराओं ने अपना स्थान बना लिया था। अप्सराओं द्वारा चन्द्रवंशियों को जो संतानें हुईं उनके नाम वंशावली में पाये जाते हैं। यह क्रम रामायण कालतक सतत चालू था। दिवोदास और अहिल्या रामकालीन पात्र हैं, जो सुदास को मेनका नाम के अप्सरा द्वारा हुयी संतान थे। महाभारत काल में भी सत्यवती आर्द्रिका अप्सरा की संतान मिलती है।

तात्पर्य चन्द्रवंशी नरेशों का शासन भारतबर्ष में चालू होने के पश्चात् ही यहाँ की संस्कृति और सभ्यता, शासन के कारण विकृत होने लगी थी। वर्ण संकर की बाढ़ आ गई थी। विवाह संस्था टूट गई थी। नारी का मूल्य घट गया था। वैवाहिक जीवन में जीवन साथी के बदले रखैलों का मान, सम्मान अधिक बढ़ गया था। यह काल आज से लगभग ६००० व० पू० का मानने में आपत्ति नहीं है।

निश्चय ही हमारा इतिहास, इतिहास के रूप में स्वतन्त्र रूप में लिखा हुआ नहीं है। इतिहास को क्रमबद्ध लिखने क साधन हमारे पास मौजूद हैं। उसपर से हम केवल अपना ही नहीं दुनिया के मानव का इतिहास दे सकते हैं। यह जागरण विदेशी शासकों के द्वारा आया अवश्य है लेकिन हमारे इतिहास को उसने और भी उलझाकर रख दिया है। अभीतक वही इतिहास हमारे पाठ्यक्रम में चला आ रहा है।

अन्त में यही विनय है कि भारतीय विद्वान् अपने साहित्य का स्वतन्त्र अध्ययन करें।

**३९. उधार**—अर्थात् वेदोंपर जो कार्य विदेशी विद्वानों द्वारा हुआ है और उनके द्वारा जो इतिहास लिखा गया है, उसीपर विश्वास करके हमें कबतक अंधेरे में रहना है? इसपर अब सोचा जाय तो अच्छा हो। विदेशी विद्वानों के सर्व-साधारण जनता पर अनन्त उपकार हैं। इस बात को हमें नहीं भूलना चाहिए। लेकिन इतिहास लेखन कार्य में हुआ पक्षपात नहीं भुलाया जा सकता। और साथ ही भारतीय विद्वानों में अपने साहित्य के स्वतन्त्र अध्ययन के अभाव की स्थिति को भी अब अधिक नहीं सहा जाता।

**४०. ऐलों**—अर्थात् चन्द्रवंशियों।

४१-४२-४३. दैत्य, दानव, नाग—देवासुर संग्राम समाप्ति पश्चात्
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
कहो या चालू देवासुर संग्राम काल में कहो, इस आपसी झगड़ों के कारण दैत्य, दानव और नाग तीनों ने स्थानांतर किया और भारत में आकर रहने लगे। इसका उल्लेख हमने पीछे किया है। अतः यहाँ विशेष और लिखने की आवश्यकता नहीं ऐसा मानता हूँ।

४४. ऐलों का भारत आगमन दैत्य, दानव और नागों के बहुत बाद का है। तबतक तो इनकी सभ्यतायें विकसित हो चुकी थीं। इनके बड़े-बड़े किलेबंदी नगर थे, पुरियां थी। लेकिन उन्हें वे आर्यो की सभ्यता के चिह्न थे अर्थात् आनेवाले आर्यो के, ऐसे कहने वाले महाभाग भी हमें मिले हैं। खेद इस बात का है कि इतिहास जैसे विषय को भी हमने मनोरंजन का विषय बनाया और अपने आप को अपनी वस्तुस्थिति को, अपने इतिहास को अभीतक स्पष्ट नहीं किया। उन नगरों का नाश इन्द्र द्वारा दिवोदास के समय में ही हुआ है यह उल्लेख ऋग्वेद करता है। और यह उल्लेख केवल ऋग्वेद ही कर सकता है। सच तो यह है चन्द्रवंशियों की गतिविधियों का विस्तृत और प्रामाणिक ब्यौरा पुराणों की अपेक्षा ऋग्वेद ही अधिक देता है।

४५-४६-४७-४८. ऐलों ने यहाँ आने के पश्चात् अर्थात् इन्द्र द्वारा शंबर की हत्या के समय और बाद में यहाँ की नगर सभ्यता का नाश किया। बहुत खून बहाया, नगर जलाये, लूटपाट की इसकी साक्षी स्वयं ऋग्वेद देता है। इसके विषय में हम मंथन ग्रंथमाला में बहुत कुछ कह गये हैं। यह सब हुआ है इसमें मूल भारतीय सभ्यता का विनाश किया गया है यह नहीं भूलना चाहिये। आगन्तुको द्वारा अर्थात चंद्रवंशी और उनके सहायक इन्द्र द्वारा ऋग्वेद में इस विषय का जो वर्णन आया है क्या वह आर्यों को शोभा देनेवाला है ? आर्य शब्द की व्याख्या क्या है ?

४९-५०-५१. ऐल देवताओं के पड़ौसी थे। अर्थात् भोग भूमि के निवासी थे। प्राचीन इतिहास में कर्मभूमि के नाम से केवल भारत ही प्रसिद्ध है। ऐलों की संस्कृति भोग प्रधान थी जो कर्मभूमि भारत की संस्कृति से भिन्न पड़ती थी।

५२-५३—ऐलों की भोग प्रधान संस्कृति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। फलतः इनके शासन काल में भारत में नारी का मूल्य घट गया। संकर की बाढ़ आ गई।

५४. दिवोदास—भारत में आनेवाला प्रथम व्यक्ति दिवोदास है। इसके कारण देवेन्द्र, और देवेन्द्र के कारण देव सभ्यता! देव संस्कृति तथा देव

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लोक की प्रजा भी भारत में आई और यहीं की निवासी बनकर रह गई। दिवोदास का टकराव शंबर दानव के साथ हुआ। उसके नाश के लिये देवेन्द्र आया, और देव-दैत्य-दानव शत्रुता की आग फिर सुलगी। लेकिन भारत की धरती पर।

५५. शंबर—यह दानव है। प्रायः सभी इतिहासकार इसे असुर विशेषण लगाते आ रहे हैं वस्तुतः यह अनुचित है। संभव है ऐसा कहने पर भी भूल से हमारे प्रथम भाग में कहीं इसके लिये असुर शब्द प्रयोग किया गया हो। उसके लिये हमें खेद है। शंबर असुर नहीं दानव है। असुर शब्द की अपनी एक विशेषता है। दानव शब्द दनु की संतानों के लिये प्रयुक्त हुआ है। शंबर दनु की संतानों का वंशधर हो अथवा उसकी संतानों में विशेष व्यक्ति हो। जो हो, शंबर दिवोदास के भारत आने के पूर्व से यानी ८/९ पीढ़ी पूर्व से भारत में निवास किये हुये था। यही नहीं अनेक दैत्य, दानव कुल अपनी अपनी वसाहतें कर के सप्तसिंधु में बैठ गई थी। उनकी सभ्यता और संस्कृति का स्वरूप विकसित था। चन्द्रवंशियों ने अर्थात् ऋग्वैदिक जनताने इसी प्रजा के लिये दास, दस्यु आदि संबोधन किया है। शत्रु मानकर किये गये ये संबोधन अनुचित हैं ऐसा तो नहीं कहा जायगा लेकिन वस्तुस्थिति कुछ और ही है। शंबर आदि दानव और दैत्य कश्यप प्रजापति की संतान हैं। आदित्यों और नागों के भाई हैं। सभी एक पिता की संतान होने से एक ही भूमि के निवासी हैं। भारत में आकर भी हिमाचल के शीत प्रदेश के निवासी बने हैं। सप्तसिंधु प्रदेश के लोग आज भी गौर वर्ण के ही हैं तब ऋग्वेद के ये कृष्णवर्णी, दस्यु, दास कैसे संभव है? ऋग्वेदकालीन जनता की गतिविधियों का इतिहास शोध मांगता है।

५६. देवराज—देवताओं का राजा अर्थात् देवेन्द्र। भारत में दूर देश से आया है। साथ में यदुओं को भी लेकर आया है इसकी साक्षी ऋग्वेद देता हैं। विश्वामित्र भी दूर देश से रथपर सवार होकर भारत में आया है इसकी साक्षी ऋग्वेद का नदी सूक्त देता है।[१]

५७. यहीं से—अर्थात् शंबर की हत्या के पश्चात्। ऋग्वेद में दो महायुद्ध आते हैं। समस्त ऋग्वेद में यह विवरण बिखरा पड़ा है। लगता है संकलन काल में जैसी जैसी ऋचायें मिलीं संकलित की गईं। संदर्भ का ध्यान कम ही रखा गया। उस विवरण को क्रमबद्ध बनाकर नये सिरे से ऐतिहासिक दृष्टि से उसका अध्ययन और लेखन आवश्यक हो गया है।

---

१. देखिये मंथन प्रथम भाग पृ० ३१०

५८. नैतिकता की आद्य धरा—भारत नैतिकता की आद्यधरा है यह विधान अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं है। चंद्रवंश के आगमन पश्चात के भारत का
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
चित्र हम पाठकों के सम्मुख अबतक रखते आये हैं 'लेकिन भारत का इतिहास यहीं से नहीं आरंभ होता। लिखने वाले लिखते हैं।[1] "भारत का इतिहास एक प्रकार से इस देश में आर्य–जाति का इतिहास है। उसका आरंभ आर्यों के भारत में आगमन से होता है।" लेकिन यह कैसे संभव है ? तो क्या इसके पूर्ण भारत का कोई इतिहास ही नहीं है ? "भारत में आर्य-जाति आई" शब्द प्रयोग को तो हम मानते ही नहीं। हमने ज्ञात किया है भारत में ऐल जन समूह आया है और उनके संस्कार आर्योचित नहीं हैं। ऐल समूह आया है चन्द्रवंश की १५।१६वीं पीढी में जब कि सातवां मन्वतर चल रहा है, तो क्या तब तक भारत का कोई इतिहास ही नहीं था ? गत छह मन्वतरों में भारत का कोई अस्तित्व हो नहीं था ? तब वे भरत कहाँ गये ? ऋग्ववेद के १०·१२९ १२९वें सूक्त के लेखक परमेष्ठि के वंशधर कहाँ गये ? जिनकी लगभग २७ पीढियाँ राज सिंहासन पर मिलती हैं, उनका इतिहास कहाँ गया ? जिनके नाम पर इस देश का नामकरण है वह भरत कैसे भुलाया जा सकेगा ? भारत का इतिहास तो ऋग्वेद पूर्व से चलता है। ऋग्वेद पूर्व १५+१७+२७=५९ पीढ़ी पूर्व से शुरू होता है। भरत दिवोदास से ५९ पीढ़ी पूर्व हो चुका है। क्या उसका इतिहास भारत का इतिहास नहीं है ? आवश्यकता है अंग्रेजों द्वारा लिखे गये इतिहास में सुधार करने की और प्राचीन भारत के इतिहास के प्रति–उन भरतों के प्रति, न्याय देने की।

५९-६०. आगत—अर्थात् भारत में आये लोगों को। अर्थात ऐलों को। इस धरती ने बेघरबार वालों को घर दिये। अन्न दिया। वस्त्र दिये। अंत में राज्य भी दिये। दूर देश से आकर ऐल यहाँ के शासक बन गये। इस धरती ने सबको सहारा दिया। आजतक दे रही है। आज भी भारत में अनेक विदेशी हैं। भारत को अपना मानकर रहते हैं जब कि उनकी अपनी संस्कृति है, धर्म है। लेकिन कहीं कोई मतभेद नहीं है। किसी के साथ किसी का कोई झगड़ा नहीं है, वैर नहीं है, द्वेष नहीं। इस धरती की आत्मा सदा की व्यापक रही है, विशाल रही है। लेकिन चंद्रवंशियों के रक्त में कोई बदल नहीं हुआ। उनकी आत्मा में कोई परिवर्तन नहीं आया। उनके सम्मुख नैतिकता मानो हार गई।

६१. भरतों का—मूल भारतीय प्रजा का। यहाँ की मूल प्रजा भरत नाम

---

१. श्री राधाकुमुद मुकर्जी, हिन्दू सभ्यता।

की थी। जब दिवोदास भारत में आया तब उनकी ५९-६३वीं पीढ़ी चल रही थी।[1] इस विषय को [illegible] में लेकर आवश्यक हो गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

६२-६३. चंद्रवंशी प्रजा में पुरुष जाति पर कोई बंधन नहीं था। फलतः नारी जाति का जीवन चिंताजनक रहा। वह केवल भोग्या बनकर रह गई। वैवाहिक जीवन की प्रथा होने पर भी अप्सराओं द्वारा चंद्रवंश में अनेक संतानें आईं। इसका उल्लेख हम इसके पूर्व कर चुके हैं। यही कारण है कि चंद्रवंशी शासन में नारी जीवन की उच्चता, पवित्रता, आवश्यकता आदि का कोई मूल्य नहीं हुआ। वर्ण संकर बढता गया। कन्याओं के गर्भ रहते आये! बिना विवाह किये पुरुष बाप बने। वह बाप तो कहला सके लेकिन नारी माता नहीं कहला सकी। ऐसा चित्र है चन्द्रवंशी शासित भारत का। क्या यह चित्र आर्यों का है?

६४-६५. वारवधू:संकर—वारवधू से हमारा तात्पर्य स्वर्ग की अप्सरा से हैं जो स्वर्ग की वेश्यायें थी। जिनका कोई पति नहीं होता था। वह सबके शैया की शोभा हो सकती थी। वह गणदेवों की गणिका थी। वार शब्द का अर्थ होता है दिन। दिवस। इसको देखते हुये कुछ गिनती के दिनों के लिये वधू यानी स्त्री अर्थात् भोग्या बनकर गण के एक एक पुरुष के साथ रहेगी ऐसी स्त्री।[2] ऐसी स्त्रियों का उपभोग चन्द्रवंशी भी लेते थे। यही नहीं इन्द्र स्वयं भारतवर्ष में अप्सराओं को भेजता था। चन्द्रवंशियों के लिये अप्सराओं का उपभोग सहज कार्य था।

तात्पर्य चन्द्रवंशी विलासी थे। अप्सराओं के कारण विवाहिता स्त्री को संतान प्रायः नियोग द्वारा ही प्राप्त होती रही। अतिरिक्त वर्ण संकर की बाढ़ आ गई। और इस तरह इस धरती की पवित्रता में धीरे-धीरे कमी आती रही।

६६-६७. यह कौरव पांडवों का आपस का झगड़ा था। इस झगड़े में कुरुक्षेत्र पर अनेक प्रांतों के निरपराध सैनिक जो वेतन भोगी थे, और अपने अपने राजा की ओर से उन्हीं के साथ युद्ध करने आये थे, मारे गये। कौरवों का मरना तो पतंगों जैसा ही हुआ है।

भारत में चन्द्रवंशी दिवोदास, ययाति के वंशधर यदु आदि, तथा गाधि पुत्र विश्वामित्र इस प्रकार अनेक समूह में आये। लेकिन जब से आये तब से आपस

---

१. देखिये मंथन भाग २ खण्ड २ वंशावली का परिशिष्ठ।

२. विशेष जानकारी के लिये देखिये पं० सातवलेकर कृत महाभारत की समालोचना। गणदेवों के भेद, गणों की स्त्री, गणिका आदि। पृ० ७० से ७८

में लड़ते आये हैं। यदु आदि दिवोदास के विरोधी थे इसकी साक्षी ऋग्वेद देता है। दाशराज्ञ युद्ध में तो ययाति के समस्त पुत्र सुदास के विरोध में हैं। मतलब चन्द्रवंश में शुरूं से ही आपस में एकता नहीं थी। भ्रातृ भाव नहीं था। तब पांडवों तथा कौरवों को ही क्यों दोष दिया जाय ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

६८. **युद्ध तीसरा**—हमने महाभारत के युद्ध को तीसरा महायुद्ध माना है। चन्द्रवंशियों में जब वे भारत आये तब दो महायुद्ध हुये हैं, जिनका वर्णन ऋग्वेद में आया है। इसके विस्तृत जानकारी के लिये देखिये मंथन, प्रथम भाग, कर्ण-कृष्ण।

६९. **तीसरे घर की आग**—तीसरे घर की आग से मतलब देवासुर संग्राम से है। विस्तृत जानकारी के लिये देखिये मंथन, प्रथम भाग, कर्ण-कृष्ण।

७०-७१-७२-७३-७४. प्रस्तुत प्रयास कर्ण को माध्यम बनाकर किया गया है। श्री उमाशंकर जोशी, तत्कालीन गुजरात युनिवर्सिटी के कुलनायक द्वारा लिखित 'प्राचीना' नामक पुस्तिका से प्रेरणा मिली। प्रेरणा विरोधाभास में मिली। मेरे सम्मुख प्रश्न कृष्ण चरित्र का आकर खड़ा रहा। साथ ही कर्ण के चरित्र को भी देखना था। कवि ने अंत में कर्ण को तो संभाल लिया लेकिन कृष्ण को संभाल सकने में असमर्थ रहा। तब वास्तविकता क्या है इसे देखने के लिये महाभारत का अध्ययन आरम्भ किया। अनेक प्रतियाँ देखीं। भंडारकर द्वारा संशोधित महाभारत भी देख लिया और एक दिन कलम चल पड़ी। भंडारकर का महाभारत अभी बहुत शल्य चिकित्सा की अपेक्षा करता है।

मैंने अपने प्रयास में अपने को तटस्थ रखा है। लेकिन महाभारत की अनेक विकृतियों एवं भ्रांतियों को दूर करने का प्रयत्न अवश्य किया है। योंही महाभारत आख्यानों, उपख्यानों से भरा पड़ा है। मूल व्यास के 'जय' का उसमें मानो विलीनीकरण हुआ है। अतः यह ग्रंथ शोध मांगता है।

जब कर्ण के लिये कलम उठाई तो उसे रोक नहीं सका। फलतः इस मंथन की मंथन माला बन गई। इसमें कर्ण के साथ हुयी तीन मुलाकातें आई हैं। उन्हीं को हमने प्रधानता दी। प्रेरणा कृष्ण कर्ण की मुलाकात से ही मिली। अतः आगे भी कुन्ती और भीष्म की मुलाकातें ली गईं। यह तीन प्रसंग कर्ण के जीवन में नहीं आते तो स्यात् कर्ण पात्र कहीं विलीन हो जाता।

तीनों मुलाकातें तीन तरह की है। 'कर्ण कृष्ण' के प्रकाशन के पश्चात् एक पत्र में स्व० काका कालेलकर जी ने चेतावनी दी कि, कुंती में तुम्हारी कसौटी है। कृष्ण-भेंट में तो तर गये। यथा समय विद्वान इस कृति का उचित मूल्यांकन

करेंगे ही लेकिन आगे मां का रिस्ता नाजुक है, कैसे संभालोगे अपने आप को? परिणाम यह हुआ कुंती का प्रयास तीन खण्डों में बंट गया। तीसरी भेंट है पितामह भीष्म से। तीनों की तीन विशेषतायें हैं। प्रथम भेट में सम्मुख एक इतिहास प्रसिद्ध, तेजस्वी, कूटनीतिज्ञ खड़ा है कर्ण के, दूसरी भेट में जननी और तीसरी भेट में परिवार का सर्वश्रेष्ठ, ज्येष्ठ पुरुष भीष्म। सभी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत हुये हैं। विद्वान पाठक निर्णय लेंगे। अपना मंतव्य देंगे कि यह विवेचन कैसा रहा?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तीनों में प्राचीन इतिहास के विकृतीकरणपर सूक्ष्म दृष्टिपात किया गया है। प्राचीन भारत के इतिहास के लिये अन्याय हुआ है, यह कहा गया है और उसके सुधार की माँग की गई है। अन्तिम भाग में बड़े भाई को युधिष्ठिर द्वारा श्रद्धांजलि दिलवाई है कुंती के कहने से। प्रस्तुत प्रयास वहीं है।

७५. उगते सूरज के पुजारी—अर्थात् भाट-चारण। इनके विषय में हम पीछे कह चुके हैं। निश्चय ही महाभारत में समय समय पर आनेवाली बाढ़ के कारण अनेक पात्र बिगड़ चुके हैं उनमें पराजित पक्ष के समस्त वीरों के साथ कर्ण भी पीसा गया है।

महाभारत यह कौरव पांडवों का व्यास द्वारा लिखित वीर काव्य या जय ग्रंथ नहीं है। जय में तो केवल ८८०० ही श्लोक है।[१] इसका दूसरा संस्करण वैशंपायन द्वारा हुआ है, तब उसमें २४००० श्लोक हो गये। अर्थात् यह सब हुआ आख्यानों, उपाख्यानों के कारण। इसके बाद का तीसरा संस्करण है सौती का। इसमें हरिवंश का समावेश किया गया है। हरिवंश महाभारत का खिल भाग ही कहलाता है। जिसके नेतृत्व में, मार्ग दर्शन में, यह युद्ध खेला गया है उसके वंश का चरित्र वर्णन इसमें है। यहाँ श्रीकृष्ण का संबोधन हरि है। इस तृतीय संस्करण में सौती का हाथ रहा है। सौती का समय तीसरी शताब्दी का माना जाता है।[२] इसके बाद भी इस ग्रन्थ में क्षेपक आते गये हैं। फलतः अनेक भ्रांतियों एवं विकृतियों का जन्म सुलभ हो गया। उपाख्यानों, आख्यानों की शैली अपनाने के कारण उसका स्वरूप मनोरंजन का बन गया। जहाँ मनोरंजन आ गया वहाँ इतिहास ( वस्तुस्थिति ) तिरोहित हो जाता है। महाभारत की यही स्थिति हुई। इतिहास कोसों दूर चला गया। हमने ऐसी आवश्यक परिस्थिति में अपने को तटस्थ रखकर इतिहास में आई भ्रांतियों को दूर करने का प्रयत्न किया है। तथा मित्रों के कहे अनुसार समय-समयपर लेख

---

१. देखिये हमारी लेखमाला सेट नं २ संशोधन का संशोधन।

२. महाभारत की समालोचना ले० सी० बी० वैद्य।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी लिखे हैं[१]। यों मंथन माला के पहले महाभारत के अनुशीलनात्मक अध्ययन का सुअवसर मुझे प्राप्त हुआ। साथ ही अपने पात्रों के माध्यम से प्राचीन इतिहास के धूमिल पृष्ठों को अपनी समझ के अनुसार कुछ स्वच्छ भी कर सका। विकृत पृष्ठों को उचित दिशा में मोड़ सका। भ्रांतियों को विद्वद् भोग्य वाणी में दूर कर सका। जो भी बन सका विद्वानों के सामने हैं।

७६. स्वजन की—कर्ण की। कर्ण श्रीकृष्ण के लिये स्वजन ही था। बुआ का बेटा भाई था। आयु में भी ज्येष्ठ था। गुणों में भी कम नहीं था।

७७. अभागिन—कुन्ती।

७८. धार्तराष्ट्र—धृतराष्ट्र का अपत्य। धृतराष्ट्र के पुत्र अपने पिता के नामपर धार्तराष्ट्र कहलाये। जैसे पांडु के पांडव।

७९. सुर सरिता—गंगा।

८०. कितने राज सिंहासन—लगता है महाभारत युद्ध में कुल मिलाकर २२३ प्रदेशों के राजा आये थे। उनमें से कोई जीवित नहीं लौटा।

८१. अठारह दिन—महाभारत के आधार पर अठारह दिन में इस युद्ध की समाप्ति होती है। १७ वें दिन चौथे प्रहर में कर्ण वध होता है। १८ वें दिन दो पहर के समय दुर्योधन भी मारा जाता है। मतलब १७½ दिन में युद्ध समाप्त हुआ है। लगता है हमारे प्राचीन साहित्यिकों को, उन ऋषियों को, १८ का अंक बहुत प्रिय लगता है ऐसा प्रतीत होता है। १८ दिन में महाभारत युद्ध समाप्ति, १८ अध्याय, १८ पर्व तात्पर्य यह १८ का अंक कुछ रहस्यमय लगता है, जो हो। इस युद्ध को हमारे विद्वान मित्र श्री ग० वा० कवीश्वर ने ३७ दिन में समाप्त हुआ ऐसा कहा है। एक दिन युद्ध, दूसरे दिन विश्रांति इस प्रकार आपने सयुक्तिक सिद्ध कर दिखाया है। इतिहास संशोधकों को यह पुस्तक अवश्य देखनी चाहिये, उसका चिंतनात्मक अध्ययन करना चाहिये ऐसा हमारा मत है।

८२. महाभारत युद्ध में से पांडव और उनकी सेना अर्थात् कितनी है यह तो नहीं कहा जा सकता लेकिन कुछ अवश्य बची होगी। कौरव पक्ष में कृपाचार्य, कृतवर्मा, संजय युयुत्सु आदि लोग बचे हुये मिलते हैं।

८३. महाभारत युद्ध के शुरूआत में ही पार्थ ने हथियार डाल दिये और मैं युद्ध नहीं करूँगा ऐसा स्पष्ट कह गया। इसलिये कि स्वजनों को मारकर मुझे राज्य नहीं चाहिये। युधिष्ठिर को इसका स्मरण हो आता है।

---

१. देखिये हमारे प्रकाशित लेखमाला का सेट नं० २।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

८४. द्वापर युग मानव प्रगति का युग कहा जाता है। इसके विस्तृत जानकारी के लिये देखिये मंथन भाग २ खण्ड २।

८५. हानि—अठ्ठारह अक्षौहिणी में कितनी जीव हानि हुयी इसके लिये देखिये मंथन, प्रथम भाग पृ० ४०८। यह संख्या और भी शोध माँगती हैं।

८६. रोग—महाभारत युद्ध का अर्थ, रोग के ऊपर औषधि, यानी उपचार नहीं हुआ। रोग कुछ और था, औषधि कुछ और की गई। आवश्यकता थी रोग पर आक्रमण करने की। यहाँ आक्रमण रोगी पर किया गया। प्राणोत्क्रमण रोगी का हो गया और रोग जीवित रह गया। सच तो यह है महाभारत कालीन भारत, समाज सुधार की अपेक्षा करता था, उसकी उपेक्षा हुई। किसी समाज सुधारक की प्रतीक्षा थी। यदा यदाहि·········· की वाणी यहाँ निरर्थक दिखाई दे रही है। परित्राणाय साधुनाम्··········· भी ऐतिहासिक उत्तर की अपेक्षा करता है।

८७. युधिष्ठिर युयुत्सु[१] को लेकर कौरवों का श्राद्ध करने के लिये गंगा तट पर आता है। श्राद्ध का कार्य संपन्न हो जाता है। युधिष्ठिर शांतिकी सांस लेता है, कि इतने में कुंती आती है। चेहरे पर अपार वेदना है। आंखें भरी हुई हैं। बेटे के पास खड़ी हो जाती है। घबराई हुई, कुछ डरी हुई सी मुद्रा है। दृष्टि जमीन पर लगी है। वातावरण शोकपूर्ण तो है ही। असंख्य निरपराध मानवों की निर्मम हत्या हुई है। दोनों दल के स्वकीय, ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, गुरुजन, अभिमन्यु जैसा एकमेव कुलदीपक, वह भी युद्ध में मारा गया है। स्त्री का हृदय मूल में ही कोमल होता है। वह थोड़ा भी दुःख सहन नहीं कर सकता, आंखें गंगा जमुना बहाती हैं। कुंती की यही स्थिति थी। उसे देखकर औपचारिक शब्दों में धर्मराज जननी को दिलासा देने का कार्य करता है।

८८. नायक—अर्थात् श्रीकृष्ण ! इस खेल का खिलाड़ी। महाभारत युद्ध समाप्ति पश्चात् प्रसन्न नहीं है। यह विचारणीय है।

८९ हस्तिनगर—हस्ति नाम के राजा द्वारा बसाया हुआ नगर[२]। यह नगर चन्द्रवंश के भारत आगमन पश्चात् ३०वी पीढ़ी में बसाया गया है। इसके

---

१. धृष्टराष्ट्र की वैश्यपत्नी द्वारा उत्पन्न पुत्र।

२. लगता है यह नाम हस्तिनागपुर होना चाहिये। यह मूल नागपुर नगर होना चाहिये। यहां नाग जाति का शासन होना चाहिये। क्योंकि नाग चंद्रवंशी प्रजा के पहले भारत में आ चुके थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बाद पंचाल में पाँच जनपदों का निर्माण हुआ और इस प्रकार पौरव वंश अपनी वसाहत कायम कर सका। वसाहत तो क्या, शासन कायम कर दिया है। लेकिन अभीतक भारतीयों से इनके युद्ध चालू थे। दिवोदास के पश्चात् १४ वीं पीढ़ी चल रही हैं, पुरुवंशी दाशराज्ञ युद्ध के समय ही अलग हो गये थे। अब वे स्थिर हो गये। हस्तिनगर की स्थापना हस्तिनापुर के नाम से हुई। इसी हस्ति के बाद कुरु नाम का व्यक्ति होता है, और तब पौरव, कौरव नाम प्राप्त करते हैं।

पांडु की मृत्यु के पश्चात् सत्रहवे दिन कुंती पांचों संतानों को लेकर हस्तिनापुर आती हैं। ये लोग हिंदुकुश पर्वत पर निवास में थे। उसी पर्वतपर तब देव, गंधर्व, किन्नर और अप्सराओं का निवास था। पांडवों के जन्मोत्सव में उनका नृत्य, गान होने का उल्लेख महाभारत करता है। जब पांडव हस्तिनापुर में आये तब धर्मराज १७ भीम १६ और पार्थ १५वे वर्ष में पदार्पण कर चुका था। माद्री के जुड़वा बेटे १४/१४ वर्ष में प्रवेश कर गये थे। जब अर्जुन १४ वर्ष पूर्ण कर पंद्रहवे वर्ष के प्रथम दिवस के सूर्य को देखता है, और उस दिन उसका जन्म दिन मनाया जाता है, उसी दिन पांडु की मृत्यु होती है।

हस्तिनापुर आने के पश्चात् एक वर्ष तक बच्चों की शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया। उनका समय गिल्ली डंडा खेलने, और धूल उड़ाने में ही बीत गया। तत्पश्चात् द्रोणाचार्य के आगमन के कारण शिक्षालय का उद्घाटन हुआ। शिक्षा-सत्र तेरह वर्ष तक चला। इस अवधि में कौरव और पांडवों के बीच वैमनस्य आ गया। कटुता का उफान आ गया था। उनकी शत्रुता परिपक्व हो गई थी। इसपर द्रोणाचार्य, कृपाचार्य या भीष्म पितामह किसी ने कोई ध्यान नहीं दिया। द्रोणाचार्य परिस्थिति को जानते अवश्य थे क्योंकि यह वैमनस्य उन्हीं के कारण आ गया था। शिक्षा के विषय का पक्षपात, अर्जुन के प्रति अधिक स्नेह भाव, यही कारण था कि कौरव और पांडवों में शत्रुता आ गई थी।

रंगभूमि के समय यह रहस्य स्पष्ट हो गया था। सभा में भीष्म विदुर, धृतराष्ट्र, द्रोण, कृप सभी थे। लेकिन इस वैमनस्य की चिंता किसी ने नहीं की। रंगभूमि के पश्चात् राजा द्रुपद को जीवित पकड़कर लाने का कार्य अर्जुन को करना था। उसी के द्वारा हुआ। गुरुदक्षिणा द्रोणाचार्य को चाहिये थी। वह इस प्रकार प्राप्त की गई।

अब तक हस्तिनापुर का राज सिंहासन खाली था। अब युधिष्ठिर को युवराज बनाया गया। लेकिन तुरंत ही पांडवों के नाश की योजना बनाई गई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाक्षागृह का निर्माण हुआ। पांडवों को उसमें निवास करने का आदेश हुआ। विदुर की कृपा से पांडव बच निकलें। अज्ञातवास में समय बिताना पड़ा कि द्रौपदी के स्वयंबर की घटना हुई। अर्जुन के गले में द्रौपदी ने वरमाला डाली। पांडव प्रकट हो गये। इसके पूर्व वे लाक्षागृह में मरचुके थे। उनकी श्राद्ध क्रिया भी संपन्न हो गई थी। लेकिन इधर वे जीवित हैं, द्रौपदी के साथ अर्जुन का विवाह हो गया है। पंचाल नरेश से अब पांडवों को स्नेह संबंध आ गये है, यह ज्ञात होते ही उन्हें हस्तिनापुर लाया गया। भीष्म ने विदुर को भेजा। पांडवों के हस्तिनापुर आते ही आज्ञा हुई, आप खांडवप्रस्थ जला दो और वहां अपना निवास बनाओ।

इसमें राज्य का बटवारा तो हुआ नहीं। महाभारतकार कहता है राज्य का बटवारा हुआ। लेकिन कैसे ? समझ में नहीं आया। तुम जंगल जलाओ। मेहनत करो। बांध काम भी स्वयं करो, अपना आवास बनाओ। क्या यही है राज्य का बटवारा ? यहाँ पांडवों के प्रति पुनः पक्षपात नहीं हुआ ? यहाँ यह भी ध्यान में रखना आवश्यक है कि इस समय पांडवों ने कृष्ण की सहायता से, सहयोग से, सौहार्द्र से सब कुछ किया क्यों कि तब श्रीकृष्ण पांडवों के साथ हैं। पंचाल नरेश की राजधानी से वें पांडवों के साथ हस्तिनापुर आये हैं और यह सब व्यवहार देख रहे हैं। समझ रहे हैं।

पांडवों ने अपने बलपर राज्य निर्माण किया। कृष्ण का सदा प्रत्येक कार्य में सहकार रहा ! यहाँ पांडवों ने तेईस वर्ष तक राज्य सुख का उपभोग किया। अपना जीवन व्यवस्थित किया। राज्य कारभार व्यवस्थित किया। लोकप्रियता प्राप्त की। जहाँ तहाँ पांडवों के गुणों का बखान होने लगा। इनकी राजधानी का नाम इन्द्रप्रस्थ था। इन तेईस वर्षों में इन्द्रप्रस्थ और हस्तिनापुर के बीच कोई अनवन नहीं दिखाई देती। तो हस्तिनापुर से किसी ज्येष्ठ, श्रेष्ठ पुरुष का इस बीच इन्द्रप्रस्थ में कभी आगमन भी हुआ नहीं। परिवार का जवाबदार व्यक्ति भीष्म है। पांडु के प्रति भीष्म के मन में अपार स्नेह था वैसा उन्होंने कर्ण से स्वयं कह बतलाया है। लेकिन पांडु के बच्चें किस स्थिति में हैं यह भी भीष्म ने कभी आकर देखा नहीं। भीष्म का यह व्यवहार खटकता है।

इसके पश्चात् श्री कृष्ण की सलाह से पांडवों ने राजसूय यज्ञ किया। भारत की चारों दिशाओं में विजय प्राप्त की। अंत में विजयोत्सव मनाया गया। करद राजा उत्सव में आये, हस्तिनापुर भी आमंत्रण भेजा गया। दुर्योधन, भीष्म, कर्ण आदि सभी उत्सव में आये। पांडवों का बढ़ता ऐश्वर्य और कीर्ति देखकर दुर्योधन के मन में ईर्ष्या जागी। वह यह सह नहीं सका। शकुनि की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सलाह से जुए का कार्यक्रम बनाया गया। पांडवों का सारा राज्य छीन लिया गया। इस समय श्रीकृष्ण उपस्थित नहीं थे। और इसके बाद पांडवों पर क्या गुजरी है प्राय: पाठक जानते ही हैं। यह है पांडवों का हस्तिनापुर आने से लेकर महाभारत युद्ध पूर्व तक यानी वनवास तक का जीवन दर्शन।

**९०. प्राप्त करो जय**—कुन्ती ने श्रीकृष्ण द्वारा अपने बेटों को संदेश भेजा था। कहा था माधव ! धर्म से कहो—तुम्हारे धर्म की बड़ी हानि हो रही है। तुम उसे व्यर्थ नष्ट मत करो। जो स्त्री दूसरे के आश्रित[1] होकर जीवन निर्वाह करती है उसे धिक्कार है। दीनता से प्राप्त हुई जीविका की अपेक्षा मर जाना ही उत्तम है।

यदि ऐसा समय आनेपर भी पुत्र युद्ध नहीं करेंगे तो वह व्यर्थ बीत जायेगा। पुत्रो ! तुम्हें तो समय आनेपर अपने प्राणों को भी त्याग देने के लिये उद्यत रहना चाहिये। माद्रेयों से कहना, तुम प्राणों की बाजी लगाकर भी पराक्रम से प्राप्त किये भोगों को ही ग्रहण करना।

कृष्ण। वीर अर्जुन से कहना कि पुत्र' तुम द्रौपदी के बताये हुये मार्ग पर चलो।[2]

द्रौपदी केवल युद्ध चाहती है इसका उल्लेभ अगली टिप्पणी में किया जा रहा है।

**९१. केशव, कृष्णा के आगे**—केशव और द्रौपदी के आगे मेरी एक न चली ऐसा धर्मराज कुन्ती से कह रहा है। जब कृष्ण सन्धि के लिये हस्तिनापुर जाने की तैयारी करते हैं और जाने से पूर्व द्रौपदी से मिलते हैं, तब द्रौपदी उनसे कहती है—कृष्ण ! आप राज्य लिये बिना ही सन्धि करना चाहें तो आप किसी तरह स्वीकार न करें। पांडव सृन्जय[3] वीरों के साथ क्रोध में भरकर दुर्योधन की सेना का सामना कर सकते हैं।

कौरवों के साथ साम, दान, नीति का प्रयोग करने से कोई लाभ नहीं है। अतः उनपर कोई कृपा नहीं करना।

---

१. कुन्ती विदुर की आश्रित है उसका उसे पश्चाताप हो रहा है।
२. म० भा० उद्योग अ० ८३
३. सृन्जय वीर बहुत ही बलवान है। इसमें शंका नहीं। ऋग्वेद में भी इनका बोलबाला है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वध्य का वध न करने से भी दोष की प्राप्ति होती है। यह बात धर्मज्ञ पुरुष मानते हैं।[1]

इस में द्रौपदी कृष्ण युद्ध की ही सोचे यही चाहती है वह कहता है— पांडवों, पांचालों, और यदुवंशियों के जीते जी मैं पापी कौरवों की दासी बनी, उसी रूप में मुझे सभा में उपस्थित होना पड़ा।

मैं धर्मतः भीष्म और धृतराष्ट्र दोनों की पुत्रवधु हूँ। उनके सामने ही मुझे बलपूर्वक दासी बनाया गया।

ऐसी दशा में दुर्योधन एक क्षण भी जीवित रहता है तो अर्जुन के धनुष बाण और भीम के बलको धिक्कार है।

द्रौपदी और आगे कहती है—

कृष्ण ! यदि भीम और अर्जुन कायर होकर कौरवों के साथ संधि की कामना कर रहे हैं तो मेरे वृद्ध पिताजी अपने महारथी पुत्रों के साथ कौरवों से युद्ध करेंगे।

मेरे पांच महारथी पुत्र भी वीर अभिमन्यु को प्रधान बनाकर कौरवों के साथ युद्ध करेंगे।

मैं दुःशासन की भुजा को धूलि में लौटती हुई देखूंगी तभी मेरे मन को शांति मिलेगी ( म० भा० उद्योग अ० ८२ )। तात्पर्य चाहे पांडव युद्ध करें या न करें लेकिन द्रौपदी युद्ध चाहती है।

९२. कुंती ने पुत्रों को युद्ध करने का ही आदेश दिया है, भेजा है। जिसका उल्लेख पीछे किया गया है। विस्तृत जानकारी के लिये देखिये म०भा० उद्योग अ० ८३।

९३-९४-९५. मैंने ही तुम्हें युद्ध के लिये प्रेरित किया था इस बात को कुंती मान्य करती है। वह कहती है–तुमने मेरा कहा माना अतः तुम पर कोई दोष नहीं है।

९६. कुंती यह भी कहती है कि मुझ पर इस युद्ध का कोई असर नहीं हुआ ऐसी बात नहीं, और मैं किसी अन्य दुःख से व्याकुल हूँ यह भी सच है, लेकिन अभी मेरी विकलता का कारण इतना ही है यह मत मानना। मेरी विकलता का कारण कुछ और ही है। मैं वही कहने आई हूँ।

९७. कुंती अपने को अपराधी मान रही है। भारतीय नारी जो है वह।

९८. यहाँ कुंती की कर्ण के प्रति वत्सलता बोल रही है। इसकी ओर किसी का ध्यान गया नहीं इस बात का खेद है।

---

१. मतलब तुम धर्मज्ञ हो। अतः कौरवों को वध के योग्य मानकर उनका वध करो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

९९. उसकी मृत्यु जैसे हुयी वैसी अन्य किसी की न हो यही वह हृदय से कहती है। अर्थ यही हैं कि पुत्र की वत्सलता यह अन्याय देखकर मूक रुदन कर रही है। अंत में वह उसकी जननी है। इस पर विचार हो

१००. पहला स्वजन अभिमन्यु और दूसरे भीष्म पितामह।

१०१. मतलब मैं उसे मिलने गई थी। उसे समझाने का प्रयत्न किया था। लेकिन कुन्ती कहती है सफलता प्राप्त नहीं कर सकी।

१०२. सहोदर के नाते।

१०३. यह वाक्य कहते समय एक मां के हृदय की स्थिति कैसे हुई होगी ?

१०४. "उसे पार्थ ने मारा है" "तुमने उसके मृत्यु पर हर्ष मनाया" यह सुनकर।

१०५. जिनका वध न किया जा सके ऐसे। जिनमें आचार्य दोण, पितामह भीष्म, गुरु पुत्र अश्वत्थामा आदि तो निश्चय ही वध न करने योग्य कहलायेंगे।

१०६. भरत का—अर्थात् सूर्यवंशी दशरथनंदन कैकयी तनय भरत का। नियम के अनुसार राज सिंहासन का अधिकार ज्येष्ठ पुत्र की ओर जाता है। आर्य संस्कृति और संस्कारों का यह तकाजा है। उस दृष्टि से राज्याधिकारी राम है। दशरथ ने उसी नियम का पालन किया था। लेकिन कैकेयी द्वारा आपत्ति उठाई गई। मंथरा ने उसे सतर्क किया। और भरत को सिंहासन तथा राम को वनवास गमन का निर्णय लिया गया। लेकिन भरत ने सिंहासन स्वीकार नहीं किया। न लक्ष्मण ने अपना अधिकार दिखाया, तो शत्रुघ्न की भी दृष्टि सिंहासन पर न गई। सबका एक स्वर आया सिंहासन ज्येष्ठ पुत्र का है। लक्ष्मण राम के साथ बनवास में चला गया। भरत नन्दिग्राम निवासी बना। शत्रुघ्न अयोध्या में रहा ! सिंहासन पर राम की पादुकायें थी। राज्य वही करती थी। क्या ऐसा भी कोई महान त्याग का उदाहरण है दुनियाँ के इतिहास में ? वहाँ कौरव पांडवों के बीच राज्य के लिये महा रक्त पात हुआ। असंख्य निरपराध लोग मारे गये। धर्मराज के आखों के सामने यह दृश्य उभर आता है। सूर्यवंशी भरत का स्मरण उसको हो आता है।

१०७-१०८-१०९. शकुनि धृतराष्ट्र की पत्नी गांधारी का भाई था। कौरवों का मामा लगता था। गांधारी के विवाह के पश्चात् हस्तिनापुर के राजमहलों में उसका बेरोकटोक आवागमन था। दरबार, राजमहल, अंतःपुर सबमें उसकी उपस्थिति रहती थी। जैसे कौरव कुल की जबाबदारी भीष्म पर नहीं उसीके ऊपर आई है। गांधारी के विवाह पश्चात् भीष्म भी कुछ खोये-खोये

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से रहते थे। शकुनि दुर्योधन को अपनी इच्छानुसार नचाता था। जिसके आगे पितामह कुछ बोल नहीं पाते थे।

जब पांडवों के राजसूय यज्ञ महोत्सव का दृश्य उसने देख लिया। वह भी आश्चर्य में पड़ा। इधर दुर्योधन बेचैन रहने लगा। उसके लिये पांडवों का यह वैभव असह्य था। वह ईर्ष्या में डूब गया। किसी तरह से पांडवों का वैभव नष्ट हो जाय इसी चिंता में वह जलने लगा। उसे हस्तिनापुर के अस्तित्व के विषय में भी अब शंकायें आने लगी।

शकुनि कहने लगा—चिंता न कर! तू जानता है मैं अर्थशास्त्र विशारद हूँ। उत्तम प्रकार का जुआड़ी हूँ। मेरे हाथों में जादू है। मैं पांडवों का यह वैभव जुये में जीत लूंगा। तू जुयेका आयोजन कर। उन्हें आमंत्रित कर। लेकिन पांडवों को जुये का आमंत्रण लेकर जायेगा कौन? भीष्म मन मसोस कर रह गये। लगता है इस अवसर पर कर्ण ने भी कहा, इस मार्ग का अवलंबन न करो। युद्ध का ऐलान करो। हम तुम्हें सर्वतोमुखी सहायता देगें। मित्र! यह मार्ग अनुचित है। लेकिन उसकी भी एक न चली। पांडवों के लिए आमंत्रण लेकर विदुर को भेजा गया।

साधुमना विदुर जो पांडवों के चाचा भी थे आमंत्रण लेकर गये। जुये का आमंत्रण स्वीकारो नहीं यह भी सलाह दी। लेकिन युधिष्ठिर ने कहा जुआ और युद्ध का आमंत्रण स्वीकारना आवश्यक हो जाता है।

सभी भाई और द्रौपदी के साथ इन्द्रप्रस्थाधिपति जुआ खेलने आया। यहां अब जुआ खेलना था राजा को राजा के साथ, यानी दुर्योधन के साथ, लेकिन दुर्योधन ने कहा मुझे खेलना आता नहीं मेरी ओर से मेरे मामा शकुनि खेलेंगे। तब युधिष्ठिर को भी अपना प्रस्ताव रखना आवश्यक था। क्यों कि उसका भी एक हित चिंतक था और जुये का खिलाड़ी तो नहीं लेकिन चौंसठ कला का ज्ञाता श्रीकृष्ण। कहना था, तो मैं भी मेरी ओर से श्रीकृष्ण को खेलने के लिए बुलाता हूँ। लेकिन युधिष्ठिर से यह बना नहीं। यहीं उसकी भूल हो गई। और आगे क्या हुआ पाठक जानते हैं। द्रौपदी के प्रश्न का उत्तर भी युधिष्ठिर से देते नहीं बना। फलतः इस ज्येष्ठ कुल वधु की अवहेलना हुई।

११०. सुयोधन ने कहा था कि वनवास और अज्ञातवास पूर्ण करने पर तुम्हारा राज्य मैं लौटा दूंगा। लेकिन अपने बचन पर वह अटल नहीं रहा। श्रीकृष्ण संधि करने आये तो उनसे मानवोचित व्यवहार तक नहीं किया। द्रौपदी ने पांच गांवों का प्रस्ताव भेजा वह भी मान्य नहीं किया। बल्कि सूई के

नोंकपर आनेवाली धरती भी नहीं दे सकूँगा। यह उत्तर दिया। फलतः युद्ध अनिवार्य हुआ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१११. दानव—यहाँ तिरस्कार के रूप में हमने इसका प्रयोग किया है। जब कि दन् धातु से यह शब्द एक और से दान धातु का प्रतीक है। दूसरी ओर दनु के पुत्र दानव इस अर्थ में। दैत्य और दानवों को आदित्य भक्तों ने हमेशा निंद्य कहा है। वस्तुतः सत्य कुछ और था।

११२. इसपर कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है, ऐसा मुझे लगता है।

११३-११४-११५. यह शंका सभी को आ सकती है कुंती को ही आनी चाहिये ऐसा बात नहीं है। कुंती का कहना यही है कि कर्ण की मृत्यु उसके मृत्यु दिवस के पूर्व हुयी है। उसकी आत्मा भटकती रहेगी।

११६. जलांजलि कर्ण को दिलवानी है। यही कहने के लिये कुंती आई है। लेकिन सहज शब्दों में नहीं कह पाती। एक बार उसने कहा—वह मृत्यु[1] के पूर्व गया। दूसरी बार—उसे पार्थ ने मारा[2] है। अब कहती हैं वह निःशस्त्र[3] था उसे निहत्था मारने में आया। उस निःशस्त्र पर पार्थ ने शस्त्र चलाये। केशव ने उकसाया। तात्पर्य कुंती युधिष्ठिर को यह कहना चाहती है वह निहत्था मारा गया है। अतः निहत्थे कौन-कौन मारे गये यह सोचने पर उसे कुंती ने प्रेरणा दी। बाध्य किया ऐसा कह दें तो भी उचित ही है।

११७ सभी अग्रणी—निहत्थे मरनेवाले सभी अग्रणी हैं। बढ़े चढ़े हैं। भीष्म, द्रोणाचार्य, कर्ण तीनों उसके सम्मुख आकर खड़े रह गये प्रश्नवाचक बनकर। कृष्ण जानते थे कि भीष्म, द्रोण, कर्ण के जीवित रहते मैं पांडवों को विजयी नहीं बना सकूँगा। अतः जैसे भो हो छल, कपट करके ये तीनों कंटक दूर करने होंगे। और महाभारत के पाठक जानते हैं भीष्म, द्रोण, कर्ण तीनों को छल से ही, निहत्था बनाकर ही मारा गया है। युधिष्ठिर के सम्मुख ये चित्र साकार बनकर खड़े हो जाते हैं।

११८-११९. युद्ध के आरम्भ के १० दिन तक भीष्म ने युद्ध किया। जब तक भीष्म रणभूमि पर है, कर्ण वहाँ उपस्थित नहीं है। भीष्म ने उसका अपमान किया था। सभा में अनेक वीर उपस्थित थे, सबके सम्मुख कर्ण को नीचा दिखाया था। जब कि यह महाभारतकार की यह हरकतें विचित्रता से कम नहीं है।

---

१. पद्य ११८।

२-३. पद्य १२२।

ओ हो। कर्ण युद्ध क्षेत्र पर जबतक भीष्म जीवित है, तबतक नहीं है यह ऐतिहासिक सत्य है।
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वस्तुतः कर्ण भीष्म के पक्ष का वीर है। एकमेव तेजस्वी वीर। जिसका डर सदा शत्रु पक्ष को बना रहा है। भीष्म कहते हैं यह मेरी स्पर्धा करता है। लेकिन यह तो और भी अच्छा है। ऐसा एक वीर तुम्हारे संग्रह में है, तुम्हें और क्या चाहिये। उसे तो और भी उत्साहित कर देना चाहिये। लेकिन भीष्म का पिंड कुछ अलग मिट्टी का था। लगता है भीष्म को विश्वास हो गया था कि कर्ण अन्त में मेरे जीवन की तपस्या, नाम, कीर्ति, सब को मिट्टी में मिला देगा। भीष्म के सामने निश्चय ही यही प्रश्न खड़ा था। वर्तमान महाभारत के संस्करण के विवेचन से यही कहा जायेगा।

वह दुर्योधन से कहते हैं—मैं तो सर्वतोपरि तेरा ही हूँ। तेरे लिये ही हूँ, लेकिन मेरी एक शर्त है। "प्रथम कर्ण लड़ ले या मैं" हम दोनों एक साथ युद्ध नहीं कर सकते। मुझे यह कदापि मान्य नहीं है। महाभारत यही कहता है। उद्योग पर्व १५६/२४

कर्ण यदि दुष्ट प्रवृत्ति का होता, निश्चय ही उच्छृंखल वृत्ति का होता, ज्येष्ठ-श्रेष्ठ लोगों को सम्मानित करना, उनका आदर करना, मर्यादा का पालन करना उसके जीवन में नहीं होता तो वह तत्काल कह देता कि, 'तो पितामह आप बैठे रहिये। पहले मैं ही युद्ध करूंगा।' लेकिन कर्ण से यह बना नहीं। कर्ण की भी अपनी एक विशेषता थी। उसने लाचार होकर कहा—पितामह! आपके इच्छा की पूर्ति हो। आपके रहते हुए मैं युद्ध स्थल पर नही आऊँगा। जब आप धराशाई हो जायेंगे तभी मैं युद्ध की बागडोर संभालूंगा।[1] अर्थात्

---

१. हम पाठको को याद दिलाना चाहते हैं कि महाभारत का वर्तमान संस्करण क्षेपक तथा पक्षपात पूर्ण है। उसमें केवल विजयी वीरो को ध्यान में लिया गया है, और भीष्म परिवार में ज्येष्ठ श्रेष्ठ है यही ध्यान रखा गया है तथा शेष पराजित पक्ष के उत्तम वीरों को भी कूड़ा कचरा मानकर अपनी कलम चलाई है। वस्तुतः कौरव पांडव चरित्र सूक्ष्म रूप से अनुशीलनात्मक चिंतन चाहता है। तटस्थ दृष्टि की मांग करता है। आज के किसी लेखक के लिये विजयी वीर पांडव काका के बेटे नहीं हैं। और कौरव पूतना की संतान नहीं है। हमें तो इतिहास का वास्तविक दर्शन करना है। मतलब हम यह कहना चाहते है कि भीष्म पूर्ण रूपेण दुर्योधन के थे। महाभारत कृष्ण-संधि पश्चात् दुर्योधन और भीष्म में जो संवाद हुआ है उसमें उसकी साक्षी देता है। तथा भीष्म यह भी

सेनापति पद को शोभित करूँगा। और इस तरह आरंभ के दिनों में कर्ण युद्ध क्षेत्रपर जब तक भीष्म जीवित थे नहीं जा सका। मतलब अपने मित्र के काम आने में कर्ण के दस दिन व्यर्थ गये। वह मन मारे रह गया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

---

जानते हैं सामने का पक्ष कपट करेगा। छल से ही कौरव पक्ष के वीरों को मारेगा और कर्ण असाधारण वीर है। मेरे बाद में कौरवों का हित चिंतक यही एक अकेला है। वह दुर्योधन का अनन्य मित्र है। उसके लिये वह चाहे सो कर सकता हैं। अतः ऐसे वीर को प्रथम दिवस युद्ध पर भेजना उचित नहीं है। उसकी रक्षा होनी चाहिये। भीष्म एक स्थान पर स्पष्ट कहते हैं, अर्थात् कठोर शब्द प्रयोग है। उसका रहस्य अभी तक कोई नहीं जान पाया। प्रसंग है रथि, अथिरार्ध अविरथि के परिचय का अध्याय १६५ उद्योग पर्व का। इसके बाद १६८ वे अध्याय में कर्ण को लक्ष्य करके भीष्म कहते हैं, अर्थात् कर्ण की भरपेट निंदा करते हुए। वह युद्ध में प्रथम दिवस नहीं आने पाये यही इसमें उनकी भावना है। लगता है कर्ण का एकमेव द्वेष्टा, शत्रु केवल भीष्म ही है। और वर्तमान महाभारत का संस्करण कहता भी यही हैं।

लेकिन महाभारत के संशोधक जरा तो ध्यान दे। अध्याय ६२ खोलकर देखें। उसी उद्योग पर्व का, और भीष्म का यह वाक्य जरा गंभीरतापूर्वक ले तो पता चलेगा कि भीष्म कर्ण को यों मरता देखना नहीं चाहते थे। उन्हें पूर्ण विश्वास था मैं, द्रोण और कर्ण तीनों कपट से मारे जानेवाले हैं तभी पांडवों की विजय होगी। कर्ण अभी बहुत कुछ कर सकता है। आयु अभी उसकी उतनी नहीं जितनी कि मेरी है। मेरा क्या अब ? मैं रहूँ या न रहूँ लेकिन कर्ण का रहना आवश्यक है। फिर भले ही वह भी मारा जाये लेकिन मेरे पूर्व नहीं। इसलिए भीष्म ने हर प्रकार से उसके साथ कटु व्यवहार किया। सर्वसाधारण पाठक वर्ग की दृष्टि से उसका अर्थ अलग है। लेकिन हमारी दृष्टि से अब उसका महत्व है। वे कर्ण को पीछे रखना चाहते हैं। अ० ६२ में वे कहते हैं, गुस्से में आकर, एक बुजुर्ग के नाते, अधिकारवश बनकर, कर्ण को अपना मानकर, जैसा हम अपने बच्चों पर खूब क्रोध करते हैं, जो नहीं सो बोल बैठते हैं। समय पर गाली देते है। थप्पड़ लगाते हैं। कर्ण के प्रति भीष्म का यही आत्मीयता का व्यवहार है अति कठोर बनकर के। वे कहते हैं—

कर्ण ! क्यों अपनी वीरता की डींग हांक रहा है। जान पड़ता है काल ने तेरी बुद्धि को ग्रस लिया है। आगे वे कहते हैं—"क्या तू नहीं

दसवें दिन चौथे पहर में भीष्म का पतन हुआ। वे शरों से बद्ध हो गये, कुछ न कर सकेंगे ऐसे स्थिति में आ गये। उनके प्राण जाने के केवल बाकी रह रहे थे। यही उनकी अवस्था थी। अतः अब कर्ण अपने मन की कर लेने में स्वतंत्र था। अब उस पर रोक लगानेवाला कोई नहीं था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रात्रि का नीरव समय देखकर कर्ण अकेले में भीष्म की भेंट हो इस दृष्टि से उनसे मिलने गया। भीष्म को प्रणाम किया। अपने नाम का उच्चार करके कहा, मैं कर्ण आपसे मिलने आया हूँ। मुझे अब युद्ध पर जाना है, आपसे शुभाशीष चाहता हूँ। मुझे विजयी होना है, मैं विजय चाहता हूँ। मुझे शत्रु पक्ष को पराजित करना है।

और कैसा आश्चर्य ? भीष्म ने कर्ण को जिन शुभाशिषों के और सम्मान के साथ युद्ध पर भेजा है, वह वर्णन तो पाठक स्वयं महाभारत में ही पढ़ लें। यही भीष्म व्यास के जय ग्रंथ का है, और यही कर्ण। शेष भीष्म और कर्ण तो सौती के तीसरे संस्करण का है।

अब दुर्योधन को ही नहीं समस्त वीर राजा और सैनिकों को विश्वास था कि कर्ण सेनापति बनेगा। सबने कर्ण का स्मरण किया। कर्ण को पुकारा। कहा—"कहाँ गया वह वीर, जो कह रहा था कि मैं भीष्म के पतन पर सेनापति बनूंगा।"

लेकिन कर्ण भी अलग मिट्टी का बना था। उसकी अपनी एक विशेषता थी।

---

जानता कि युद्ध में तुझ सरीखे प्रधान वीर के मारे जाने पर सारे धृतराष्ट्र पुत्र ही मृत प्राय हो जायेंगे।"

मतलब भीष्म चाहते है कर्ण युद्ध में जाने की जल्दी न करे। प्रथम मुझ जैसे वृद्ध को जाने दे। मरने दे। यह पीछे रहे। कौरवों की रक्षा करे। यह वाक्य निश्चय ही कृष्णद्वैपायन व्यास के जय ग्रंथ का है। भीष्म यही कह सकते हैं। और यही कारण है कि भीष्म ने युद्ध की शर्त रखी। वे यह भी जानते थे कि कर्ण मेरा अपमान नहीं करेगा। वह कभी नहीं कहेगा कि, 'तो मैं पहले लड़ लेता हूँ।' निश्चय ही भीष्म कर्ण की मृत्यु शीघ्र नहीं चाहते थे। वे कौरवों का उनके बाद का सही हितचिंतक केवल कर्ण को मानते थे। इसके लिये उन्होंने अपना हृदय कर्ण के सामने शरशैया पर रहते हुये जब कर्ण उन्हें मिलने जाता हैं तब स्पष्ट किया हैं। कृपया वह संवाद पाठक स्वयं पढ लें। हम यहाँ विस्तार नहीं चाहते। हमने भीष्म भूमिका स्पष्ट कर दी हैं। विवेकी विद्वान उस पर विचार करें। व्यास के 'जय' का भीष्म और कर्ण यही है। इतना ही कहना चाहता हूँ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अपनी मर्यादा थी । उसने आचार्य को सेनापति पद दिया । दुर्योधन भी नाराज हुआ । उसने उसे समझा दिया, आचार्य का ही यह अधिकार है उनके रहते मैं कैसे उनका अपमान कर सकता हूँ । कर्ण की यह उदारता विचार करने योग्य है ।

उसने आचार्य को सेनापति पद दिया । द्रोणाचार्य ने पांच दिवस युद्ध किया । वे भी कपट से पंद्रहवें दिन मारे गये । कर्ण को सोलहवें दिन सेनापति बनने का अवसर मिला । अब उसी का स्थान था यह । उसने सहर्ष स्वीकार किया । अट्ठारहवें दिन तीसरे प्रहर को युद्ध की समाप्ति हुयी । सत्रहवें दिन चौथे प्रहर सूर्यास्त के समय वह भी निहत्था मारा गया । और अट्ठारहवें दिन दुर्योधन को भी कपट से ही मार दिया ।

१२०. कर्ण सोलहवें दिन सेनापति बना । अपनी इच्छानुसार व्यूह बनाया । और जिस स्थिति में उसने युद्ध के लिये प्रस्थान किया पांडव, पांडव सेना और श्रीकृष्ण यह दृश्य देखते ही रह गये । अब कृष्ण ने अपने वीरों को सावधान किया । अर्जुन को अनेक सूचनायें दीं । उस दिन कृष्ण ने अर्जुन को कर्ण की दृष्टि से बचाये रखा । कर्ण को ऐलान करना पड़ा, कोई मुझे अर्जुन दिखा दे, मैं उसे मुह माँगा इनाम दूँगा । लेकिन कृष्ण भलीभांति जानते थे कि कर्ण के चुंगल से अर्जुन को बचाना आवश्यक है अतः वे उसे दूसरे मोर्चे पर ले गये । कर्ण से उस दिन तो बचा दिया ।[1]

अब सत्रहवां दिन आ गया । कर्ण के रथ पर शल्य सारथी बनकर आया । शल्य को सारथी के रूप में देखकर कृष्ण के छक्के छूट गये । एक बार तो वे भी हिम्मत हार गये । घबरा गये । क्योंकि शल्य कृष्ण से कम नहीं था सारथ्य में । कृष्ण इसी बात को जानते थे । उन्होंने अर्जुन को परिस्थिति से परिचित कराया और कह दिया कि अब मैं कहूँ वह करना है । आज का युद्ध कसौटी का है । शल्य मुझसे बढ़कर है रथ चलाने में । मैं उसके सामने फीका हूँ । वह अपने सेनापति का बचाव करेगा । अतः अब मैं कहूँ वैसा तुझे मानना होगा । चलना होगा ।[2] और इस तरह अर्जुन को इशारे पर चलने के लिये लाचार बना दिया गया ।

१२१. युधिष्ठिर को चिंता हो रही है कि माता किसका नाम बतायेगी ? माँ कहती है—उसको पार्थ ने मारा, वह निहत्था मारा गया, उसकी मृत्युपर शिविर में रात्रि को आनन्दोत्सव मनाया गया ।

---

१. विस्तृत जानकारी के लिये देखिये मंथन भाग ३ कर्ण भीष्म ।

२. कर्ण पर्व ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निःशस्त्र मारे जाने वाले वीर वीर थे। सभी बड़े-बड़े थे। जिनके जीवित रहते हमारी विजय असंभव थी। उनमें एक कर्ण भी था। रात्रि में आनंदोत्सव तो उसी की मृत्यु-दिवसपर मनाया गया। युधिष्ठिर को विश्वास होता जा रहा है कि सम्भव है माता कर्ण का ही नाम सुनायेगी। उसके मन में उथल-पुथल हो रही है। वह घबराया हुआ, अशांत मन, व्याकुल हृदय दिखाई पड़ रहा है। माता ने जो जो संकेत दिये हैं सभी कर्ण के लिये लागू होते हैं। इसलिए भी वह बहुत ही अस्वस्थ है। भयभीत है।

१२४ **ज्वाला तुमने भडकाई**—कर्ण पर्व में कर्ण और युधिष्ठिर का युद्ध हुआ। एक बार नहीं तीन-तीन बार युधिष्ठिर को मुँह की खानी पड़ी। युद्ध क्षेत्र से हटना पड़ा। अन्त समय जब बीच भीम आ गया तब युधिष्ठिर किसी प्रकार शिविर में पहुँचे। इधर युधिष्ठिर का रथ युद्ध क्षेत्रपर नहीं यह देखकर अर्जुन को चिंता हुई। उसने श्रीकृष्ण से कहा, युधिष्ठिर को देख लेना चाहिए। बीच में भीम मिला। उसने कहा युधिष्ठिर शिबिर में गये हैं। बुरी तरह से घायल हुये हैं। कारण कर्ण है। आप जाइये, उन्हें मिलकर आइये, मैं तबतक कर्ण से निपट लेता हूँ।

जब पार्थ और कृष्ण युधिष्ठिर से मिलने जाते हैं, तो युधिष्ठिर अर्जुन को गले लगाते हैं। उन्हें ऐसा विश्वास होता है कि अर्जुन कर्ण को मार कर आ गया है?[1] लेकिन जब उन्हें पता चला कि कर्ण अभी जीवित है तो वे अर्जुन की बुरी तरह से निन्दा करते हैं। उसके गांडीव को धिक्कारते हैं। यहाँ तक कि वे कहते हैं कुन्ती ने जब तेरा गर्भधारण किया तभी पांचवे महीने में उसका गर्भपात होता तो अच्छा होता—

मासेऽ पतिष्यः पंचमेत्व प्रकृच्छे नवा गर्भोऽप्य भविष्यः पृथायाः
तत्ते श्रमो राजपुत्रा भविष्यन्न संग्रामाद दुरात्मन ।। वन ३७।१५ ।।

हे दुरात्मा! तुम कुन्ती के गर्भ से पाँचवें महिने में नष्ट हो जाते अथवा उनके अत्यन्त दुखदायक गर्भ से (प्रसब पीड़ा से ?) जन्म न लेते……।[2]

और इस पर गांडीव के अपमान के कारण अर्जुन युधिष्ठिर की हत्या करने को तैयार होता है। श्रीकृष्ण बीच बचाव करते हैं। और कर्ण वध का वचन देकर वहाँ से चल देते हैं। तीसरे प्रहर की घटना है यह।

---

१. वनपर्व अ० ४६ पं० सातवलेकर।

२. वनपर्व अ० ४८ पं० सातवलेकर! यह सम्पूर्ण अध्याय अर्जुन-निंदा से भरा पड़ा है। ऐसी निन्दा कि जो असह्य है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मतलब कर्ण मारा जाना चाहिए यह ज्वाला युधिष्ठिर ने भड़काई। और उसी दिन चौथे प्रहर सूर्यास्त के समय कर्ण निहत्था मारा गया।

१२२. युधिष्ठिर को कर्ण के कारण वनवास और अज्ञातवास में नींद नहीं आई। कर्ण के कारण मैं तेरह वर्ष तक सुख से सो न सका, यह वह कह बतलाते हैं। तात्पर्य कर्ण की वीरता से वह भलीभाँति परिचित थे। कर्ण ने उन्हें मानसिक रूप से बेचैन बना रखा था।

१२३. भीष्म, द्रोणाचर्य और कर्ण।

१२५. वस्तुतः कर्ण ही सच्चा पार्थ था। पृथा का ज्येष्ठ और प्रथम पुत्र। इसलिये भी पार्थ कहलाने का प्रथम अधिकार उसी की ओर जाता है ऐसा हमें लगता है।

१२६. एक वही निःस्वार्थ—महाभारत के युद्ध में कर्ण का अपना कोई स्वार्थ नहीं था। उसे कोई पुरस्कार मिलनेवाला नहीं था। और नहीं उसकी उसने कभी चाह की थी। उसने दुर्योधन से मैत्री का रिस्ता जोड़ा था। उसका एक ही कारण रंगभूमि के समय अर्जुन ने उसका अपमान जो किया था। उसे कहा था "तुम यहाँ कैसे आये? क्यों आये? तुम्हें किसने बुलाया था?" यह कहने का अर्जुन को क्या अधिकार था? दोनों एक गुरु के शिष्य हैं, एक पाठशाला में पढ़े हैं, परीक्षा के समय क्या किसी को आमंत्रण देना होता है? या तो ऐसा अर्जुन ने कहा नहीं वह क्षेपक है ऐसा मान लें, अथवा कहा है तो अनुचित है। कर्ण बहुत बाद में आया, यह सच है। सबने अपनी-अपनी शिक्षा का दर्शन प्रेक्षकों को करा दिया था। अर्जुन पीछे रखा गया था। अच्छे विद्यार्थी होने के कारण। लेकिन कर्ण भी उतनी ही योग्यता का एक विद्यार्थी अभी शेष था। वहाँ कर्ण का जो चित्र आलेखा गया है वह निश्चय ही व्यास के 'जय' ग्रन्थ का कर्ण है, शेष कर्ण सौती के महाभारत का है। वैशंपायन के भारत में भी वह इतना बिगाड़ा गया नहीं होगा। जो हो, कर्ण को दुर्योधन ने आलिंगन दिया। कहा, मित्र मेरा सब कुछ आपका है। उसका तुम चाहे जैसा उपभोग करो। इसका उल्लेख हमने पीछे किया है। कर्ण ने कहाँ, मेरी तो एक ही इच्छा है "अर्जुन से द्वंद्वयुद्ध करने का अवसर मुझे देना" इसके अतिरिक्त मुझे और कुछ नहीं चाहिए। बदले में मैं सर्वस्व तेरा हूँ। मेरा सर्वस्व तेरा है। कर्ण ने निश्वार्थ भावना से दुर्योधन की मैत्री निभाई है। कर्ण के अतिरिक्त दुर्योधन का एक मित्र और था, अश्वत्थामा।

१२७. कुन्ती युधिष्ठिर से आँख नहीं मिला सकती। धरतीपर दृष्टि है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कैसे आँख मिला सकती है ? अंत में भारतीय नारी की विशेषता है यह ! वह यहाँ अपराधी के रूप में जो खड़ी है।

१२८. पृथा का दूसरा नाम कुन्ती था। कुन्ति भोज के दत्तक जाने के पश्चात् उसका नाम कुन्ती हुआ। वैसे देखा जाय तो अर्जुन चौथी सन्तान है। महाभारतकार उसे पार्थ संबोधन करता है। युधिष्ठिर और भीम का भी पार्थ सम्बोधन मिलता है। तब कर्ण भी उस दृष्टि से पार्थ ही था। वह कौंतेय भी था। तीनों पांडव पार्थ और कौंतेय नाम से सम्बोधन पाते हैं। तो कर्ण भी पार्थ और कौंतेय दोनों है। लेकिन कुन्ती यहाँ कहती है यह पार्थ पृथा का पुत्र नहीं कुन्ती का है। ठीक ही तो है। इसके बाद पृथा को पृथा किसी ने कहा ही नहीं। सब उसे कुन्ती नाम से ही बुलाते हैं। अतः शेष तीनों बेटे कौंतेय ही अधिक रूप में कहलाने योग्य है। कहलाये भी है।

१२९. लगता है चन्द्रवंशी शासित भारत में देव जाति के नर, नारी को कहीं रोकटोक नहीं थी। अप्सरायें चन्द्रवंशी राजा के महलों में आती थीं, निवास करती थीं। राजा उनके साथ विलास करता था। तो देव जाति के मनुष्य भी चन्द्रवंश के अंतःपुर तक पहुँचने का साहस करते थे। वैसे देव जाति का किसी आर्य कन्या से कोई अनैतिक संबन्ध आया या किसी आर्य कन्या ने किस देव जाति के पुरुष से अपने दैहिक सम्बन्ध स्थापित किये इसका एक भी उदाहरण नहीं है। फिर भी देव जाति के मनुष्यों पर कहीं रोकटोक नहीं थी अन्यथा कुन्ती तक पूषा (कर्ण का जनक)[1] का पहुँचना असंभव था।

१३०. चन्द्रवंशी शासित भारत में अप्सराओं का आवागमन खुले आम है। चन्द्रवंशी राजा विलासी हैं, यह प्रसिद्ध हैं। केवल राजा ही नहीं इस शासन के वरिष्ठ कहलानेवाले ज्ञानी ध्यानी भी स्वैर विहारी हैं। महाभारत कालीन समाज में वरिष्ठ वर्ग में जन्म लेकर भी कौन सी पवित्रता है ?, तब के भारत वर्ष की सभ्यता, संस्कृति, आचार-विचार क्या मूल भारतीय जनता के हैं ?, वह तो सब चन्द्रवंशी शासित समाज के है, उनके द्वारा शासित भारत के हैं। और चन्द्रवंशी जनता और उनके कर्मचारियों के हैं।

---

१. कर्ण का जनक आकाश का सूर्य नहीं धरती का मानव है और उसकी अवटंक सूर्य नहीं बल्कि आदित्य है—देव है। सूर्य तो अकेला विवस्वान ही कहलाया है। और सूर्यवंश उसी का चला है जो भारतीय इतिहास में आर्य वंश के नाम से प्रसिद्ध है। इसके लिये देखिये मन्थन भाग दो खण्ड दो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चन्द्रवंश की देव जाति के साथ जो मैत्री थी, जो सदियों से चली आ रही थी अभी तक अटूट थी। फलतः पटरानी के स्थान पर अप्सरायें शोभा पा रही थीं। इस इतिहास को बार बार दुहराना उचित नहीं है। इतिहास के संशोधक अब स्वयं इसकी ओर ध्यान दें।

देवजाति भारतीय समाज में व्यक्तिगत हस्तक्षेप भी करती है। उपरिचर वसु को इन्द्र ने सहायता दी, और यादवों को चेदि प्रदेश से खदेड़ा। खांडव-वन दाह प्रसंग में तक्षक का पक्ष लेकर इन्द्र अर्जुन से युद्ध करता है। भारत में गन्धर्वों का भी निवास—राज्य दिखाई पड़ता हैं। चित्ररथ गंधर्व भारत का निवासी था। मतलब देव जाति और उपदेव जाति तिब्बत के अतिरिक्त भारत के अन्य स्थानों में भी निवास करती थी। भीष्म की माता गंगा, गंगा तट की निवासिनी ही थी जो एक अप्सरा थी। भारत का निवास सबको प्रिय था। इसके अनेक कारण है। विशेष के लिये देखिये पं० सातवलेकर कृत्त महाभारत की समालोचना।

१३१. कुन्ती के समकालीन यह दुर्वासा कौन है, समझ में नहीं आता। यह दुर्वासा नारद के समान कोई दुर्वासा परंपरा का व्यक्ति है, ऐसा ज्ञात होता है। अत्रि और अनसूया के पुत्र दुर्वासा, चन्द्र और दत्त हैं ऐसा कहा जाता है। इनका कुन्ती का समकालीन होना कैसे संभव है? दत्त को दत्तात्रेय कहा हैं। अर्थात् तृ० पुरुष। दत्त अत्रि तो प्रथम पुरुष है लेकिन दत्त अत्रि नहीं आत्रेय है। तो दत्त का जनक भी द्वि० पु० अत्रेय ही होना चाहिये। लेकिन पुराणों ने ही इस विषय में किसी नियम का पालन किया नहीं। सातवें मन्वतर के अत्रि जिनका पुत्र सोम अथवा चन्द्र है जो स्वयं आत्रेय है। हमने चन्द्र को चन्द्रात्रेय ही कहा है क्योंकि अत्रि नाम प्रथम मन्वतर में मिलता है। तब वह सातवें मन्वन्तर तक प्रथम पुरुष कैसे रह सकता है। जब कि ऋग्वेद में अत्रि कुल के अनेक व्यक्तियों के सूक्त हैं।[१] यहाँ यह भी प्रश्न है कि इस चन्द्र का सम्बन्ध दत्त और दुर्वासा के साथ नहीं दिखाई देता। मतलब यह संतान अत्रि और अनसूया की है ऐसा सिद्ध करने के लिये कोई साधन नहीं है। प्रथम मन्वतर में जो अत्रि मिलता हैं वह निःसंतान दिखाई देता है। फलतः वह स्वायंभुव के एक पुत्र उत्तानपाद को गोद लेता है। वस्तुतः दत्तात्रेय प्रभाकर आत्रेय का पुत्र है।[२] अतः दुर्वासा, चन्द्र और दत्त का जनक अत्रि न होकर प्रभाकर आत्रेय है।

१. देखिये मन्थन प्रथम भाग पृ० २०३–२०५, २९१।

२. यह दत्तात्रेय माहिष्मति के राजा सहस्रार्जुन के समकालीन है। उसका गुरू है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अत्रि का वंश बहुत पुराना है। उसका मूल प्रथम मन्वतर में मिलता है। लगता है वहाँ भी यह प्रथम पुरुष नहीं बल्कि तृ० पु० ही होना चाहिये। क्योंकि उक्त कालीन जिन पुरुषों के नाम मिलते हैं वे सुसभ्य संस्कृति के दिखाई पड़ते हैं। अतः यहाँ तक आते-आते अवश्य ही ५।१० हजार वर्ष का इतिहास इसके पीछे होना ही चाहिये। क्यों कि इस मन्वतर के स्वामी स्वायंभुव के पीढ़ी का ९ वा वंशधर परमेष्ठि संस्कृत का प्रकांड विद्वान है। ऋग्वेद में उसका जो सूक्त है उससे भी जान पड़ता है कि वह, और भी अन्य विषयों का भी विद्वान है।[1]

तात्पर्य कुन्ती के समय यह दुर्वासा नहीं अपितु दुर्वासा परम्परा का कोई अन्य व्यक्ति होना चाहिये। ऐसा हमारा मत है।

१३२. अवैध—आर्य धर्म शास्त्र में कन्या के अविवाहित रहते पुत्रोत्पत्ति का कोई अधिकार नहीं था। यह प्रथा तो चन्द्रवंशी समाज में चली आ रही थी। वस्तुतः ऐसी संतान पाप की संतान मानी गई है, और ऐसी संतान की जननी को कुलटा कहा गया है।

१३३. महाभारतकार का कहना है कि जब कुन्ती को ज्ञात हो गया कि वह गर्भवती है, तब गर्भ प्रकट न हो, इसके लिये प्रसवकाल तक वह सतर्क रही। एक विश्वास पात्र दासी के सिवा इस रहस्य को अन्य कोई नहीं जानता था।

१३४. महाभारतकालीन चंद्रवंशी शासित समाज में सभ्य किसे कहा जाय यह भी एक प्रश्न है। महाभारत काल में जितनी भी अवैध संतानें हैं, सबकी सब आदर पा रही हैं। उन पर कोई ऊँगली नहीं उठाता।[2] एक अधेड़ ब्राह्मण जो महान ज्ञानी था, ऐसा कहा जाता है उसने पंद्रह वर्षीय सत्यवती पर, बीच नदी के बलात्कार किया। नौका में ही काम क्रीडा आरंभ कर दी। इतना कामातुर था वह। अप्सराओं को देखकर वीर्यस्खलन हो जाना, यह भी तो विचारणीय बात है कि कैसे कैसे कामातुर थे ये लोग ? यह सब चित्र चन्द्रवंशी शासित भारत का है। चन्द्रवंशी समाज का है। ऐसे समाज में किसे सभ्य, कहा जाय ? नारी भक्षित है रक्षित नहीं है, यह सच है। ध्यान रहे यह उत्तर वैदिक कालीन भारत का सत्य चित्र है।

---

१. इसका समय आज से निश्चय ही ८।९ हजार वर्ष पूर्व का है। तब पुरातत्वीय विद्वानों के पाषाण और नवपाषाण युग की मर्यादा का क्या अर्थ किया जाय ?

२. तब कर्ण पर ही क्यों ऊँगली उठी। यह विचारणीय है। हमें लगता है कर्ण भी इसी तरह इज्जत से जीवन जीता है। जैसे ये लोग जीते हैं। कर्ण के समकालीन व्यास, द्रोण कृप आदि कौन जन्म से श्रेष्ठ हैं ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१३५ शकुन्तला–शकुन्तला अप्सरा की कन्या है। उसका जनक विश्वामित्र[१] है। तिलोत्तमा पुत्री को जंगल में छोड़कर देवराष्ट्र में चली गई थी। न इसका रक्षण जननी कर सकी न जनक ही। इस कन्या का विवाह चन्द्रवंश में हुआ। ज्ञात होता है एलिन नाम के राजा के सुद्युम्न नामक ज्येष्ठ पुत्र को यह पत्नी थी। इसीलिये भरत का पैतृक नाम सोद्युम्नी[२] मिलता है। कुछ आकस्मिक घटना के कारण एलिन का राज्य जाता रहा। शकुन्तला का पति मारा गया और वह गर्भवती अवस्था में अपने चाचा श्वशुर कण्व के आश्रम में आश्रय लेकर रही। पुत्र जन्म वहीं हुआ। एक राजपुत्र के नाते कण्व ने भरत को शिक्षा दी। और इसके बाद दुष्यंत के पास भेज दिया। दुष्यंत ने भी शकुन्तला का स्वागत किया। अपने पुत्र करुरोमा तथा भरत में राज्य का बटवारा कर दिया। आगे भरत अपने पराक्रम द्वारा कीर्ति, यश संपादन करता है, जो इतिहास प्रसिद्ध है।

शकुन्तला युवा थी। भरत उसकी प्रथम संतान थी। वह तो अप्सरा की कन्या थी। भारतीय आर्य कन्या नहीं थी। जननी, जनक द्वारा भुलाई गई एक अन्नाश्रिता थी। उसने परिस्थिति को गुरु माना। भारतीय आर्य स्त्री का आदर्श जीवन में उतारा। भरत को भारत की धरोहर माना। अपना कर्तव्य पहचाना, परिस्थिति से प्रेरणा ली।

शकुन्तला की तुलना में कुन्ती निश्चय ही बहुत निर्बल सिद्ध हुई। काश वह भी इसी प्रकार कर्ण को लेकर बैठ गई होती तो....!

१३६. चन्द्रवंशी शासन में नारी का स्थान गौण था। नर प्रधानता जहाँ-तहां काम कर रही थी। जब कुन्ती ने गर्भधारण किया, इस कथा को वैशंपायन जनमेजय को सुनाते समय कहते हैं—"अब कन्या गर्भधारण नहीं करेगी" ऐसा समाज में नियम बन गया है। तुम्हारी दादी ने कन्या अवस्था में ( विवाह पूर्व ) गर्भधारण किया था। अतः प्रसव पश्चात् संतान का त्याग किया। गर्भ प्रकट करने का साहस उसमें नहीं हुआ। यही प्रश्न सत्यवती के सामने था।

---

१. यहाँ यह विश्वामित्र न हो कर वैश्वामित्र है।

२. यह कथा आजतक की प्रचलित कथा को मोड़ देती है। ठीक है। लेकिन वस्तुतः सत्य यही है। इसका उल्लेख शतपथ ब्राह्मण में आया है। साधनाभाव में मैं यहां इसका स्पष्टीकरण नहीं कर सकता। पाठक क्षमा करें! इसका रहस्य आचार्य चतुरसेन ने भी इसके पूर्व अपने भारतीय इतिहास नामक पुस्तक में खोला है। पाठक अभी उसे देखकर ही समाधान माने, विचार करें, यही विनय।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
दोनों समकालीन है। जब कि व्यास कर्ण से ६९-७० वर्ष से ज्येष्ठ हैं।[1] आगे चलकर सत्यवती कुन्ती की दादी सास भी बनी है।

यहाँ यह प्रश्न मन में आता है कि अब कन्या गर्भ धारण नहीं करेगी।'' यह वैशंपायन का वाक्य यह कल्पना करने पर मजबूर करता है कि क्या चन्द्रवंशी शासन में कन्यायें गर्भधारण करती थीं ? लेकिन इस प्रश्न में और एक उप प्रश्न खड़ा हो जाता है कि कन्या गर्भधारण करती थी या पुरुष गर्भधारण कराते थे ? क्या कन्यायें स्वच्छंदी, स्वैर विहारी, व्यभिचारिणी थीं ? या पराशर और पूषा जैसे अनेक कामांध पुरुष उनके साथ बलात्कार करते थे ? फलतः उन्हें गर्भ रहते थे। यह शोध आवश्यक है।

१३७. उक्त काल में पराशर क्या कम श्रेष्ठ थे ? कम विद्वान थे ? लेकिन समाज सुधार का कार्य किसी ने नहीं किया। उनके पुत्र व्यास जिन्हें आजतक हम पूजते आ रहे हैं। भगवान व्यास कह कर जिन्हें गौरवान्वित कर रहे है, मतलब उन्हें ईश्वर का अवतार, विष्णु का अवतार मानकर चलते हैं क्या उनका भी विवाह हुआ था ? तब शुकदेव का जन्म कैसे हुआ ? व्यास के ही क्षेत्रज पांडु, धृतराष्ट्र और विदुर हैं। विवाह किये बिना व्यास चार बेटों के जनक बने। तो पराशर का भी कहाँ हुआ था विवाह ? व्यास कहाँ किसी वैवाहिक पत्नी के पुत्र हैं ? व्यास के पुत्र शुकदेव जिन्हें विदेही कहा जाता है उन्हें चार पुत्र और एक कन्या शुकी नाम की कैसे हुई ? यह है महाभारत कालीन चंद्रवंश द्वारा शासित भारत का सामाजिक चित्र। कुंती किससे न्याय मांगती ? समाज पुरुष प्रधान था और पुरुष वर्ग इस तरह का था। कौन देता न्याय उसे ?

१३८-१३९-१४०. प्रसव पश्चात् कुंती ने बच्चे को पिटारी में बंद करके अश्वी नदी में प्रवाहित कर दिया। उसमें हवा, प्रकाश आने की व्यवस्था थी। मां की ममता चाह रही थी किसी के भी हाथ पिटारी सुरक्षित रूप से जल्द लगे और वहां इस शिशु का पालन हो।

---

१. महाभारत युद्ध समय कर्ण की आयु ८२।८४, व्यास की १५१ और भीष्म १५९ वर्ष के थे। देखिये हमारी आयु विवेचन लेख माला सेट २.। सत्यवती और भीष्म में केवल तीन वर्ष का अंतर है। भीष्म सत्यवती से ३ वर्ष बड़े है। सत्यवती शंतनु का विवाह हुआ तब सत्यवती २० वर्ष की संभवतः है। व्यास को जन्म दिया तब उसकी आयु १५।१६ वर्ष की थी। देखिये हमारी आयु विवेचन लेख माला।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रसव रात्रि में हुआ है। रात्रि चांदनी रात्रि है ऐसा लगता है। गर्भ माघ महीने के शुद्ध पक्ष को प्रतिपदा को रहा है, अर्थात् नौ मास पश्चात् शेष दिन शुद्ध पक्ष में अर्थात् चांदनी रात्रि में ही आना चाहिए।

देखिये कर्ण-पिटारी प्रवास-कुंती मनोमंथन, मंथन भाग २ खंड १।

१४१. एक बार कुंती के साथ समागम करने पर पुनः पूषा ने कुंती को अपना मुँह दिखाया नहीं। अतः एक आर्य कन्या ने अपनी भूल का प्रायश्चित् पुत्र नदी में प्रवाहित करके किया।

१४२. क्या जाने कुंती के समान कितनी ही कन्याओं ने चन्द्रवंश द्वारा शासित भारत में विवाह पूर्व गर्भधारण किया होगा। प्रश्न विचार मांगता है।

१४३. कुंती के संकेतानुसार युधिष्ठिर को पूर्ण विश्वास हो रहा है कि हो न हो माता कर्ण का ही नाम निर्देश करेगी।

१४४. कम से कम सत्यवती ने भीष्म के पास व्यास जन्म का रहस्य खोला। लेकिन कुन्ती में यह साहस नहीं आया।

१४५. चंद्रवंश शासित भारतीय समाज का सूक्ष्म अध्ययन आवश्यक है।

१४६. इसमें दो राय नहीं।

१४७. इसमें शंका का कहीं स्थान नहीं है।

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# मन्थन

## जलांजलि

( उत्तरार्ध )

## टिप्पणी विभाग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# १

१. आर्या—आर्य शब्द का स्त्रीलिंग आर्या अर्थात्, संस्कारी। देव लोक की अप्सराओं से भिन्न। भिन्न संस्कार वाली, गुणोंवाली।

२. भारतीय—कुंती को हमने भारतीय कहा है। यह कटाक्ष हमने चंद्रवंशियों के मित्र देवराष्ट्र की स्त्रियों से अथातु अप्सराओं से भिन्न इस अर्थ में किया है। भारतीय नारी कर्मभूमि की नारी है। चंद्रवंश भले ही भोग विलासों में खो गया हो, भोगभूमि की संस्कृति देवराष्ट्र की जनता के कारण भले ही भारत की धरती पर साकार हो उठी हो, खिली हो, लेकिन भारतीय नारी अभी अपने पद से गिरी नहीं है।

३ खिलौना—चंद्रवंशियों के लिये नारी केवल खिलौना मात्र थी। लेकिन आर्य स्त्री कभी पुरुषों का खिलौना नहीं थी और नहीं थी उनकी संतान भी खिलौना। देव लोक की अप्सराओं ने प्रसव तो अनेक किये लेकिन वह अपने ऊपर माता की, जननी की मुँहर नहीं लगा सको। और नहीं कोई देव पुरुष भी किसी संतान का जनक कहला सका। देवलोक में कौटुम्बिक संस्था नहीं थी। वैवाहिक संस्था ही नहीं तब पारिवारिक कल्पना आवे भी कैसे? परिवार में माता पिता के संतानों से, अनेक रिस्ते नातों से, जो स्नेह संबंध होते हैं उनका जो एक अनोखा आनंद आता है, अनुभव आता है, उससे देवराष्ट्र की जनता अनभिज्ञ थी। यह सच है देवलोक की स्त्रियों को गर्भ रहे, प्रसव किये, लेकिन संतानें लावारिस ही कहलाई। न गर्भ धारण करने वाली माता कहला सकी न विषय सुख सेवन करने वाला पिता।[1] चंद्रवंशियों के द्वारा भी इन अप्सराओं के गर्भ रहे हैं लेकिन प्रसव होते ही उन्हें जहाँ प्रसव किया वहीं त्यागकर वे देवराष्ट्र में चली गईं हैं। वात्सल्य नाम की वस्तु के आनन्द से वे शायद अपरिचित ही रही। ऐसी स्थिति में संतान उनके लिये खिलौना नहीं तो और क्या कहना चाहिये। बल्कि खिलौने का भी हम आदर करते हैं उसपर प्यार

---

१. विशेष जानकारी के लिये देखिये पं० सातवलेकर कृत महाभारत की समालोचना।

करते हैं उससे खेलते हैं। अप्सराओं ने तो केवल बोझा फेंक दिया, झटक दिया
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
और अलग हो गई, यहीं किया है। यह थी देवराष्ट्र की संस्कृति। और उनके मित्र थे चंद्रवंशी।

४. विवाह पश्चात् भारतीय नारी शीघ्र ही माता कहलाना चाहती है। वह मैं कब माता बनूंगी इसी प्रतीक्षा में रहती है। माता पद प्राप्त होना मानो वह जीवन की पूर्णता मानती है। यदि संतान होते देर हो रही है, ऐसा देखती है तो ईश्वर से प्रार्थना करती है। मानता मानती है। संतान कैसी चाहिये वह भी स्पष्टीकरण करती है। वह शूर, वीर, गुणी, भक्त आचार-विचार संपन्न हो यही इच्छा करती है। अपनी संतान को वह जैसा चाहती है वैसा बनाती है। यह कला कर्म-भूमि भारत की नारियों के लिये सहज प्राप्य है, सहज साध्य है।

५. विवेकी विद्वान इसका स्पष्टिकरण ऐतिहासिक रूप में सामाजिक ढंगपर करें यही विनय।

६. चन्द्रवंशियों के कारण भारत की धरती पर नैतिकता का पतन हुआ है यह मेरा आरोप नहीं, यही सत्य है। प्राचीन इतिहास के संशोधक इस विधान पर तटस्थ बनकर विचार करें यही विनय है।

७. जब से चन्द्रवंश भारत में आया तभी से यहाँ की सभ्यता और संस्कृति का ह्रास होता चला गया। इन इतिहासकारों की दृष्टि से किन आर्यों का भारत में आगमन हुआ और किन आर्यों ने भारत को संस्कार दिये, क्या नाम, ठाम है उनका, यही मेरे समझ में नहीं आता। यह भी समझ में नहीं आता कि यह अटकलें कैसी और कहाँ से चलाई गयी हैं?

८-९. भारतीय सभ्यता और संस्कृति में जो दोष आये, वह चन्द्रवंश के कारण आये हैं, यही हमारे मन्थन माला का सार है, और उसके कारण बने है देव जाति के पुरुष और स्त्रियाँ, तथा विलासी चन्द्रवंश। चन्द्रवंश के भारत आगमन पश्चात् भारत का नैतिक दृष्टि से उत्थान नहीं बल्कि पतन ही हुआ है।

१०. प्राचीन साहित्य में कर्मभूमि केवल भारत की धरती ही कहलाई। शेष सभी भोगभूमियां कहलाती थीं। उस अर्थ में चन्द्रवंश भोगभूमि से भारत में आया था। वहीं संस्कार साथ ले आया था। साधन भी साथ थे, अर्थात् साथ में देवराष्ट्र की प्रजा भी आई थी।

११. इसका उल्लेख पीछे हो चुका है। अनेक बार हो चुका है।

१२. इसका उल्लेख पीछे हो चुका है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१३. चन्द्रवंश का मूल पुरुष चन्द्र आत्रेय था। इसने राज्य प्राप्ति के पश्चात् देवराष्ट्र की अनेक स्त्रियों का उपभोग किया। अंत में देव गुरु की युवा पत्नी का अपहरण भी किया। उसे गर्भ रह गया। पुत्र जन्म हुआ। उसका नाम बुध। यह उल्लेख भी पीछे हो चुका है। इस वंश में पुरुरवा, के समान अनेक राजाओं के वैवाहिक पत्नी की नहीं अपितु अप्सराओं की संतान से ही वंश चले हैं।

१४-१५. इतिहासकार चन्द्रवंशी लोगों को आर्य (संस्कारी) करार देते हैं। आर्य पुरुष संस्कारी होता है, गुणी होता है यह शब्द संस्कार वाचक है। तब संस्कारी पुरुष युवा कन्याओं की छेड़ छाड़ कैसे करता है? कर सकता है? लेकिन चन्द्रवंश में ऐसा हुआ है। सत्यवती, कुन्ती जैसी अनेक कन्याओं की छेड़छाड़ हुई है ऐल शासित भारत में। तब चन्द्रवंश आर्य कैसा? चन्द्रवंश आर्य वंश है यह किस आधार पर? दिवोदास से शंतनु तक का चन्द्रवंश का इतिहास क्या कहता है? उक्त कालीन चन्द्रवंशी शासित भारत का इतिहास क्या कहता है? सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक तीनों पहलुओं पर प्रकाश डालने की मैं प्राचीन इतिहास के संशोधकों से विनंती करता हूँ।

१६. ऐसे कई कर्ण जन्मे होंगे? इस पात्र को पचा न सके इसलिये यह प्रकाश में आया और फिर उसके जन्म के लिये अलौकिक कथाओं को जुटाना पड़ा! क्यों कि कुन्ती पांडवों की माता है। विजयी वीरों की माता है। शासन चन्द्रवंश का है। घटना उन्हीं के वंश की है। यह सब मेल मिलाकर ही यह कथानक तैयार करना पड़ा होगा। चन्द्रवंशी शासित समाज में वर्णाश्रम धर्मका कोई विधान अपने स्थान पर नहीं है।

१७. देवजाति और चन्द्रवंशियों के मैत्री का इतिहास अनुशीलन मांगता है।

१८. नियोग के लिये देखिये मंथन भाग १ पृ० २३६,२४४,२५१-२५८।

१९. नर-नारी, पुरुष-स्त्री, पति पत्नी, ये सभी शब्द अपनी एक मर्यादा जानते हैं। और इसका पालन भारतीय आर्य संस्कृति में किया जाता है। चन्द्र वंशी शासित भारत में इसमें विकृति आ गई। इस सत्य से इन्कार नहीं किया जाता।

२०. महाभारत कालीन भारत में वर्ण संकर अधिक है। जितने भी शूर वीर, विद्वान दिखाई देते हैं उनकी जन्म कथायें विचित्र है।

२१. इसीलिये चन्द्रवंश में नियोग की प्रथा अधिक चली। आगे चलकर उसे धर्म का रूप दिया गया। यह सब अपनी-अपनी सहूलियत हुई है। इसमें समाज की शुचिता का, राष्ट्र की पवित्रता का, कोई प्रश्न नहीं आता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

२२. चन्द्रवंश विलासी था। महाभारत तक बराबर इसका वही चित्र उभर आया है।

२३. चन्द्रवंश में विवाहिता पत्नी के स्थान पर सिंहासन पर अप्सराओं की संतान आई हैं।

२४. आर्य संस्कृति में गर्भाधान का भी एक विधान है। यहाँ खेल खेल में बच्चे पैदा करने का विधान नहीं है। चन्द्रवंश में अप्सराओं की जितनी भी संताने हुई उनके पीछे संतानोपत्ति की भावना नहीं दिखाई देती।

२५. विलास के कारण चन्द्रवंश में सामाजिक परिवार योजना संभाली नहीं गई यह आक्षेप अनुचित नहीं है।

२६. चन्द्रवंशी शासित भारत में अवैध संतानों की बाढ़ आ गई हैं। फलतः एक भी आश्रम अपने स्थान पर नहीं है। संकर की बाढ़ आना ही समाज किस ओर जा रहा है, इसपर सोचने कि लिये बाध्य होना है, लेकिन चन्द्रवंश इस विषय में आखें मूंदकर रह गया। देखिये मन्थन, प्रथम भाग, अंश की, स्खलन की, जन्म की नवगाथा की तथा नियोग आदि की संतान।

२७. भारतीय नारी हमेशा के लिये श्रेष्ठ कहलाई है।

२८. कौरव वंश की लता टूट रही यह देखकर सत्यवती जाग गई। भीष्म के सामने नियोग का प्रस्ताव रखा। भीष्म के द्वारा नकार आने पर तथा अन्य सुझाव पर तुरंत व्यास का नाम लिया। उसके जन्म का रहस्य प्रकट किया। और इस तरह कौरव कुल को जिलाया।

२९-३०. कुन्ती के इस विधानपर विद्वान् पाठक स्वयं विचार करे।

३१. सत्यवती भी कौमार्यावस्था में व्यास को जन्म दे चुकी थी। पांडवों के हस्तिनापुर आने के पश्चात् तथा उनके जन्म का रहस्य खुल जानेपर व्यास ने सोचा अब सत्यवती पर उँगली उठ सकती है। दुर्योधन के स्वभाव गुणों से वे परिचित थे अतः उन्होंने तुरन्त अपनी माता को तप करने के लिए वन में भेज दिया।

३२. कर्ण से कुन्ती अवश्य मिल सकती थी। उससे परिचय कर सकती थी। ऐसे अनेक समय उसके जीवन में आये लेकिन चन्द्रवंश की पुरुष प्रधान संस्था के कारण नारी इतनी दब गई थी कि वह कुछ न कर सकी।

३३. मैं तुम्हें कुमारी बना दूंगा यह कर्ण के जनक का वचन था लेकिन उसने उसका पालन नहीं किया।

३४. कुन्ती अपनी भूल का अनुभव करती है।

३५. दुर्गा का धार्मिक रूप हटाकर उसे ऐतिहासिक रूप में समाज के सम्मुख रखना आवश्यक हो गया है। दुर्गा एक नारी थी। यह नहीं भूलना चाहिए। ●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



३६. यह उल्लेख महाभारत में आया है।

३७-३८-३९-४०. महाभारत का युद्ध अठारह दिन हुआ। नित्य नया मोर्चा खुलता रहा। मृतकों को उठाना, उनका अन्तिम संस्कार करना, आदि के लिए किसके पास समय था ? ऐसा कोई उल्लेख महाभारत करता भी नहीं। गिद्ध, कौओं आदि हिंस्र पक्षी और पशुओं का ही साम्राज्य युद्ध-क्षेत्र पर बना रहा।

४१. द्वापर युग उन्नति का युग है। पाषाण, नव पाषाण आदि युगों को हजारों वर्ष पीछे छोड़ कर त्रेता का उदय हुआ। उसके पूर्व सत्ययुग का क्रम पाया जाता है। स्वायंभुव मनु उस अर्थ में सत्ययुग का मनु है। स्वायंभुव का काल प्रगति के मानव का काल दिखाई देता है। हमने अपने यह विचार अनेक बार मंथन माला में यथा समय, यथा स्थान प्रकट किये हैं। अब यहाँ हम विस्तार करना नहीं चाहते। इसके पश्चात् का युग त्रेता और त्रेता के पश्चात् द्वापर आता है।

४२-४३. कर्ण और कुन्ती के मुख में समानता थी। होनी भी चाहिए। संतानोंत्पत्ति की इच्छा माता की ओर से अधिक रही है। अतः कामशास्त्र के नियमानुसार यदि वह माता के मुख की आकृति लेकर आता है तो आश्चर्य जैसी कोई बात नहीं है। कर्ण को देखकर युधिष्ठिर को कई बार कुन्ती का स्मरण हो आया है। वह ऐसा कह बतलाता है।

कुन्ती ने भी पहले पहल उस दिन रंगभूमि में कर्ण को देखा। कवच और कुण्डलों के कारण उसको पहचान लिया। इसमें मुख की समानता यह भी एक कारण प्रमुख था। कुन्ती को मूर्च्छा भी इसीलिए आई थी। उसे डर लग रहा था कि कहीं यह मुख की समानता कर्ण—जन्म रहस्य न खोल दें।

४४-४५. इसके लिये देखिये मंथन भाग २ खण्ड २ तथा ३।

४६-४७. देखिये मंथन प्रथम भाग कर्ण-कृष्ण।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

४८-४९-५०. जहाँतक मैं समझ सका यदुवंश में अप्सरा का रक्त नहीं है। यों तो मूल में यदु स्वयं ब्राह्मण कन्या और क्षत्रिय पुरुष के वीर्य की सन्तान है। और कुन्ती यदुवंश की कन्या है। न उसमें रक्त संकर है-न वह संस्कार-हीन थी। लेकिन चन्द्रवंश द्वारा शासित समाज में नारी निर्बल है यह सच है।

५१-५२-५३. कर्ण ने छल, कपट का सहारा लेकर युद्ध नहीं किया। कर्ण सोलहवें दिन युद्ध पर आया। सत्रहवें दिन चौथे प्रहर वह निःशस्त्र मारा गया। सोलह और सत्रहवें दिन जो युद्ध हुआ वह घमासान हुआ। सभी कहते हैं इन्हीं दो दिनों का युद्ध सही युद्ध रहा। रक्त की धारायें पानी जैसी बहने लगीं। कहीं किसी का धड़, कहीं मूंड़, कहीं जाँघ पानी से रक्त में बहते चली जा रही है ऐसा भयानक दृश्य था रणक्षेत्र का। कि ऐसे में उस कीचड़ में कर्ण के रथ का पहिया धस गया। जाम हो गया। निकल नहीं सका।

५४. कर्ण हत्या में कृष्ण के ही मन का कहा हुआ है।

५५-५६. भीष्म और द्रोणाचार्य मारे गये थे। अब तो कोई डर नहीं था। वैसे तो द्रोणाचार्य के मारे जाने पर सभी का डर निकल चुका था। अब शेष कर्ण रह गया था। इस अवसर पर भी यदि कृष्ण एक बार और कर्ण के पास जाते अथवा पांडवों के पास कर्ण का भेद खोलते तो ?....

५७. युधिष्ठिर को अपने क्रोध किये पर पश्चाताप हो रहा है।

५८. देखिये म० भा० कर्ण पर्व सातवलेकर

५९-६०. देखिये म० भा० कर्ण पर्व ( सातवलेकर )

६१. निश्चय ही युधिष्ठिर को कर्ण का भारी डर लग रहा था।

६२. महाभारत युद्ध समाप्ति पश्चात् श्रीकृष्ण प्रसन्न नहीं है।

६३-६४. इस पर स्वयं विवेकी विद्वान पाठक, विचार करे।

६५. चन्द्रवंशी शासन व्यवस्था शोध मांगती है।

६६. ऋषि मुनियों के जन्मों की अलौकिक कथाओं को ऐतिहासिक दृष्टि से देखना आवश्यक हो गया है।

६७. नियोग के लिये देखिये मंथन भाग १ पृ० २५१-२५७

६८. चन्द्रवंश की तुलना में सूर्यवंश का चरित्र निश्चय ही महान उज्वल है। सूर्यवंशियों द्वारा मूल भारतीय आचार-विचार, संस्कार, सम्यता, संस्कृति सब की रक्षा हुई है इससे कैसे इन्कार किया जायेगा ?

६९. नियोग प्रथा ऐलों की देन है। नियोग संस्कारी समाज का कार्य नहीं है। इसमें दो राय नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

७०. चन्द्रवंश का पतन देव जाति के कारण हुआ है।

७१. दिवोदास भारत में आया। उसके पूर्व का इतिहास शोध माँगता है। भारत का यह १७+१५=३२ पीढ़ियों का इतिहास अज्ञात हैं। देखिये वंशावली परिशिष्ट। मंथन भाग २ खंड २।

७२. यह भरतों का नहीं चन्द्रवंशी शासन कालीन भारतीय बने चन्द्रवंशियों का इतिहास है।

७३-७४. इसकी शोध इतिहास के विद्वान करें। सूर्य वंश ने भरतों के जीवन का आदर्श प्रत्यक्ष रूप में सामने रखा है। वहाँ चन्द्रवंश अपनी आदतों को छोड़ नहीं सका। देव जाति से मैत्री तोड़ नहीं सका। चद्रवंश के भारत आगमन पूर्व यहाँ किस देवजाति या अप्सराओं का आभास मिलता है? इस पर इतिहास के संशोधक विचार करे।

७५. देव सभ्यता का सूक्ष्म नीरीक्षण आवश्यक है। 'देव' शब्द अलग है और भारतीय पौराणिक इतिहास की देव नामधारी मनुष्य-जाति भिन्न हैं। यह भेद ध्यान में लेना आवश्यक है। जब तक ऐसा नहीं होता प्राचीन भारत का इतिहास स्पष्ट नहीं होगा। भारत का धर्म क्षेत्र उज्जवल नहीं बनेगा। धर्म क्षेत्र की तमाम भ्रांतियां तभी मिटाई जा सकती हैं। विश् धातु से बननेवाला विष्णु शब्द अलग है और अदिति के बेटे विष्णु का चारित्र अलग है, इस भेद को जानना अब आवश्यक है। तो वैदिक अदिति शब्द जो पृथ्वी वाचक है वह दक्ष कन्या एवं कश्यप पत्नी आदिति से भिन्न अर्थ रखता है। तात्पर्य पौराणिक देवता अदिति कि बेटे हैं और वह वर्णन अज्ञानी लोगों के लिये है। तत्वज्ञानियों के लिये यह ग्रंथ नहीं है। कृष्ण द्वैपायन ने इसका निर्णय यही लिया है। उन्होंने पुराण क्यों लिखे? इसकी आवश्यकता क्यों महसूस की गई? इसके लिये अपना मत स्पष्ट रूप में दर्शाया है। देखिये, मंथन भाग २ खण्ड २।

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# ३

७६. वस्तुतः यह युगांत था। अंधकार मिटाकर प्रकाश की आवश्यकता थी। लेकिन ऐसी मशाल लेकर कोई नहीं आया मैदान में। रक्त क्रांति के स्थान पर वैचारिक क्रांति की आवश्यकता थी। जब कि भाग्य से भारत ने श्रीकृष्ण जैसा उत्तम पुरुष प्राप्त किया था। भीष्म द्रोण, कृप, विदुर, कर्ण, पांडव जैसे ज्ञानी, वीर, विद्वान तेजस्वी वीरों का भारत में सुमेल हो गया था। लेकिन अंत में रक्त क्रांति ही होकर रह गयी।

७७. कृष्ण कर्ण का मधुर मिलन वस्तुतः मिलन होता तो ?............

७८. कुन्ती श्रीकृष्ण की बुआ लगती थी। उनके पितृ कुल की कन्या थी। यह घटना उनके अपने घर की थो। क्या ही अच्छा होता कृष्ण सुधारक के नाते निखर आते। तो भारत का नक्शा क्या होना ?...........

७९. चंडी, दुर्गा, भवानी यह तीनों शब्द अपना अपना अर्थ रखते हैं और यह रूप नारी के हैं। यही दृष्टि रखकर तत्तत् कालीन समाज का ऐतिहासिक अनुशीलन हो तो नारी की महानता का आदर्श निश्चित ही सजीव हो उठेगा और पुनः नारी-मर्यादा की पहचान हो सकेगी। उन्हें अलौकिक रूप देकर पूजा के स्थानपर बैठाकर नारी की पहचान संभव नहीं है। महापुरुषों को ईश्वर बनाकर ईश्वर का अवतार मानकर, नारी को देवियाँ बताकर उन्हें देवता की श्रेणी देकर क्या पाया है भारत ने आजतक ? नारी की कौन सी स्थिति सुधरी ? नर का नारायण और नारी की नारायणी यह आदर्श सामने रखा जाता तो प्रत्येक युग में चंडी, दुर्गा भवानी पैदा होती। यदि ऐसा होता तो पुरुषों का कहाँ नाक कटनेवाला था ? इसमें उन्हें कौनसी हीनता का अनुभव होता ? भारतीय नारी का इतिहास तो कर्मभूमि की नारी का इतिहास है। भोगभूमि की नारी का नहीं। तभी तो यहां राम, कृष्ण, भीष्म, कर्ण, पांडव विदुर पैदा हो सकते हैं। रामकृष्ण, विवेकानन्द, दयानन्द, जन्म ले सकते हैं। शिवाजी, महाराणा, वीर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
दुर्गादास दृष्टि पथ में आ सकते हैं, यह सब क्या है ? यह प्रसाद है । ओर यह प्रसाद किसका है ? नारी का, जननी का, भारतीय नारी का है ।

तात्पर्य हमारी अवतारवाद की कल्पना धोखा खा गई । ईश्वर आयेगा, वह आता है, इसके बदले मेरा बच्चा कृष्ण बने, मैं ईश्वर बनू, नर का नारायण बनूं, यह आदर्श रूढ होता तो निश्चय ही भारतीय दर्शन कुछ और भी खिल जाता ।

८०-८१. ऐल ( चन्द्रवंशी ) इस धरती में आये । यहाँ की प्रजा को लूटा, यहाँ की नगर सभ्यता का नाश किया, यहाँ की प्रजापर अनेक अत्याचार किये और अंत में एक दिन यहाँ के शासक बने । लेकिन इस धरतो को इनसे क्या मिला ? मिला अंत में रक्त स्नान । इस हानि की पूर्ति अब तक नहीं हुई ।

८२. नारी गर्भ धारण करती है । संतान-प्रसव की पीड़ा सहन करती है । संतान का लालन पालन करती है, बस उसका इतना ही कार्य है, यह वाणी किसकी है ? किसकी हो सकती है ?

८३. ऐलों के जीवन की, जीवन प्रणाली की, समाज की, शासन की । इन सबकी अब हमें व्याख्या चाहिये । प्राचीन भारत का विकृत इतिहास इसकी अपेक्षा करता है ।

८४. मूल भारतीय प्रजा का इतिहास इससे भिन्न है, भिन्न था, भिन्न होना भी चाहिये । वह इतिहास भरत और भरतों की प्रजा का एवं उनके पूर्व आये दैत्य, दानव और नाग प्रजा का है । क्यों कि दैत्यादि को आकर २००-२५० वर्ष बीत चुके थे । उनकी अपनी नगर सभ्यता थी । किलेबंद शहर थे । जिनका नाश इन्द्र द्वारा हुआ है । इसकी साक्षी ऋग्वेद देता है । मूल भारत की अपनी सभ्यता, नगर सभ्यता, संस्कारी सभ्यता थी ही । यह शोध आवश्यक है क्यों कि यहाँ भरतों का निवास था । यह कैसे भुलाया जा सकता है ?

८५-८६. परिवार में नारी सर्वेसर्वा हो तभी परिवार आदर्श बन सकता है, सुखी हो सकता है संस्कारी हो सकता है । समाज में नारी पूजित हो तो समाज, राष्ट्र, सभी प्रगति कर सकते हैं । समाज की कल्पना, नारी से आती है । नारी समाज का आईना है । नारी को देखकर ही उस कुटुम्ब की, परिवार की, समाज और देश की पहचान होती है । कल्पना आ सकती है । चन्द्रवंशी शासन में नारी की अवस्था कैसी है यह शोध का विषय है ।

८७-८८. चन्द्रवंश ने विलासी जीवन का त्याग नहीं किया । फलतः जैसा राजा वैसी प्रजा मिली । चतुर्वर्ण का विधान टूट गया । पांचवा वर्ण ऋग्वेद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
में ही निषाद नाम से मिलता है जिसका उल्लेख हम पीछे कर आये हैं। वह पांचवा वर्ण आया कहाँ से ? कैसे ? क्या पांचवा वर्ण आर्यों के चतुर्वर्ण में मान्य किया जायेगा ? हम विवेकी विद्वानों से सविनय पूछना चाहते हैं कि क्या ऋग्वेद कालीन समाज में पवित्रता थी ? ऋग्वैदिक जनता में कोई आचार था ? क्या ऋग्वैदिक जनता मूल भारतीय जनता है ?

८९. चन्द्रवंश के लिये लेखक का कोई पूर्वाग्रह नहीं है। चन्द्रवंश पर आक्षेप करता रहूँ, यह भी इच्छा नहीं, लेकिन ऐतिहासिक विवरण को देखते हुये जो सम्मुख आता है उसका उल्लेख करना अपना कर्तव्य मानता हूँ। यदि मैं कुछ अनुचित कर रहा हूँ, अनुचित बोल रहा हूँ तो विद्वान मेरा मार्ग-दर्शन करें। मेरी भूलों पर सप्रमाण प्रकाश डालें वही विनय।

चन्द्रवंशपर यह आक्षेप नहीं, हकीकत है। इतिहास के विद्वान् चन्द्रवंशी शासन का सूक्ष्म अवलोकन करें। तटस्थ बनकर न्याय दें। निषाद अपनी कहानी सुनायेगा। नियोग अपना रोना गायेगा। इसका उत्तर ऋग्वेद की लूट में मिलेगा। सैनिकों की विधवा स्त्रियाँ भी देंगी।

९०-९१. भारत की नारी देव लोक की नारियों से भिन्न पड़ती है, पड़ी है। वह अपनी भूल का प्रायश्चित् आप ही भोगती है। भोगती आई है। कुन्ती कर्ण का त्याग करके उसके वात्सल्य के लिए जीवन भर रोती रही। अन्त में वह जननी थी उसकी। इसका चित्रण तो कोई हृदयशील भारतीय आत्मा ही कर सकती है। इसकी सत्यता तो कोई सात्विक, चिंतनशील हृदय ही उजागर कर सकता है।

९२. मैं कुन्ती का जाया हूँ, पांडवों का सहोदर हूँ, यह कर्ण ने जब कृष्ण उसे बताने गये, तब जाना।

९३-९४. हम नहीं जानते कृष्ण को कर्ण जन्म रहस्य का कब पता चला। महाभारत भी इसके लिए मौन है। कृष्ण युद्ध के सात दिन पूर्व कर्ण से यह बात कहते हैं हम इतना ही जानते हैं।

क्या ही अच्छा होता कृष्ण सहोदर की कल्पना करते। चन्द्रवंशी समाज की गतिविधियाँ ध्यान में लेते। समाज किस ओर जा रहा है इसपर तनिक दृष्टिपात करते। नारी की महानता की आवश्यकता को अल्प भी मानकर चलते।

९५. चन्द्रवंशी समाज शुद्धि माँग रहा था। रोग का निदान नहीं हुआ। रोग कौन सा और औषधि कौन सी ? कोई मेल नहीं बना। अन्त में युद्ध ही होकर रह गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# ४

९६-९७. यों तो चन्द्रवंशी भारत आ जाने पर प्रथम दिवस से ही आपस में लड़ते आये हैं। यह क्रम शंबर दिवोदास के समय से चालू था। ऋग्वेद के दो भयंकर युद्ध भी वस्तुतः चन्द्रवंशियों के आपस में ही हुए हैं। दोनों दल[1] अपना अधिकार इस धरती पर चाहते थे। प्रथम दिवोदास आया। बाद में ययाति के वंशधर आये।[2] दिवोदास के विषय में यादवों और तुर्वसुओं का मन अच्छा नहीं था। इसके बाद तो सुदास के विरोध में स्पष्ट रूप में ययाति के सभी वंशधर दिखाई पड़ते हैं। उनमें से एक समूह (गण) अलग पड़ गया था। उसने स्पष्ट रूप में शेष चार बंधुगणों को धोखा दिया ऐसा कह दूँ तो कोई अनुचित नहीं होगा।[3] ऐतिहासिक सत्य है चन्द्रवंश कभी आपस में तो कभी सूर्यवंशियों से टकराता रहा है। इसके बाद यानी ऋग्वेद के दोनों महा-युद्धों के पश्चात् चन्द्रवंशियों में आपस में जो भयंकर युद्ध हुआ वह कुरुक्षेत्र का ही युद्ध था। इस युद्ध से भारत की जो हानि हुई उसकी पूर्ति अभीतक हम नहीं कर सके।

यह चारो भाइयों से अलग पड़ने वाला गण पुरुओं का था। महाभारत काल में यादवों के नेता ने पुरुओं को आपस में लड़ाकर मानो बदला लिया। लेकिन यह जीत भारतवर्ष की भलाई के लिए नहीं हुई। इस महायुद्ध ने भारत को कोई लाभ नहीं पहुँचाया। उसके अनेक दुष्परिणाम हुये।

---

१. हमने दोनों दल शब्द प्रयोग किया है वह उचित ही है। दिवोदास प्रथम आया उसका वंश अलग है। इसके बाद गाधि आया, गाधि के बाद उसका बेटा विश्वामित्र आया और विश्वामित्र के साथ ही स्यात् यादव आदि पाँचों भाइयों के समूह आये। तीनों के तीन वंश है और तीनों आपस में लड़े हैं।

२. यहाँ एकवचन न होकर बहुवचन है। इस बात का ध्यान रहे।

३. इसकी साक्षी स्वयं ऋग्वेद देता है। दाशराज्ञ युद्ध में पुरुओं का गण नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

९८. निश्चय ही धर्मराज की युद्ध करने की इच्छा नहीं थी। यों तो कृष्ण ने सभी से पूछ लिया था। किसी ने भी युद्ध के लिए उत्साह नहीं दिखाया था। लेकिन द्रौपदी यह सब नहीं चाहती थी। वह युद्ध चाहती थी। देखिये म० भा० उद्योग पर्व अ० ८२ द्रौपदी-कृष्ण-संवाद।

९९. यह कल्पना करना अनुचित तो नहीं है।

१००. यह नारा कब लगा, क्यों लगा ? इसकी शोध आवश्यक है।

१०१. पुराणों के सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि यह चार युग कुछ अर्थ रखते हैं। समाज का विकास कैसे-कैसे हुआ यह जानकारी पुराणों में सृष्टि के जन्म से लेकर मिलती है। अतः पुराणों को गप्पाओं का भंडार मानकर उनकी अवगणना उचित नहीं है। मैं भी मानता हूँ कि उनकी रचना मनोरंजन की शैली पर की गई है लेकिन उनमें तत्तत् कालीन सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक तत्व का स्पष्ट चित्र दिया गया है। उनमें जो अलौकिता आई है उसकी अनुपयुक्तता आदि को हटाकर ऐतिहासिक दृष्टि से उनकी ओर देखने से हम बहुत कुछ पा सकते हैं।

१०२. यदि कर्ण हमारा ज्येष्ठ बन्धु है यह युधिष्ठिर को युद्ध पूर्व ज्ञात हो जाता तो क्या होता ? श्रीकृष्ण के पास वे कर्ण की मांग करते तो क्या होता ? जीवन भर के पांडव और कर्ण के वैर भावनाओं का निराकरण कैसे होता ? क्या होती परिस्थिति ? यह विचार मन में अपने आप आना सहज बात है। विवेकी विद्वान इन विचारों की ओर तनिक ध्यान दें यह प्रश्न आज भी उत्तर मांगते है।

१०३. ऐल प्रजा, और राजा सब को सदाचार के पाठ पढ़ाना आवश्यक हो गया था।

१०४-१०५. इस विषय में हम अबतक बहुत कह गये हैं। अतः यहाँ और पुनरुक्ति नहीं चाहते। कहना यहीं चाहते हैं कि इनके पास बल था, उत्साह था, जिसके भरोसे इन्होंने भारत में प्रवेश किया। जबतक शंबर से युद्ध चलता रहा ये सब बेघर द्वार वाले रहे स्यात् इसी को लेकर "आर्य घुमक्कड़ थे, झोपड़ी बनाकर रहते थे। आज यहां तो कल वहां ऐसा इनका जीवन था आदि कल्पनायें करने में आई।" वस्तुतः शंबर हत्या चालीस वर्ष बाद हुयी इसमें दो पीढ़ियां तो बीत ही जाती है। इसके बाद इन बेघरबार[1] वालों को घर मिले।

---

१. ऋग्वेद इसकी साक्षी देता हैं। ऋग्वेद प्रायः प्रार्थनाओं से ही भरा पड़ा है। उसमें रोटी, मकान, स्त्री, बच्चें सभी की मांग की गई है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
खाने को तरसने वालों को आराम की रोटी मिली। अतिरिक्त भारत का शासन भी। महाभारत कालतक इनकी ४५ पीढ़ियां बीतने में आई थी। इस धरती ने इन्हें अपना लिया था। अपना कहा था।

इनके पूर्वज दूर देश से ( एलाम ) आये। अब तो ये यहां के नागरिक ही नहीं, मूल निवासी कहलाने योग्य हो गये थे। लेकिन इस धरती को सुजलाम् सुफलाम् नहीं बना सके। उनमें वर्ण संकर बढ़ा, समाज अव्यवस्थित हुआ अराजकता छा गई, दुःख, शोक, संताप अत्याचार, व्यभिचार आदि की मूक वेदनाओं को मानो व्यथा आई और इस धरती को रक्त स्नान करना पड़ा।

१०६-१०७. यह तो ऐतिहासिक सत्य है कि ऐल ( चंद्रवंशी ) इस देश के लिये आगंतुक है। इनका आगमन भरत आर्यों के प्रदेश में हुआ है। आर्य प्रदेश में ऐल आ गये है। नहीं कि दस्युओं के, दासों के या इन अबतक के इतिहास कारों के कहने अनुसार अनार्य देश में या द्रविड़ों के देश में आर्य आये। इस इतिहास को अब बदलना, नष्ट करना आवश्यक हो गया है। दुःख तो इस बात का है कि स्वतन्त्र भारत में आजतक इस कार्य के लिये सक्रीयता नहीं दिखाई दी।

१०७-१०९. कौरव पांडव उन्हीं के वंशधर है। ये दोनों पुरु से पौरव और कुरु के बाद कौरव कहलाये। तात्पर्य भारत में जिस शाखा का शासन अधिक प्रमाण में हैं वह है कुरु की शाखा। पौरवों ने दाशराज्ञ युद्ध के समय ही अपने चारो भाइयों के गणों को धोखा दिया, उनसे अलग पड़ गये। स्वार्थी ही निकले। आगे मुद्गल के समय पाँच राज्यों की स्थापना हुई जो पंचाल नाम से प्रसिद्ध हुये। इसी के बाद हस्ती के नाम पर हस्तिनापुर नगर की स्थापना हुई। लगता है महाभारत काल में दाशराज्ञ युद्ध के समय का बदला यदु वंशियों ने लिया, दोनों को आपस में लड़ाकर। दोनों कौरव है। महाभारत युद्ध में आपस में लड़े हैं। नेतृत्व कृष्ण ने किया है।

होना यह चाहिये था, श्रीकृष्ण का साथ पाकर पांडवों ने अथवा पांडवों को हाथ में लेकर श्रीकृष्ण ने सामाजिक क्रांति का कार्यक्रम बना लिया होता तो भारत का नक्शा कुछ और दिखाई देता।

११०. श्वेतकेतु—देखिये मंथन भाग पृ० २८२-२८८।

१११-११२. भारत वर्ष में प्रथम प्रवेश करनेवाला दिवोदास है। आश्चर्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होता है कि अच्छे-अच्छे लेखक जो प्रसिद्ध है और जो ऊँचे-ऊँचे पदों पर युनिवर्सिटियों तक में रह चुके हैं, इतिहास पर लिखते समय स्पष्ट लिखते हैं— "आर्य लोग भारत में कहां से और कैसे आये इसका ऋग्वेद से कुछ पता नहीं चलता। ऋग्वेद में जिस देश का वर्णन है वह तो अफगानिस्थान से गंगा-यमुना तक का प्रदेश है। उसमें कुम्भा ( काबुल ) सुवास्तु (स्वात) क्रमु ( कुर्रम ) और गोमती ( गोमल ) नदियों के नाम मिलने से अनुमान होता है कि आर्य पहले अफगानिस्थान में बसे हुये थे। सिंधु पर ही उनकी अधिक बस्ती थी। पंजाब की पांचों नदियों और गंगा[1], यमुना का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। एक ऋचा में गंगा, यमुना, सरस्वती, शुतुद्रि (सतलज) विपास (व्यास) परुष्णी (रावी) असिक्नी (चिनाब) वितस्ता (झेलम) आदि नदियों की स्तुति की गई है।[2] इन नदियों से सींचा हुआ प्रदेश आर्य सभ्यता का जन्म स्थान था।[3] "यह उद्धरण हमने हमारे बुजुर्ग श्री गंगा प्रसाद मेहता

---

१. गंगा का नाम ऋग्वेद में आया वह तब आया जब भागीरथ का प्रयत्न पूरा हो गया। चन्द्रवंशी भारत में १५ वीं पीढ़ी में आये भागीरथ सूर्यवंश को पीढ़ी में हुआ। दोनों वंश साथ साथ चले अर्थात् चन्द्रवंशियों के ४२-४३ पीढ़ी पश्चात् गंगा का भारत में हिमालय से आगमन-अवतरण हुआ।

२. नदी सूक्त, इसी नदी सूक्त से स्पष्ट होता है कि आनेवाला विश्वामित्र है और वह कहता है मैं दूर देश से आया हूँ। फिर भी भारत में कौन आये कहाँ से आये। यह पहचानने में ऐसा विलंब क्यों? यह उद्धरण मैंने श्री गंगा प्रसाद मेहता ( बनारस हिन्दु विश्व विद्यालय सं० १९९० ) की को पुस्तक से दिया है। भारत में आने वालों का नाम ऋग्वेद स्पष्ट देता है। उनके आगमन की दिशा देता हैं। उनके पूर्व पुरुषों की वंशावली स्पष्ट हैं तब भी आर्यों का प्रश्न ज्यों का त्यों खड़ा रहना आश्कर्य नहीं तो और क्या कहायेगा? विशेष के लिए देखिये मंथन, प्रथम भाग तथा द्वितीय भाग द्वितीय खंड। भारत में आर्य आये लेकिन उनका नाम है ऐल, चन्द्रवंशो।

३. इसे आर्य सभ्यता के बदले ऐल सभ्यता का स्थान कहना उचित हैं। यह विषय अबतक विवादास्पद बना हुआ है। हमें विवाद में उतरना नहीं है। हमने अपने विचार मंथन प्रथम और द्वितीय भाग के द्वितीय खण्ड में प्रकट किये ही है। और भी लिखना पड़ेगा। यह निश्चित है अतः 'इतिहास की कसौटी पर' नामक पुस्तक में "समारोप के रूप से" हम ख्याति प्राप्त विद्वानों के मत देकर उसमें स्वतंत्र रूप से यथा समय कहेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
के ग्रंथ से लिया है। लेखक ने और भी आगे बहुत कुछ लिखा है लेकिन उससे किसी प्रकाश की आशा नहीं। लगता है कि उस कालतक जागरण आया ही नहीं था ? प्रायः सभी की एक सी कलम चली है। किसी के तर्क का विकास नहीं दिखाई देता। कोई तर्कज्ञ नजर नहीं आता। यह पुस्तक सं० १९९० में छपी है। मतलब ४५-५० वर्ष हो गये हैं। आज यों तों जागरण की लहर आई है भारत में, लेकिन वह वस्तु स्थिति को पकड़ नही पाई। आज भारत को स्वतंत्र हुये चौथा दशक चल रहा है वह भी निरर्थक जा रहा है। इतिहास के विषय में कोई नवीनता नही दिखाई देती। अस्तु।

**११३. कर्ण पांडु का कानीन पुत्र**—कानीन के विषय में हम मंथन प्रथम भाग पृ० २३६-२३८ में बहुत कुछ कह गये हैं। यहाँ इतना ही कहना है—यदि श्री कृष्ण हृदय से कर्ण को पांडवों का भाई बनाने आये थे तो उन्होंने कर्ण से यह क्यों नहीं कहा कि मैं तुम्हारा हक तुम्हें दिलाऊँगा। दिलाकर रहूँगा। यदि निश्चय ही वे कर्ण के पक्ष में न्याय देने की इच्छा से कर्ण मिलन करने आये थे तो वैसा एक छोटा सा कार्यक्रम हाथ में लेते, उसे सक्रिय रूप देते। एक आंदोलन छेड़ते। जैसे व्यास सम्मान पा रहे। व्यास द्वारा विचित्रवीर्य की स्त्रियों में अपने वीर्य द्वारा उत्पन्न किये पांडु, धृतराष्ट्र सम्मान पा रहे, जो विचित्र वीर्य के नहीं व्यास के आत्मज है, विचित्रवीर्य के तो क्षेत्रज है। क्यों नहीं कहा कर्ण से कि तुम्हे भी मैं मान का स्थान दिलवाऊँगा, वैसा आंदोलन चलाऊँगा। चन्द्रवंशी शासन व्यवस्था निश्चय सुधार चाहती है। मैं वैसा कार्यक्रम हाथ में लूँगा। क्यों कृष्ण ने कर्ण से इस विषय में कोई चर्चा नहीं की ? केवल तू ज्ञानी है, ब्राह्मण भक्त हैं। धर्म का सूक्ष्म रूप जानता है इतना कहना ही पर्याप्त नहीं था। जब कानीन के नाते कर्ण को वह अधिकार है। धर्म ने इतनी छूट दी है तो श्रीकृष्ण निर्भय बनकर यह वृत्त पांडवों को कह देते। कर्ण जन्म का रहस्य पांडवों के सम्मुख प्रकट करते। कर्ण पांडवों में मेल कराते। कर्ण को अपना हक दिला कर रहते। कर्ण दुर्योधन का पक्ष छोड़ता या नहीं यह प्रश्न अलग है कुछ तो प्रतिक्रिया सामने आती ही। कुछ तो वातावरण बदल जाता ही। इस प्रश्न को कुछ वाचा तो आती ही। लेकिन यह कार्य करना था कृष्ण को। यह नेतृत्व करना कृष्ण का कार्य था।

**११४.** कर्ण अपनी जगह अपने ध्येय के लिये सदा दृढ रहा है। कर्ण जीवन की यह विशेषता अन्य पात्रों में नहीं पाई जाती।

**११५-११६.** हमारा प्राचीन साहित्य साक्षी देता है कि हमने केवल कर्म को प्रधानता दी है। जाति में जन्म लेकर श्रेष्ठता मानने की प्रथा समाज में बहुत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
बाद में आई हैं। इसका उत्तर मध्ययुगीन साहित्य में पाठक स्वयं खोज लें यही विनंति।

कर्ण अपने जीवन में कहीं कोई हीनता नहीं दिखाता। कहा जाता है कि कर्ण के इशारे पर दुर्योधन नाचता था। भीष्म भी इस बात को लेकर उसपर अनेक बार प्रहार करते हैं। भीष्म के प्रहारों की तीक्ष्ण कटुता देखकर हैरान हो जाना पड़ता है। जुये के प्रसंग पर कर्ण के मुख में द्रौपदी के लिये जो वाक्य दिये हैं वे भी विचार करने योग्य हैं। उसमें भी हमें क्षेपककर्ता का हाथ लगता है।

कर्ण अपने में अपने ध्येय के लिये मानो व्रतनिष्ठ है। अटल है। दुर्योधन अपने मामा शकुनि के इशारे पर नाचता है। कर्ण के नहीं। कर्ण तो केवल प्रसंग-वश वचन दे चुका, वह भी उसे केवल पार्थ से युद्ध करने का मौका चाहिये, वह दुर्योधन मुझे दिला दे, इस आशय से यह दोस्ती निभाये हुये है। शेष वह दुर्योधन के किसी भी कार्य में आप होकर हस्तक्षेप नहीं करता। कर्ण को बदनाम करने में म० भा० का संस्करण, जो सौती का कहा जाता है वही कारण है। उसमें व्यास के जय संहिता के कर्ण के दर्शन नहीं होते, तो भीष्म के भी दर्शन इस संस्करण में दुर्लभ हैं।

११७. देखिये मन्थन प्रथम भाग पृ० २२८-२२९। दुर्योधन की दोस्ती निभाने में कर्ण ने क्या कहा था। कर्ण के वचन विचारणीय है।

११८. बहुत कुछ सोचने के पश्चात् इस निर्णय पर आना पड़ता है कि यह बात श्रीकृष्ण ही नहीं चाहते थे। उन्हें कर्ण को मरवाना ही था। क्यों इसके लिये बहुत कुछ कहा जा सकता है लेकिन अब हमारी कलम कुछ संयम चाहती है। हमें पृष्ठों का ध्यान करना है। फर्मा पूरा हो यही संकल्प है अतः पाठक क्षमा करें। कभी किसी लेख में इसका उल्लेख करेंगे।

११९. आत्रेयों के—चन्द्रवंशियों के। यह वंश मूल अत्रि से चलता है, इस विचार से मन्थन के पाठक पूर्णरूप से परिचित हो गये हैं।

१२०. पांडवों में जो प्राण आया वह उनके जीवन में कृष्ण प्रवेश बाद ही, इस सत्य से कैसे कोई इन्कार करेगा ?

१२१. इस हमारे तर्क पर विवेकी विद्वान विचार करें।

१२२. म० भा० का युद्ध ऐलों के भारत आने के १५००। १६०० वर्ष पश्चात् हुआ है।

१२३. देखिये मंथन प्रथम भाग पृ० २३०-२३३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# ५

१२४. भीष्म और द्रोण दोनों पात्र शोध मांगते हैं। लगता है क्षेपक-कर्ताओं ने इन्हें बहुत बिगाड़ दिया है। यदि कर्ण के जन्म का रहस्य खुल जाता और अर्जुन के समान कर्ण भी युद्ध से हट जाता या और कोई अन्य मार्ग लेता भीष्म और द्रोणाचार्य के पात्र कुछ और ही दिखाई पड़ते। वर्तमान महाभारत के संस्करण के आधारपर तो भीष्म और द्रोण दोनों के मन में युद्ध ही करना था। द्रोण का युद्ध करना तो स्पष्ट ही था। पांचालों से बदला लेना था किन्तु भीष्म ?

१२५. महाभारत युद्ध समय भीष्म की आयु १५९ वर्ष की थी। देखिये हमारा लेख, महारथियों का आयु विवेचन भीष्म, सरस्वती मासिक १९७३।

१२६. द्रोण पांचालों के विरोधी थे यह स्पष्ट है। महाभारत युद्ध में द्रोणाचार्य द्वारा पांचाल ही अधिक मारे गये हैं।

१२७. द्रोण वेतन भोगी थे।

१२८-१२९. पांडु के हिमालय जाने पर दीर्घ कालतक यानी द्रौपदी के स्वयंवर तक अर्थात् लगभग ४० साल तक हस्तिनापुर का सिंहासन राजा बिनाका था। देखिये हमारा लेख महारथियों का आयु विवेचन, भीष्म।

ध्यान रहे युवराज अन्त में युधिष्ठिर को बनाना पड़ा। क्यों कि पांडु राज्य देकर हिमालय पर स्वास्थ सुधार हेतु नहीं गया था। बल्कि भीष्म को संभलाकर गया था। राज्य के अधिकार पांडु के लिये सुरक्षित थे। राजा पांडु ही था।

१३०. युधिष्ठिर के युवराज बनते ही इधर लाक्षागृह की योजना बनी। पांडवों का नाश कराकर राज्य का मालिक दुर्योधन बने यह वह योजना थी।

१३१. महाभारत युद्ध के लिए उत्तरदाई भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य है। यह कृष्ण का निर्णय है। इसका उल्लेख महाभारत के आधार पर ही हमने मंथन में किया है ( भाग २ खण्ड २ )।

१३२. जब पांडु की मृत्यु हुई, ऋषियों को साथ लेकर कुन्ती पांडवों के साथ हस्तिनापुर आई, तब ऋषियों ने पांडवों का भार भीष्म पर डाला था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

१३३. मानव धन का दास है, मैं दुर्योधन का अन्न खा रहा हूँ। यह शब्द भीष्म के हैं जो द्रौपदी से भरी सभा में कहे गये हैं।[1]

१३४. पांडवों ने इन्द्रप्रस्थ में तेईस वर्ष राज्य किया। इस अवधि में भीष्म राजसूय यज्ञ को छोड़कर कभी पांडवों के यहाँ आये नहीं। यह आश्चर्य लगता है।

१३५. ऐल शासन में कुमारी कन्याओं के गर्भ रहते होंगे तभी तो यह नियम बना होगा ?

१३६. भारतीय संस्कृति में नारी सदा के लिए नारी नहीं कहलाती। यों तो नारी शब्द नर के साथ लगता है। स्त्री पुरुष के साथ, पत्नी पति के साथ, गृहिणी गृहपति के साथ। इस तरह विवाह पश्चात् नारी शब्द पत्नी का स्थान लेता है।

१३७. आगत गण यानी चन्द्रवंशी प्रजा। यह प्रजा जब भारत में आई तब इनके साथ इनकी स्त्रियां थीं ऐसा उल्लेख नहीं मिलता। बाद में अप्सरायें अवश्य आई हैं। और उन्हीं की संतान राज सिंहासन पर बैठी है। देखिये मन्थन प्रथम भाग।

१३८. कहते हैं आर्यों में चार वर्ण थे। तब निषाद पांचवा वर्ण कैसे आया चन्द्र वंशियों में ?

१३९. स्यात् इसीलिये ऋषियों का कुल और नदियों का मूल न देखो यह शास्त्राज्ञा है। लेकिन यह आज्ञा भी चन्द्रवंशी शासित राज्य व्यवस्था के पुरोहितों की है।

१४०. यह इतिहास चन्द्रवंशी शासित संस्था के भारतीय चन्द्रवंशियों का है यह कहना आवश्यक हो जाता है।

१४१. दाशराज्ञ युद्ध की समाप्ति पर चन्द्रवंश का भारत प्रवेश सुलभ हो गया और उनके जनपद धीरे-धीरे स्थापन होने लगे। देखिये, मंथन प्रथम भाग।

१४२. चन्द्र वंशियों की भारत विजय देवजाति के कारण हुई है। अतः उन्हें बढ़ाना उनका परम कर्तव्य बन जाता है।

१४३. हमने कुन्ती को भारत की कन्या माना है जबकि वह यदुवंश की है। और यदुवंश मूल भारत का निवासी नहीं है। फिर भी जैसा कि हम

---

१. क्या यह शब्द भीष्म कह सकते हैं ? विचारणीय है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ऊपर कह गये हैं कि आगन्तुकों के साथ स्त्रियाँ नहीं थीं। अप्सरायें अवश्य बाद में आईं। लेकिन यदुवंश का किसी अप्सरा से सम्बन्ध आया ऐसा कहीं दिखाई नहीं देता। कुन्ती को इसीलिये हमने भारतीय रक्त की (मातृ कुल की ओर से) मानी है।

१४४. चन्द्रवंश को भारत आये महाभारत युद्ध तक लगभग ६० पीढ़ियाँ हो रही हैं। देखिये वंशावली परिशिष्ठ मन्थन भाग २ खंड २।

१४५. हमने भारत पर आर्यों का आक्रमण नहीं माना। और नहीं माना भारत में कोई आर्य (संस्कारी पुरुष) आये। बल्कि भारत में ऐल आये। और वह भी आक्रमक बनकर नहीं अपितु वसाहत की दृष्टि से आये यही हमने माना है। लेकिन दिवोदास को सीमा पर शंबर ने रोक लिया इस कारण उसका रूप बदल गया। हमारे इस विधान पर विवेकी विद्वान विचार करेंगे। देखिये विस्तार के लिये मन्थन भाग २ खंड २।

१४६. नियोग की प्रथा ने नारी की तपस्या पर, पवित्रता पर कुठाराघात किया। नियोग के लिये देखिये मन्थन प्रथम भाग।

१४७. यह वेन अत्रिवंशी था। नियोग की प्रथा इसी के समय से चली है।

१४८. कृपया पाठक वेद का विवाह का सूक्त देखें।

१४९. कर्ण के लिये कुन्ती ने जो गर्भधारण किया वह दिन का समय है।

१५०. आर्यों के षोडश संस्कारों में एक संस्कार गर्भधान का भी है। मतलब आर्यों ने गर्भधान को संस्कार माना था। चन्द्रवंश विलासी था। अतः जो संताने हुईं वह तो हेतु बिना की ही माननी चाहिये।

१५१. औरस अनौरस, वैध, अवैध, आत्मज, क्षेत्रज यह शब्द संतानों के लिये प्रयुक्त किये गये हैं। इनका अर्थ जानना आवश्यक है।

१५२. इसके लिये हम टि० नं० १५० में संकेत कर चुके हैं।

१५३. एक ही शब्दों में कहना चाहूँ तो केवल नारी इतना ही संकेत बहुत है।

१५४. श्रीकृष्ण ने कर्ण मृत्यु को सत्कर्म कहा है।

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# ६

१५५-१५६. कर्ण की नीति आदि के विषय में हम इसके पूर्व कह चुके हैं।

१५७. यह युधिष्ठिर कह रहा है।

१५८. भीष्म दसवें दिन युद्ध से विमुख हुये, उसको लक्ष करके।

१५९. कुंती नर प्रधान संस्था के कारण साहस न कर सकी और श्रीकृष्ण के मन में तो कर्ण को मरवाना था ही।

१६०. इसके लिये अहमदाबाद से निकलनेवाले गीता धर्म से महाभारत विषयक विशेषांक में 'महात्मा कर्ण' शीर्षक से एक लेख देकर श्रीकृष्ण के इन वचनों को बहुत सुन्दर ढंग से हमारे पूज्य विद्वान श्री मंगलजी उद्धवजी शास्त्री ने कहा है।

१६१. कर्ण की पत्नी। आश्चर्य है मुझे अभीतक कर्णके पत्नी का नाम नहीं मिला।

१६२. महाभारत के युद्ध में कर्ण के प्रायः पाँच बेटे मारे गये हैं उनके नाम इस प्रकार हैं। भानुसेन, सुषेण, प्रसेन, वृषसेन, चित्रसेन। छठ्ठा बेटा वृषकेतु जीवित है।

१६३. कृष्ण कुंती और कर्ण तीनों अपनी-अपनी जननी की गोद में पलकर बड़े नहीं हुये।

१६४. यह संबोधन उचित लगता है।

१६५. कर्ण प्राप्ति के बाद राधा के छह बेटे हुये थे। उनके नाम संग्रामजित आदि है। जो सबके सब महाभारत के युद्ध में मारे गये हैं। साधना भाव के कारण उनके नाम बता नहीं सका इसके लिये पाठकों से क्षमा चाहता हूँ।

१६६-१६७-१६८. इसका उल्लेख हो चुका है।

१६९. चंद्रवंशियों का भारत आगमन अभिशाप रूप ही सिद्ध हुआ।

१७०. इसका कारण चंद्रवंशी शासन संस्था-व्यवस्था है।

१७१ कर्ण का बेटा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## लेखक का अन्य सर्जन ( अप्रकाशित )

१. महाभारत : एक ऐतिहासिक चिंतन
२. आर्य ,,
३ दाशराज्ञ युद्ध ( ऋग्वेद ) ,,
४. ऋग्वेद : एक ऐतिहासिक चिंतन ( भाग १ से ) )
५. अथर्ववेद : ,, ,, ( भाग १ से )
६. देवता : वैदिक तथा पौराणिक, ऐतिहासिक में
७. ऋषि : ,, ,, ,,
८. राजा ,, ,, ,,
९. भूगोल ,, ,, ,,
१०. देवयुग का इतिहास
११. पुराण ग्रंथ : एक ऐतिहासिक चिंतन
१२. प्राचीन ऐतिहासिक जातियां
१३. रामायण : एक ऐतिहासिक चिंतन ( विचाराधीन )
१४. कालगणना और परिमाण ,,
१५. इतिहास की कसौटी पर
१६. ऋग्वेद पूर्व का इतिहास
१७. ऋग्वेद से महाभारत
१८. महाभारत से महावीर
१९. संशोधन के पथपर : लेखक के प्रकाशित ऐतिहासिक संशोधित लेखों का संग्रह सेट ३
२०. संशोधनना पंथे : संशोधन के पथ पर का गुजराती अनुवाद

प्रकाशक

**प्राच्य इतिहास मंदिर**

भावनगर ( गुजरात )